ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम

(रमेश 'कँवल' की समीक्षाओं और भूमिकाओं का सौन्दर्य सौष्ठव)

संकलन एवं प्रस्तुति

कुमार अभिषेक

श्वेतवर्णा प्रकाशन

नई दिल्ली

Published by Shwetwarna Prakashan in Hindi in Paperback as *Khushnuma Lafzon Ka Mausam* (First Edition) Edited by *Kumar Abhishek* in the year 2026.

Shwetwarna Prakashan
212 A, Express View Apartment
Super MIG, Sector 93, Noida-201304, INDIA
Mobile: +91 8447540078
Email: shwetwarna@gmail.com
Website: www.shwetwarna.com

Copyright © *Kumar Abhishek*

ISBN: 978-81-984070-*-*

Views and opinions expressed in this work are author's own and the facts are reported by the author and the publisher is in no way liable for the same.

All rights reserved.

Book Design by *Sharda Suman*

No part of this book may be reproduced, or stored in a retrieval system, or transmitted in any form or by any means electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without express written permission of the author.

मेरी भतीजी आश्वी व्याहुत के नाम

शीशे
का
इन्क़िलाब
देवेन्द्र माँझी

ग़ज़ल संग्रह
इत्र-दान
आनन्द पांडेय 'तन्हा'

डॉ. महेन्द्र अग्रवाल
की नई ग़ज़लें
डॉ. महेन्द्र अग्रवाल

बूँद
बूँद ग़ज़ल
डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ'

तज कर चुप्पी
हल्ला बोल
रवि खण्डेलवाल

बेलपत्र

आराधना प्रसाद
चाक पर घूमती रही मिट्टी

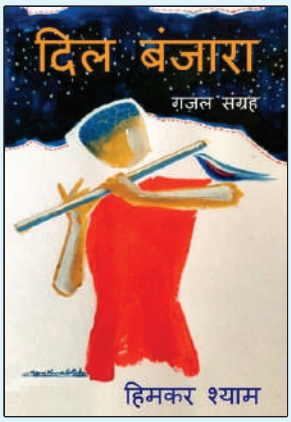
दिल बंजारा
ग़ज़ल संग्रह
हिमकर श्याम

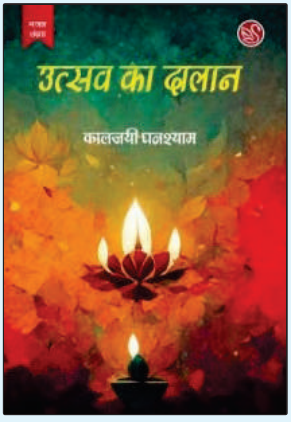
उत्सव का ढलान
कालजयी घनश्याम

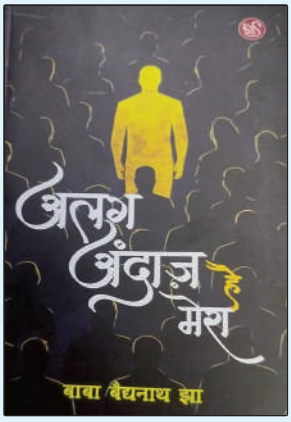
अलग अंदाज़ है मेरा
बाबा वैद्यनाथ झा

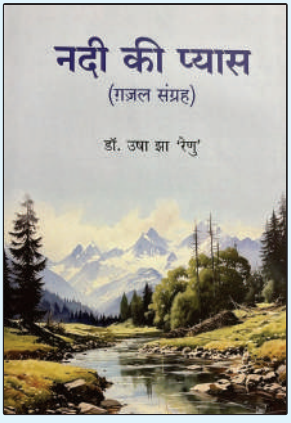
नदी की प्यास
(ग़ज़ल संग्रह)
डॉ. उषा झा 'रेणु'

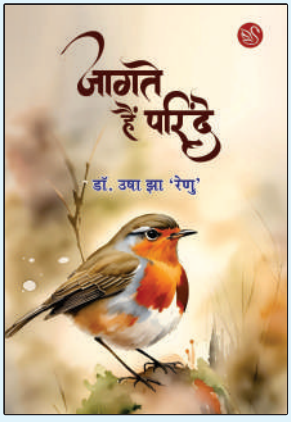
जागते हैं परिंदे
डॉ. उषा झा 'रेणु'

पैरहन दिल
सी रहा हूँ
शिवकुमार सुमन

चाक दामन
पूनम सिन्हा श्रेयसी

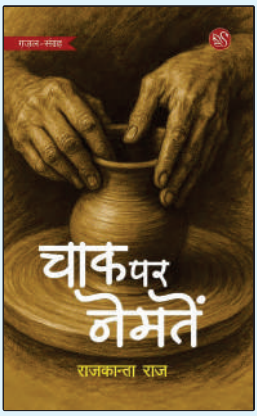
चाक पर
नेमतें
राजकान्ता राज

ग़ज़लों की दुनिया
में यादों की परियाँ
प्रो. डॉ. सुधा सिन्हा 'सावी'

साधना के स्वर
साधना भगत

हसरतों
का चाँद
दिलीप समदर्शी

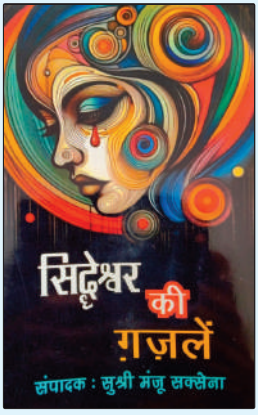
सिद्धेश्वर
की
ग़ज़लें
संपादक : सुश्री मंजू सक्सेना

ले चल अब उस पार कबीरा
डॉ. सीमा विजयवर्गीय

सागर सियाल कोटी

भूपेन्द्र सिंह 'होश'

कुमार अभिषेक

देवेन्द्र मांझी

आनंद पाण्डेय 'तन्हा'

डॉ. महेंद्र अग्रवाल

डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ'

रवि खंडेलवाल

डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह

आराधना प्रसाद

हिमकर श्याम

कालजयी घनश्याम

बाबा वैद्यनाथ झा

डॉ. उषा झा रेणु

शिव कुमार सुमन

डॉ. पूनम सिंह श्रेयसी

राजकान्ता राज

डॉ. सुधा सिन्हा

साधना भगत

दिलीप समदर्शी

मंजू सक्सेना

डॉ. कृष्ण कुमार 'बेदिल'

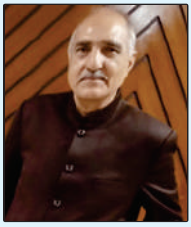

प्यासा अंजुम

डॉ. सीमा विजय वर्गीय

रमेश कँवल

दरवेश भारती

अनुक्रम

- ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम-संकलनकर्ता कुमार अभिषेक-*सागर सियालकोटी* 11
- ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम-कुमार अभिषेक द्वारा संकलित रमेश 'कँवल' जी की समीक्षात्मक उत्कृष्टता का दस्तावेज़-*भूपेन्द्र सिंह 'होश'* 14
- 'ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम'-भूमिकाओं और समीक्षाओं का संग्रह योग्य दस्तावेज़-*कुमार अभिषेक* 19

1. शीशे का इन्किलाब-देवेन्द्र मांझी
   नदी के घाट पे वो संविधान छोड़ गए-रमेश 'कँवल' 22
2. इत्रदान-आनंद पाण्डेय 'तन्हा' :
   इत्रदान से उमड़ती खुशबू का सफ़र 40
3. नई ग़ज़लें-डॉ. महेंद्र अग्रवाल
   रहे जो साथ में ग़ालिब के बेख़ुदी आई 57
4. 'बूंद बूंद ग़ज़ल-डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' 67
5. तज कर चुप्पी हल्ला बोल-रवि खंडेलवाल
   बंद हैं जो रोशनी के द्वार उनको खोलिए 83
6. डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह-पर्यावरण संरक्षण के लिए सतत
   प्रयासरत हरित मानव 97
7. चाक पर घूमती रही मिटटी-आराधना प्रसाद
   इस दिल से निकलने में अभी वक़्त लगेगा 103
8. दिल बंजारा-हिमकर श्याम
   हम मतवाले हैं साहब 114
9. उत्सव का दालान-कालजयी घनश्याम
   ग्रामीण सुगंध की शहरी ग़ज़लें 128
10. अलग अंदाज़ है मेरा को उजागर करती ग़ज़लें-रमेश 'कँवल' 136

11. नदी की प्यास-डॉ. उषा झा रेणु
चार दिन की चाँदनी है ज़िन्दगी 144
12. जागते हैं परिंदे-डॉ. उषा झा रेणु
ग़ज़ल की मधुरिम चहचाहट का बोलबाला 151
13. पैरहन दिल सी रहा हूँ-शिव कुमार सुमन
प्यार वाला गीत कोई गुनगुनाना चाहिए 159
14. "चाक दामन"-डॉ. पूनम सिंह श्रेयसी
शुहरत की ओढनी में सितारे टाँकने का प्रयास 167
15. ख़ुशियों की है आमद तुमसे 173
16. "ग़ज़लों की दुनिया में यादों की परियाँ" डॉ. सुधा सिन्हा-
एक ख़ुशनुमा एहसास 180
17. साधना के स्वर-साधना भगत
साधना के स्वर में साधना भगत की काव्य साधना 186
18. हसरतों का चाँद-दिलीप समदर्शी
साथ है वक़्त जिसके वो राजा तो है 195
19. सिद्धेश्वर की ग़ज़लें-सम्पादन मंजू सक्सेना
ग़ज़ल की आशनाई का जादू सर चढ़ कर बोलता है 199
20. ग़ज़ल-अरूज़ के आईने में-डॉ. कृष्ण कुमार 'बेदिल' 202
21. मांझी तुकांत कोष-देवेन्द्र मांझी 204
22. एक ही बह्र में प्यासा अंजुम की 444 ग़ज़लें: रमेश 'कँवल' 206
23. 'ले चल अब उस पार कबीरा'-डॉ. सीमा विजय वर्गीय 210
24. क़ौमी यकजहती में उर्दू ज़ुबानो-ग़ज़ल का रोल-रमेश कँवल 212
25. रमेश 'कँवल' का साहित्यिक साक्षात्कार 218
26. जीवन के रंग इंद्रधनुषी छटा के संग-डॉ. सुधा सिन्हा 221
27. गुड़ का ढेला-श्री चित्तरंजन भारती 225
28. बिहार में महिला ग़ज़लकारों की प्रतिनिधि ग़ज़लें-अविनाश भारती 229
29. दरवेश भारती भी नहीं रहे 231

ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम-संकलनकर्ता कुमार अभिषेक-सागर सियालकोटी

मैं अपनी बात की इब्तिदा इस शे'र से करता हूँ-

हो लाख समंदर सी गहराई किसी दिल की
एहसास का पैमाना इक दिन तो छलकता है

यही एहसासात का पैमाना छलकता हुआ 'ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम' में दिखाई दिया जिसमें कुमार अभिषेक की मेहनत और लगन दिखाई देती है। जब मैं इस संग्रह का अध्ययन कर रहा था तो मुझे अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति की प्रिय लेखिका टोनी मॉरिसन का वो जुमला याद आया जिसमें वो कहती हैं कि लेखन दो तरह का होता है-एक जीविका के लिए लिखना दूसरा जीवन के लिए लिखना। परंतु दोनों में अंतर होता है। जब हम जीविका के लिए लिखते हैं तो हमें समझौते करने पड़ते हैं पर जब हम जीवन के लिए लिखते हैं तो हमें कड़ी मेहनत करनी पड़ती है। ये संकलन 'ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम' यक़ीनन कुमार अभिषेक जी की कड़ी मेहनत का नतीजा है।

साहित्य सिर्फ़ समाज का दर्पण ही नहीं होता बल्कि यह उन अनकही आवाज़ों की प्रतिध्वनि भी है जो अक्सर शोर में कहीं खो जाती है। जब हम ग़ज़ल की बात करते हैं तो अक्सर ज़ेहन में इश्क़, तनहाई, रुसवाई और महबूब की गलियों का मंज़र उभरता है लेकिन जब हम दोहे की बात करते हैं तो विरह, मीरा का प्रेम और कबीर की सामाजिक चेतना उभर कर सामने आती है। वक़्त बदला जिसके साथ हर विधा ने अपना केंचुल (सर्प द्वारा छोड़ी गई खोली-केंचुल) बदली खास तौर पर ग़ज़ल ने। आज की ग़ज़ल महलों के देहरी लांघ कर गाँव की पगडंडियों, शहर की तंग गलियों और आम आदमी की चौखट, चूल्हे-चौके तक आ पहुँची।

'ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम' महज़ एक संकलन नहीं बल्कि यह हिन्दी और उर्दू ग़ज़ल के समकालीन परिदृश्य का एक प्रामाणिक दस्तावेज़ है जिसमें

रमेश कँवल जी की वे समीक्षाएँ और अर्थपूर्ण भूमिकाएँ हैं जिन्होंने अनेक कृतियों को पाठकों के बीच एक नई पहचान दी है। 'कँवल' जी की दृष्टि उस जौहरी की तरह है जो शब्दों के ढ़ेर में से संवेदनाओं के हीरे तराशने और तलाशने का हुनर जानता है।

रमेश 'कँवल' मुहब्बतों का शायर बिहार प्रशासनिक सेवा में संयुक्त सचिव स्तर के पद से सेवानिवृत हुए। राजधानी पटना के एडीएम लॉ एण्ड ऑर्डर पर लगभग 3 साल तक पदस्थापित रहे। मौजूदा हाल सफ़ीरे-शहरे-शे'रो-अदब। चेयरपर्सन बज़्मे-हफ़ीज़ बनारसी, पटना-मरकज़े-रंगे-हुनर। इंतिहाई अक़ीदत मंद अपने उस्ताद मरहूम हफ़ीज़ बनारसी के प्रति। आपके प्रकाशित ग़ज़ल संग्रह में लम्स का सूरज, और रंगे-हुनर (उर्दू लिपि में) शोहरत की धूप, स्पर्श की चाँदनी, इतराती बलखाती ग़ज़लें, अमृत महोत्सव की ग़ज़लें (सभी देवनागरी लिपि में) अक़ीदत के फूल इत्यादि शामिल है। अदब के प्रति अथाह मुहब्बत और लग्न उनकी धरोहर है। 'कँवल' जी की कोशिश रहती है कि आज के नस्ले-नौ को ग़ज़ल के प्रति जागरूक और उसकी बारीकियों से आशना कराया जाए। नई पीढ़ी 'इक्कीसवीं सदी के इक्कीसवें साल की बेहतरीन ग़ज़लें' का मुताला कर सकती है जिसमें चार सालिम बह्रों मुतदारिक, मुतक़ारिब, हज़ज और कामिल में मशहूर शायरों के मतला, शे'र और फ़िल्मी तरानों के साथ-साथ देश भर के मशहूरो-मारुफ़ शायरों की ग़ज़लें और इन बह्रों में उनके उस्ताद हफ़ीज़ बनारसी के मिसरा ए तरह पर कही गई अनेक ग़ज़लें शामिल हैं।

रमेश 'कँवल' ईश्वरीय व्यवस्थाओं में विश्वास करने वाली शख़्सियत हैं जो अपनी भारतीय संस्कृति में अथाह आस्था और विश्वास रखते हैं। उनके बारे में सिर्फ़ इतना कहना चाहूँगा-

जिनसे मिलकर ज़िंदगी से इश्क़ हो जाए वो लोग
आपने शायद न देखें हों मगर ऐसे भी हैं

रमेश 'कँवल' ने अलग-अलग रचनाकारों की कृतियों की पारखी नज़रों से समीक्षा की है जो यक़ीनन बेहतरीन हैं। मैं उन्हें दिली मुबारकबाद पेश करता हूँ।

'ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम' के संकलनकर्ता कुमार अभिषेक जी ने बड़ी बारीकी से उन रचनाकारों को एक सूत्र में पिरोया है जिनकी लेखनी में समाज का दर्द भी है और उम्मीद की किरण भी। यहाँ देवेन्द्र मांझी के 'शीशे का इनक़िलाब' का तड़प है तो आनन्द पांडे तन्हा के इत्रदान की भीनी-भीनी खुशबू भी है। जहाँ एक ओर सामाजिक विसंगतियों पर करारी चोट है वहीं मानवीय मूल्यों की सराहना भी दिखाई देती है।इस संकलन की विशेषता इसका वैविध्य है।इसमें शामिल 24 कृतियों की समीक्षा पाठकों को एक ऐसी साहित्यिक यात्रा पर ले जाती है जहाँ भाषा की सरलता और विचारों की गहराई का एक अनूठा संगम मिलता है। मेरा मानना है कि आलोचनात्मक दृष्टि से यह संकलन साहित्य-प्रेमियों के लिए अनमोल उपहार साबित होगा।

रमेश 'कँवल जी का यह सद प्रयास ग़ज़ल के आशिक़ों के लिए अत्यंत लाभकारी और अमूल्य है जिसके सफ़हों को पलटते हुए उन्हें समीक्षक और भूमिका लेखक की भावनाओं की नदी की इतराती बलखाती लहरों का आनन्द लेने का अवसर मिलेगा। उनके एहसास की तितलियाँ उन्हे बिल सुबहा लुभाएँगी।

रमेश 'कँवल' जी की लेखनी से जीवंत होती काविशों के लिए उन्हें और उन काविशों को सीढ़ी-दर-सीढ़ी मंज़िल तक पहुँचाने वाले संकलन कर्ता कुमार अभिषेक के परिश्रम को सलाम!

आपका खैरअंदेश

चैत्र कृष्ण द्वादशी
विक्रम संवत 2082
16 मार्च, 2026

सागर सियालकोटी
1077 फेज़ 1, अर्बन एस्टेट,
डुगरी रोड, लुधियाना-141013
मोबाईल 98768 65957
ई-मेल sagarsialkoti@gmail.com

ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम-कुमार अभिषेक द्वारा संकलित रमेश 'कँवल' जी की समीक्षात्मक उत्कृष्टता का दस्तावेज़-भूपेन्द्र सिंह 'होश'

साहित्य का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है जिसमें गद्य तथा पद्य की अनेकानएक विधाएँ सम्मिलित हैं। विधा चाहे कोई भी हो, साहित्यकार होने के लिए संवेदनशीलता अनिवार्य है। संवेदनशीलता के बिना अनुभूति में सूक्ष्मता तथा व्यापकता, दोनों का ही होना संभव नहीं है। साहित्यकार सामान्यतः अपनी अनुभूति की प्रतिक्रिया को ही अपने कौशल के अनुसार अभिव्यक्त करता है। अनुभूति की सूक्ष्मता और उसका विश्लेषण तथा अभिव्यक्ति की व्यापकता और उसका कौशल… यही वह अवयव हैं जो रचना एवं रचनाकार की श्रेष्ठता का निर्धारण करते हैं। गीत, ग़ज़ल, दोहा आदि पद्यात्मक रचनाओं और आलेख, निबन्ध, कहानी आदि गद्यात्मक रचनाओं से लेकर प्रबन्ध काव्य तक सभी की उत्कृष्टता के यही आधारभूत अवयव हैं। उनका आँकलन भी इन्हीं तत्वों के आधार पर होता है।

जहाँ रचनाकार स्वयं की नैसर्गिक (या विकसित) क्षमताओं के आधार पर लेखन-कार्य करता है वहीं समीक्षक के लिए अपेक्षित है कि वह उन रचनाओं में अपनी नहीं, रचनाकार की सूक्ष्म दृष्टि एवं सामर्थ्य का अवलोकन करने में सक्षम हो। अर्थात् एक समीक्षक की दृष्टि में, तुलनात्मक रूप से, सूक्ष्मता तथा व्यापकता की कदाचित और अधिक आवश्यकता है जिससे कि वह रचना का सटीक विश्लेषण एवं आंकलन कर सके।

रमेश 'कँवल' जी पटना (बिहार) की उर्दू–हिंदी साहित्यिक परंपरा के प्रमुख व महत्वपूर्ण साहित्यकारों में गिने जाते हैं। वे केवल ग़ज़लकार ही नहीं, एक सजग साहित्य–चिंतक, भूमिका-लेखक (Preface Writer) और समीक्षात्मक / आलोचनात्मक दृष्टि से सम्पन्न रचनाकार भी हैं। पटना और बिहार की साहित्यिक परंपरा के संदर्भ में उनका योगदान महत्वपूर्ण है। उन्होंने

स्थानीय शायरों और साहित्यकारों की रचनाओं को राष्ट्रीय साहित्यिक धारा से जोड़कर देखने का प्रयास किया है।

हाल ही में मुझे 'ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों के मौसम' की पाण्डुलिपि के रूप में कुमार अभिषेक द्वारा संकलित एवं प्रस्तुत रमेश 'कँवल' जी की लिखी समीक्षाओं और भूमिकाओं से रूबरू होने का अवसर मिला। संयोग से उनमें मेरे मार्गदर्शक आ. दरवेश भारती जी के साथ ही मेरे अनेक आत्मीयजनों जैसे पूनम सिन्हा श्रेयसी जी, आराधना प्रसाद जी, देवेंद्र मांझी जी, डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' जी, राजकान्ता राज जी और डॉ. सीमा विजय वर्गीय जी की पुस्तकों से संबंधित आलेख भी शामिल हैं। उन्हें पढ़कर मैंने रमेश जी की उस सूक्ष्म दृष्टि को महसूस किया जो एक समीक्षक व भूमिका-लेखक के लिए आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है।

मेरे अनुसार उनके भूमिका-लेखन और आलोचनात्मक लेखन (समीक्षा) में परिलक्षित प्रमुख विशेषताएँ कुछ इस प्रकार से चित्रित की जा सकती हैं:

1. भूमिका लेखन (Foreword/Preface):

(क) रचनाकार का संदर्भ-निर्माण:

वे किसी पुस्तक की भूमिका लिखते समय केवल प्रशंसा नहीं करते, बल्कि रचनाकार की पृष्ठभूमि, उसकी साहित्यिक यात्रा, उसकी शैलीगत विशेषताएँ और उसके समय-संदर्भ को संतुलित ढंग से प्रस्तुत करते हैं।

(ख) ईमानदार मूल्यांकन:

उनकी भूमिका-लेखन में अंध-प्रशंसा के बिन्दु नहीं मिलते। गुणों के साथ सीमाओं की ओर भी संकेत होता है, परंतु भाषा संयत और सम्मानपूर्ण रहती है।

(ग) साहित्यिक परंपरा से जोड़ना:

वे नए शायरों या लेखकों को उर्दू शायरी की परंपरा से जोड़कर देखते हैं

जिससे पाठक को भी रचना का साहित्यिक स्थान समझने में सहायता मिलती है।

(घ) सरल और प्रभावी भाषा:

उनकी भूमिका विस्तृत होते हुए भी बोझिल नहीं होती। भाषा स्पष्ट, संतुलित और विचारपूर्ण होती है।

2. समीक्षात्मक लेखन (Literary Evaluation):

(क) परंपरा और आधुनिकता का संतुलन:

रमेश 'कँवल' जी शास्त्रीय उर्दू शायरी की परंपरा से गहराई से परिचित हैं। पर साथ ही, वे आधुनिक संवेदनाओं, सामाजिक बदलावों और समकालीन जीवन–संघर्षों को भी समझते हैं। उनकी आलोचनात्मक दृष्टि में परंपरा का सम्मान और आधुनिकता का विवेकपूर्ण स्वागत दोनों दिखाई देते हैं।

(ख) भाषा और शिल्प पर पकड़:

उनका समीक्षात्मक ज्ञान केवल भाव तक सीमित नहीं है, बल्कि वे भाषा तथा अरूज़, दोनों को यथोचित महत्व देते हैं। अरूज़ की बारीकियों, जैसे बह्र, क़ाफ़िया, रदीफ़, प्रतीक और बिंब–योजना जैसे तकनीकी पक्षों पर भी स्पष्ट और संतुलित विचार रखते हैं। वे शायरी की बारीकियों को समझकर उसकी गुणवत्ता का मूल्यांकन करते हैं।

(ग) सामाजिक चेतना:

उनकी समालोचना में साहित्य को समाज से जोड़कर देखने की प्रवृत्ति स्पष्ट है। वे मानते हैं कि शायरी केवल सौंदर्य–बोध नहीं है, बल्कि सामाजिक सरोकारों और मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति भी है। इसलिए वे रचना की सामाजिक प्रासंगिकता पर भी ध्यान देते हैं। क़दीमी और जदीद, दोनों ही प्रकार की शायरी के वह समर्थक और प्रशंसक हैं।

(घ) संतुलित और तर्कपूर्ण दृष्टिकोण:

उनकी समीक्षा न तो अत्यधिक प्रशंसात्मक होती है और न ही अनावश्यक कठोरता। वे तर्क, उदाहरण और साहित्यिक मानकों के आधार पर अपनी बात रखते हैं। यही कारण है कि उनकी समीक्षाएँ उद्देश्यपरक, रचनात्मक, सुधारात्मक और अर्थ पूर्ण होती हैं। और इसीलिए वे नई पीढ़ी के शायरों के मार्गदर्शक के रूप में भी जाने जाते हैं।

3. आलोचना की शैली का आधार:

संवेदनशील विश्लेषण, परंपरा और आधुनिकता का संतुलन, भाषा में गंभीरता परंतु सहजता।

4. साहित्यिक योगदान:

बौद्धिक आधार प्रदान कर आलोचना के माध्यम से साहित्यिक स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयास और कई उभरते रचनाकारों की पुस्तकों की भूमिका लिखकर उन्हें पहचान दिलाने का कार्य।

5. नई पीढ़ी का मार्गदर्शन:

रमेश 'कँवल' जी द्वारा सोद्देश्य की गई आलोचना युवा शायरों का मार्गदर्शन करती है।

इस प्रकार मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि कुमार अभिषेक द्वारा संकलित एवं प्रस्तुत रमेश 'कँवल' जी का यह भूमिका / समीक्षा संग्रह **"ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम"** पाठकों को समीक्षात्मक बारीकियों से परिचित कराते हुए उनकी इस क्षमता को परिमार्जित एवं विकसित करेगा।

मैं कुमार अभिषेक द्वारा संकलित एवं प्रस्तुत **"ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम"** में श्री रमेश 'कँवल' जी को इस संग्रह के रूप में फलीभूत हुए उनके सफल और सार्थक प्रयास के लिए हृदय से बधाई देता हूँ। साथ ही पुस्तक के संकलक तथा रचनाकार, दोनों की अभूतपूर्व सफलता की शुभकामनाएँ प्रेषित

करता हूँ। ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि रमेश 'कँवल' जी की साहित्यिक यात्रा ऐसे ही चलती रहे और उनकी यश-वृद्धि होती रहे।

बुधवार, चैत्र कृष्ण चतुर्दशी
विक्रम संवत 2082
18 मार्च, 2026

भूपेन्द्र सिंह 'होश'
लखनऊ [उ.प्र.]
मो. 7355716884.

'ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम'-भूमिकाओं और समीक्षाओं का संग्रह योग्य दस्तावेज़

रमेश 'कँवल' एक लब्ध प्रतिष्ठ शायर हैं। वे शायरी में उरुज के मानकों के साथ साथ शे'रियत और जदीद अंदाज़ में कहन के लिए विख्यात हैं लेकिन हम यहाँ उनके गद्य लेखन की प्रतिभा की बात कर रहे हैं। आलोचना में भी उनका नाम है। देवेन्द्र मांझी के ग़ज़ल संग्रह 'शीशे का इन्किलाब', आनंद पाण्डेय 'तन्हा' के ग़ज़ल संग्रह 'इत्रदान', डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' के ग़ज़ल संग्रह 'बूंद बूंद ग़ज़ल', रवि खंडेलवाल के ग़ज़ल संग्रह 'तज कर चुप्पी हल्ला बोल', आराधना प्रसाद के ग़ज़ल संग्रह 'चाक पर घूमती रही मिटटी', हिमकर श्याम के ग़ज़ल संग्रह 'दिल बंजारा' की बेहतरीन समीक्षा की है। उनकी खूबियों को उजागर किया है। बेहतरीन शे'र को पाठकों के लिए प्रस्तुत किया है।

इसके अलावा उन्होंने निम्न ग़ज़ल संग्रहों की भूमिकाएँ भी लिखी हैं-डॉ. महेंद्र अग्रवाल के 'नई ग़ज़लें', कालजयी घनश्याम के 'उत्सव का दालान', बाबा वैद्यनाथ झा के 'अलग अंदाज़ है मेरा, ' डॉ. उषा झा रेणु के 'नदी की प्यास' और 'जागते हैं परिंदे', शिव कुमार सुमन के 'पैरहन दिल सी रहा हूँ ' डॉ. पूनम सिन्हा श्रेयसी के 'चाक दामन', राज कान्ता राज के 'चाक पर नेमतें', दिलीप समदर्शी के 'हसरतों का चाँद' की सुंदर भूमिकाएँ भी लिखी हैं जिन्हें पढ़कर पाठक शायर / शायरा की मनोदशा तक पहुँच जाता है।

इतना ही नहीं डॉ. सुधा सिंहा की 'ग़ज़लों की दुनिया में यादों की परियाँ' साधना भगत की कविता संग्रह 'साधना के स्वर', मंजू सक्सेना के सम्पादन में प्रकाशित चित्रकार सिद्धेश्वर की ग़ज़लें, की भूमिकाएँ भी रमेश 'कँवल ने लिखी है।

पर्यावरण संरक्षण के लिए सतत प्रयासरत हरित मानव डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह के पुस्तक बेलपत्र, डॉ. कृष्ण कुमार 'बेदिल' के ' ग़ज़ल-अरूज़ के आईने

में' देवेन्द्र मांझी के मांझी तुकांत कोष, एक ही बह्र में प्यासा अंजुम की 444 ग़ज़लें, डॉ. सीमा विजय वर्गीय की 'ले चल अब उस पार कबीरा' पर भी **ख़ुशनुमा लफ़्ज़ों का मौसम** में आलेख सम्मिलित किए गए हैं।

डॉ. सुधा सिन्हा की किताब 'जीवन के रंग इंद्रधनुषी छटा के संग' श्री चित्तरंजन भारती के कथा संग्रह 'गुड़ का ढेला' और अविनाश भारती के सम्पादन में प्रकाशित 'बिहार की महिला ग़जलकारों की प्रतिनिधि ग़ज़लें' की चर्चा भी इस पुस्तक में संकलित है।

दरवेश भारती की यादें के साथ-साथ रमेश 'कँवल' का साहित्यिक साक्षात्कार और उनका आलेख क़ौमी यकजहती में उर्दू ज़ुबानो-ग़ज़ल का रोल भी इस पुस्तक की शोभा में चार चाँद लगा रहा है

आशा है सुधी पाठक रमेश 'कँवल' की समीक्षाओं और भूमिकाओं का सौन्दर्य सौष्ठव का आनन्द ले सकेंगे।

गुरुवार, चैत्र शुक्ल प्रतिपदा
संवत 2083
19 मार्च, 2026

कुमार अभिषेक
A 1601, कुमार प्रोस्पेरा,
मगरपट्टा रोड, हडपसर
पुणे-411028 महाराष्ट्र
मोबाईल 70456 58003

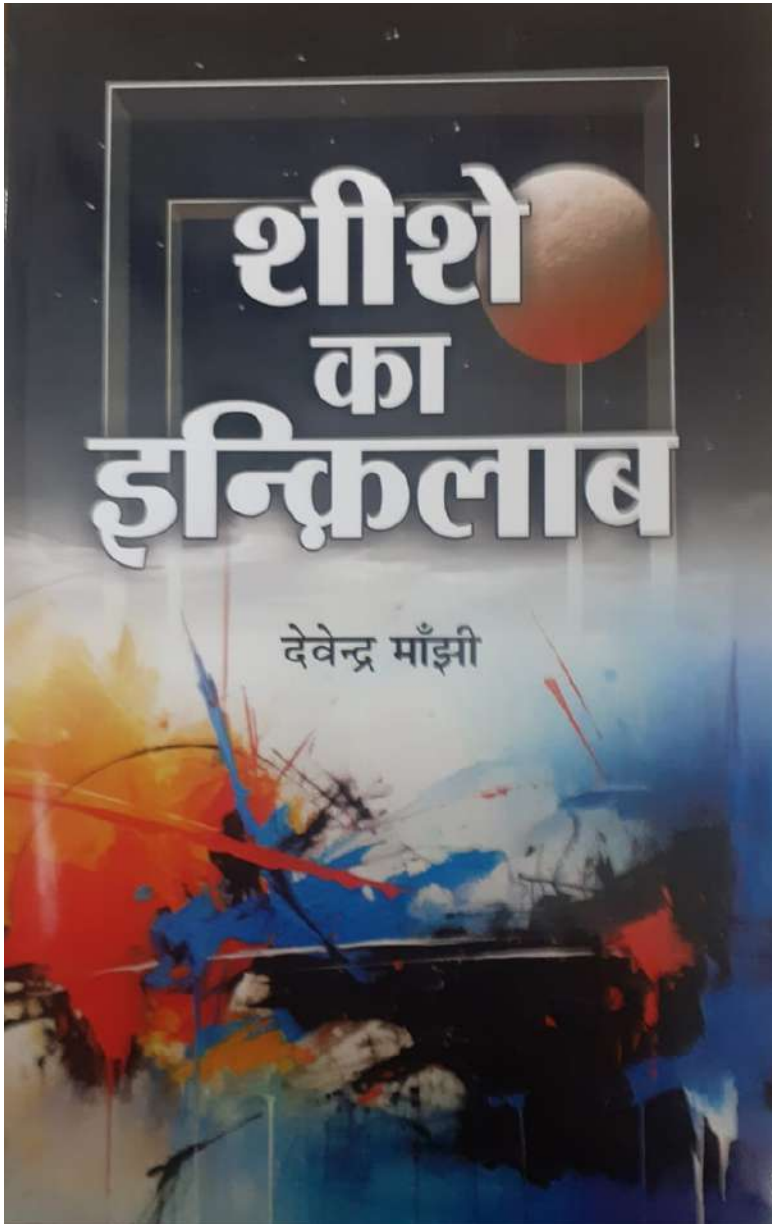
शीशे
का
इन्क़िलाब
देवेन्द्र माँझी

शीशे का इन्किलाब-देवेन्द्र मांझी
नदी के घाट पे वो संविधान छोड़ गए-रमेश 'कँवल'

ग़ज़ल शाइरी की सबसे मक़बूल सिन्फ़ है। अब हिन्दी में भी उर्दू ज़ुबान से बेहतर ग़ज़लें कही जाने लगी हैं। ग़ज़लों का दायरा प्रेम-मुहब्बत की सीमाओं से परे ज़िंदगी की मूलभूत ज़रूरतों, समस्याओं, सामाजिक विसंगतियों, मानवीय मूल्यों को धूल धूसरित करती वास्तविकताओं के हमराह चलने लगी है। बेरोज़गारी की धूप में जलते नौजवानों, सियासी रहबरों की वादाखिलाफी, राजनीतिज्ञों पर कटाक्ष, वरिष्ठ नागरिकों का एकाकी जीवन, बच्चों का अंतर्जाल में फँसकर सामाजिक मूल्यों की अवहेलना करना इत्यादि अनेक विषय ग़ज़ल के मौजूं बनने लगे हैं।

देवेन्द्र मांझी हिन्दी के ख्यातिलब्ध साहित्यकार, ग़ज़लकार हैं। उनके 2 दर्ज़न से अधिक किताबें प्रकाशित हो चुकी हैं।

शीशे का इनक़िलाब, देवेन्द्र 'मांझी' की ग़ज़लों का नवीनतम संग्रह है। ग़ज़ल संग्रह के शीर्षक से स्पष्ट है कि शाइर ग़रीब तबके के लोगों से भी इन्किलाब की उमीद करने लगे हैं। उपेक्षा के पत्थरों के ज़ुल्म से तंग आकर शीशे कब तक खामोशी की चादर ओढ़ कर रहते। लिहाजा उन्होंने इन्क़लाब अख़्तियार कर लिया।

उनके इन्क़लाब की कामयाबी देखिए-

कहने को वो वज़ीर था पैदल के सामने
शतरंज की बिसात पे आया तो मर गया

भाग रहे हैं लोग सभी
कैसी मारामारी है

भौतिकता अब चला रही
संबंधों पर आरी है

नाव फिर कौन रोकता मांझी'
हमने क़ाबू में जब नदी कर ली

शीशे का इनक़िलाब में आपको ज़िंदगी के विविध आयाम पर अशआर मिलेंगे। वहीं ग़रीबों पर अत्याचार, गाँव-घर के दृश्य, बेरोज़गारी, ख़्वाब, और आदमी के चरित्र पर भी ख़ूबसूरत अशआर आप का मन बहलाते हुए मिलेंगे। प्रेम का शे'र कहना तो हर शाइर की मज़बूरी है लिहाजा प्रेमिका के रूठने-मनाने, शिकवा-गिला, दोस्ती, अदावत, मुहब्बत, ग़ुरूर, यादें इत्यादि पर भी एक से बढ़कर एक शे'र मिलेंगे।

श्री देवेन्द्र मांझी'ने जहाँ राजनीतिज्ञों पर कटाक्ष किया है वही ग़ज़लकारों की भी जमकर क्लास ली है। उन्होंने अपना पैगाम /संदेश भी दिया है। शीशे का इन्क़लाब की ग़ज़लों के रूबरू होकर हम देखेंगे कि उन्होंने अपने तख़ल्लुस का कितना फ़ायदा उठाया है।

शायर दहशत के माहौल से परेशान है। उसे पता नहीं ये आतंक किस श्रोत से आया है। हमारी राम कृष्ण की अहिंसा को धर्म मानने वाली शांति प्रिय वसुंधरा पर यह माहौल कैसे पैदा हो गया। कैसे अत्याचारी लोग शरीफ़ लोगों को बहला फुसलाकर विनाशकारी परिणाम तक पहुँचा देते है। शे'र देखिए:

आतंक का साया

सोच-सोच कर पागल हूँ मैं, मन भी यूं घबराया है
राम कृष्ण की धरती पर आतंक कहाँ से आया है

रोऊँ या मैं हँसू भाग्य पर समझ नहीं आता है ये
मेरा क़ातिल मुझे सजाकर बधशाला में लाया है

दीवाना है या पागल है 'मांझी' को समझाओ तुम
आग के दरिया में काग़ज़ की कश्ती लेकर आया है

ज़िंदगी

शायर को ज़िंदगी बड़ी प्यारी है। शीशे के इन्क़लाब में ज़िंदगी पर कुछ लाजवाब शे'र मिलते हैं। साँसों की बदौलत ही तो ज़िंदगी है। बिना साँसों के शरीर का कोई मोल नहीं। ज़िंदगी रोज़ एक मदारी की तरह नए नए करतब दिखाती है;आदमी उदास हो जाता है। फिर भी मौत के बाहुपाश में ले जाने वाली ज़िंदगी को अपार प्यार करता है। आइए चंद अशआर का लुत्फ उठायें:

साँस है जिसके सबब है ज़िंदगी
बाक़ी तो ये जिस्म सारा कुछ नहीं

साँसों के हर मुक़ाम से हारी है ज़िंदगी
हमने बहुत उदास गुज़ारी है ज़िंदगी

करतब नए नए हमें दिखला रही है रोज़
ऐसा लगे कि एक मदारी है ज़िंदगी

लेकर यही तो गोद में जाती है मौत की
फिर भी हर एक शख्स को प्यारी है ज़िंदगी

साहिल पे कैसे पहुँचेंगे 'मांझी' पता नहीं
कश्ती है टूटी जिस्म की, भारी है ज़िंदगी

जिसे मरने की सुध-बुध आ गई है
हक़ीक़त में उसे आया है जीना

ग़रीबों पर अत्याचार को भी श्री देवेन्द्र मांझी ने अपने शे'रों का मौज़ूं बनाया है लेकिन अंदाज बिल्कुल शाइराना है। अत्याचारियों को रोशनी और

ग़रीबों को तीरगी का उपमा देकर बड़े ही लाजवाब शे'र 'मांझी' जी ने कहे हैं। ग़रीबों को अपना पक्ष रखने की मोहलत दिए बग़ैर फैसले की तलवार घोंप दी जाती है। मुलाहिजा फरमाइए:

खुश हुई और नाची बहुत तीरगी
क़त्ल कर दी गई जब यहाँ रोशनी

कालिमा का गला दबाने को
रोशनी रोज़ ही मचलती है

तलवार पहले फ़ैसले की घोंप दी जनाब
मुझको तो मेरा पक्ष ही रखने नहीं दिया

तीरगी बाँसुरी बजाती थी
रोशनी झूम झूम जाती थी

सारी ठिठुरन समेट लेती वो
धूप दहलीज़ पे जो आती थी

इनको न तरस आए कभी हाल पे मेरे
ये लोग तो गिरते को गिराने के लिए हैं

पत्थर की कुछ रिवायतें अब तक हैं चल रहीं
शीशे का इन्किलाब जो आने नहीं दिया

गाँव-घर के दृश्य मांझीजी को बहुत भाते है। कुछ बानगी देखिए:

सुना है गाँव के ये लोग हैं सब
मुझे इनकी शराफ़त देखने दे

जब मुँडेरों पे दीप जलते थे
रोशनी दूर दूर जाती थी

घर की चाहत में छोटी सी चिड़ियाँ
तिनका तिनका उठा के लाती थी

बेरोज़गारी

जब न सरकार दे सकी हम को
हम ने बनिए की नौकरी कर ली

आदमी

आज आदमी का क़द उनके बच्चों के सामने इतना घट गया है कि वो बेबस नज़र आने लगा है, अंतर्जाल के दौर में बच्चे इतने बड़े हो गए हैं कि उनके सामने माँ-बाप का कुछ रुतबा ही नहीं रह गया है। वैसे भी अपने करतूतों के कारण आदमी दर्पण देखने से लजाने लगा है। उसके ईमान की दौलत कहीं गुम हो गई है जो वह पूजा घरों से भी जूता चुराने में पशेमान नहीं होता। इसलिए उसकी गुज़ारिश है कि उसे पूजा नहीं जाए वरना वह इंसान से देवता हो जाएगा। वैसे भी अच्छे आदमी के बहुत दुश्मन होते हैं: मुलाहिजा फरमाइए चंद अशआर:

अपने बच्चों के आगे ही क़द घट गया
कितना बेबस नज़र आ रहा आदमी

हो गए बच्चे बहुत हद से बड़े
उनके सम्मुख अपना रुतबा कुछ नहीं

कुछ बात तो ज़रूर है कुछ है अजीब-सा
दर्पण को अपने देख लजाता है आदमी

ईमान उसका कौन-से बस्ते में क़ैद है
पूजाघरों से जूते चुराता है आदमी

आदमी हूँ आदमी ही मुझको रहने दीजिए
मुझको गर पूजा गया तो देवता हो जाऊंगा

यही हैं तजुर्बे इस ज़िन्दगी के
बहुत दुश्मन है अच्छे आदमी के

राधिका को नचाकर ही लेती है दम
कितनी ज़िद्दी है कान्हा तेरी बाँसुरी

दूरी रखना दुनिया वालों हमसे कुछ
सन्यासी का हमने बाना पहना है

यादें शीर्षक पर 'मांझी' जी के चंद शे'र देखिए:

तुम्हारी याद यूं चिपकी है दिल से
लिपटती पेड़ से जैसे लताएँ

जमा देती विरह की सर्दी हमको
अगर यादों को हम ओढा न करते

डस रही है जो याद की नागिन
क्यों न आता यहाँ सपेरा है

ख़्वाब कौन नहीं देखता वो भी जब वो शायर हो शायर कहता है कि जब वो अपनी आँखें बंद करता है तो उसकी आँखें ख़्वाब से चुभने लगती हैं। फिर वो कहता है कि उसकी आँखों में उसकी प्रेयसी के सपने बस गए हैं इसलिए उन सपनों के चर्चे घर घर फैल गए हैं और वो इसलिए ही आँखें नहीं खोलता कि उनमें ख़्वाब के मंज़र रहने लगे हैं। लेकिन वो ये भी कहते हैं कि आँख खुलने

पर ये ख़्वाब आत्महत्या कर लेते हैं। और अंत में यह सलाह भी देते हैं कि अब सवेरा हो गया चलिए जीवन की गतिविधियाँ शुरू की जाएँ। कुछ बेहतरीन शे'र देखिए:

बंद करता हूँ इन्हें जब भी कभी
आँख में चुभते हैं नश्तर ख़्वाब के

तेरी ख़ुशबू इसमें आकर क्या बसी
हो रहे हैं चर्चे घर-घर ख़्वाब के

खोलता इनको नहीं मैं इसलिए
आँख में रहते हैं मंज़र ख़्वाब के

सच की धरती पे जब भी हम आए
तेरे ख़्वाबों ने ख़ुदकुशी कर ली

सवेरा हो चुका ख़्वाबों से निकलें
चलें अब बोझ जीवन का उठायें

शीशे का इन्क़लाब शीर्षक ग़ज़ल संग्रह में अजब इत्तिफ़ाक़ ये है कि इसमें प्रेम मूल स्वर के रूप में उभरता है। शायर को ख़ुशी है कि उसने ख़ुद को महबूबा की गलियों में बदनाम हो कर अच्छा ख़ासा काम कर लिया है। इश्क़ कर के वह मशहूर हो गया है। उसकी प्रेयसी ने उसके लिए पान-सुपारी, ध्वजा-नारियल समर्पित कर उसको अपने मन का देवता बना लिया है। वह प्रेयसी के नाम की सांस लेता है, उसके नाम पर ज़िंदगी जीता है। वह पूछता है कि क्या उसे यह लिखकर देने की ज़रूरत है कि प्रिय के बिना उसकी ज़िंदगी अधूरी है। प्रिय पर निर्भर है कि उसकी ज़िंदगी कैसी रहेगी। आपको भूल कैसे सकता हूँ-आप ही आप मेरे ख़यालों में हैं। ये मेरा दिल पागल है जो आप पर क़ुर्बान हुआ है। मेरा चैन तो उसने ही लूटा है जिसकी सूरत भली-भली सी है। और भी उनके हुस्न की तारीफ़ में शायर बहुत कुछ कहता है:

चंद प्रेम के शे'र मुलाहिजा हों:

इश्क़ की गलियों में रुसवा कर लिया है
काम मैंने अच्छा ख़ासा कर लिया है

तुझसे किया जो इश्क़ तो सब जान गए हैं
वरना तेरे इस शहर में मशहूर न होते

पान-सुपारी, ध्वजा-नारियल ले आए
तुझको मन का देव बनाकर रखा है

ज़िंदगी जीता हूँ तेरे नाम पर
सांस भी लेता हूँ तेरे नाम की

ये भी मैं लिख के आप को दूँ क्या
आप बिन ज़िंदगी अधूरी है

हमारी ज़िंदगी कैसी रहेगी
ये सब-कुछ तो तुम्हारे प्यार पर है

ये भी क्या आपका इशारा है
हर तरफ़ एक सा नज़ारा है

आपको भूल कैसे सकता हूँ
आप ही आप हैं ख़यालों में

पागल है ये दिल मेरा भी
जो तुझ पर क़ुर्बान हुआ है

चैन लूटा है मेरा उसने ही
वो जो सूरत भली-भली-सी है

जो आफ़ताब भी पानी भरे तेरे आगे
हमें बता तू ज़रा अपने नूर का चक्कर

मेरी उलफ़त के क़िस्से पुराने हुए
जब करन्सी नई आपने छाप ली

किसी के प्यार में झुलसा है आशिक़
इसे बर्फीले कंबल में सुलाएँ

प्रेमिका का रूठना-मनाना तो लगा ही रहता है। श्री देवेन्द्र मांझी'के यहाँ इस मौजूं के अफरात अशआर मिलते हैं

अपनी ज़िद पर अड़े हुए हैं वो
इल्तिजा उनसे आख़िरी कर ली

किसी ने मुँह बनाया है ये कह कर
तुम्हारा दिल नहीं कुछ काम का है

अगर मैं रूठ भी जाऊँ तो सच है
नहीं आएगा कोई भी मनाने

न रुसवाई का इतना डर करो जी
हमें अब प्यार तुम खुल कर करो जी

मकां तो है मेरे भी पास लेकिन
इसे तुम साथ आकर घर करो जी

आपका ही नाम लेकर छेड़ते हैं लोग सब
अपने दीवानों में कर लें आप भी शामिल मुझे

देखा हर एक शख्स को तेरे जहान में
मतलब परस्त लोग थे कोई सगा न था

तूने नज़र जो फेर ली जीकर मैं करता क्या
तेरे सिवा तो कोई भी मेरा ख़ुदा न था

कान्हा ने कोई बात न राधा की कभी टाली
तुम भी तो करो प्यार की कुछ बात निराली

ज़माना ये सारा ही दुश्मन बनेगा
हमें एक दूजे से जब प्यार होगा

मैं आ जाऊँगा काम करके भी अपना
तू जब तक भी सँवरेगा, तैयार होगा

अभी तो वक़्त की उलझी लटों को सुलझा लूँ
करूंगा बाद में हुस्नो-जमाल की बातें

शे'रो-शायरी के बारे में श्री देवेन्द्र 'मांझी' जी की कुछ शिकायतें हैं। उनका कहना है कि इधर उधर से शब्द बटोरने वाले शायर हो जाते हैं। यही लोग पत्रिकाओं में छप भी जाते हैं। जो चाटुकार हैं उन्हें ही सम्मान भी मिल जाता है। उनका मानना है कि चरण चुंबन से ही शुहरत मिलती है। अच्छी शायरी (इल्म) से कुछ नहीं होता। इसलिए अपनी शायरी, दीवान समेट कर वहाँ चलो जहाँ पैसा मिलने की उमीद हो। लफ़्ज़ों की अय्याशी, क़ाफ़िया और रदीफ़ पर कुछ नायाब शे'र मुलाहिजा फरमाइए:

शब्द बटोरे इधर-उधर से
शाइर का दीवान हुआ है

हैं अदब की तमीज़ से खारिज
छप रहे हैं वही रिसालों में

हमने क़सीदे आपके गाये नहीं कभी
सम्मान इसलिए ही तो पाये नहीं कभी

समेटो शायरी के सारे काग़ज़
बताओ किस जगह पैसा मिलेगा

चरण-चुंबन से ही मिलती है शुहरत
न समझो इल्म से मौक़ा मिलेगा

तब मुकम्मल न मांझी' ये होती ग़ज़ल
नाव मेरे ख़यालों की जो डूबती

शायरी क्या है यहाँ लफ़्ज़ की अय्याशी है
बाद मरने के मेरे ये भी हुनर जाएगा

शब्दों के जोड़ तोड़ का भी फ़ायदा न था
कहता मैं शे'र कैसे कोई क़ाफ़िया न था

बात मेरी मान कर गर आप बन जाएँ रदीफ़
मैं मुहब्बत की ग़ज़ल का क़ाफ़िया बन जाउँगा

मांझी जी ने समाज और नौजवानों के लिए कुछ सुंदर संदेश भी दिए है।उनका मानना है कि भले ही संसार बहुत ख़ूबसूरत हो लेकिन अपना घर

अपना ही होता है। उनका संदेश है कि यदि आपकी ज़ुबान मीठी हो जाए तो आप किसी भी इलाके को अपना बना सकते हैं। उनका मशवरा है कि जिसने तुम्हें बर्बाद कर दिया है तुम उसकी भोली सूरत को भूल जाओ। सोच की मकड़ियों के जाले में जीवन की नाव फँसाने का कोई मतलब नहीं है। उनका पैग़ाम है कि कुछ भी बिना कुछ किए मयस्सर नहीं होता है। हमें जो कुछ भी मिलता है वो हमारे कर्मों की देन ही होता है। समंदर के किनारे मोती नहीं मिलते इसके लिए लहरों के बीच अंदर नीचे उतरना पड़ता है। वे इश्क़ में जान नहीं देने की सलाह देते हैं। अनेक मशविरे से रूबरू कराते कुछ शे'र पर नज़र डालिए:

संदेश

ये इलाक़ा आपका हो जाएगा
घोलिए शब्दों में थोड़ी चाशनी

यूं तो दिलकश बहुत सारा संसार है
सबसे बेहतर मगर अपना घर बार है

तुझे बर्बाद जिसने कर दिया है
मेरे दिल अब तू उसकी भूल सूरत

दोस्तो! सिर्फ़ अनमोल मेरे लिए
आपका प्यार है, आपका प्यार है

नाव जीवन की फंस गई 'मांझी'
सोच की मकड़ियों के जाले में

की मशक़्क़त खूब ही पतवार ने
नाव ने ही हार 'मांझी' मान ली

नई दुनिया में उल्फ़त के मकां तक
बदन से हो के जाता रास्ता है

जो कुछ हमारे पास है कर्मों की देन है
दुनिया ने कुछ भी बैठे-बिठाए नहीं दिया

'मांझी' उतरना पड़ता है गहरे डुबाव में
सागर ने कोई मोती किनारे नहीं दिया

सुन ले दुनिया जहान क्यों दूँ मैं
इश्क़ में अपनी जान क्यों दूँ मैं

अब यहाँ हैं तो कल कहीं होंगे
हम फ़क़ीरों का कोई डेरा है

मैं भटकता ही रहा अक्सर नए की खोज में
जब नई सूरत मिली तो मैं पुराना हो गया

साहिल पर ही नाव लुटेगी
'मांझी' को ये ज्ञान हुआ है

यहाँ सन्यास लेकर रह रहे हो
कहाँ वो सोच संसारी गई है

हक़ का उपवन उजड़ता है जिससे
ऐसा झूठा बयान क्यों दूँ मैं

आदमीयत के जो रहे बैरी
उनको तीरों-कमान क्यों दूँ मैं

हक़ीक़त जानने की छोड़ दे ज़िद
तू अपने आप से उलझा मिलेगा

इसी डर से नहीं मैं दिल लगाता
कहाँ अब प्यार वो पहला मिलेगा

एक शायर को, एक आदमी को क्या करना चाहिए उसका मकसद क्या होना चाहिए। देखिए 2 शे'र:

दुनिया को नई राह दिखाने के लिए हैं
हम शम्अ मुहब्बत की जलाने के लिए हैं

मक़सद न कोई और है इस घाट पे इनका
'मांझी' तो तुम्हें पार लगाने के लिए है

एक बंजारे की मानिंद सभी रहते हैं
कोई मिलता ही नहीं ठौर-ठिकाने वाला

राहबरों, राजनीतिज्ञों पर कटाक्ष करते हुए कुछ शे'र मुलाहिजा हो-

ज़बान वाले कभी दे सके जवाब नहीं
सवाल इतने यहाँ बेज़बान छोड़ गए

जिन्हें चलानी थी कश्ती विधान की 'मांझी'
नदी के घाट पे वो संविधान छोड़ गए

टांग खींची है रात ने उसकी
आज ग़मगीन कुछ सवेरा है

जिस्म को क़ैद कीजिए बेशक
सोच रुकती नहीं है तालों में

नौजवान इन्क़लाब लाते हैं
शाम को खास कुछ पियालों में

दोस्ती, अदावत, मुहब्बत, ग़ुरूर, शिकवा-गिला ये सभी शायरी के दीगर मौजूं हैं जिन पर श्री देवेन्द्र मांझी ने बेहतरीन अशआर कहे हैं। मुलाहिजा हो:

अदावत के मिटेंगे दाग़ सारे
दरीचे खुल गए है दोस्ती के

मुहब्बत की इबारत लिख रहे हैं
हमीं क़ातिब हैं सच्चे इस सदी के

कटे-कटे से ही रहते हैं सच की दुनिया से
जो करते रहते हैं हरदम ग़ुरूर की बातें

गवाही पर कुछ बेहतरीन अशआर मुलाहिजा फरमाइए:

झूठ की मैं दूँ गवाही इस से बेहतर
अपने होंठों पर ही ताला कर लिया है

मुंसिफ़ों की अक़्ल पर ताले पड़ें
दीजिए ऐसी गवाही आप भी

आ गए देने हवा जो आग को
चाहते हैं क्या तबाही आप भी

सत्य का कत्ल देखा तो सबने ही था
पर किसी ने भी इसकी गवाही न दी

शिकवा-गिला

जिसके कूचे में लिए जाता है अक्सर दिल मुझे
उसने तो अब तक न समझा प्यार के क़ाबिल मुझे

मांझी जी ने अपने तख़ल्लुस का भरपूर फायदा उठाया है:

नदी को पी रहा 'मांझी' समंदर
लिखे इतिहास है इस तशनगी के

नाव 'मांझी' जब से डूबी है हमारी
हमने दरिया से किनारा कर लिया है

पसीने आ गए हैं कैसे 'मांझी'
अभी तो दूर है तट से सफ़ीना

तटों को नापने बढ़ते हैं मांझी
नदी के बीच हम ठहरा न करते

सबको ले जाऊँगा मैं पार नदी के 'मांझी'
नाव में पाल हिफ़ाज़त की लगा लेने दो

मौज ने इठला के 'मांझी से कहा
ज़िंदगी जीते हैं शाही आप भी

किया रक्स 'मांझी' की पतवार ने जब
नदी भी लगी माँगने उस से पानी

नाव 'मांझी' लहर की साज़िश मे मेरी क्या फँसी
दूर से दिखला रहा है आईना साहिल मुझे

दिखाई देता है मांझी ख़ुमार लहरों पर
तटों पे तेज हुआ है सुरूर का चक्कर
सबको ही यकीं पार उतरने का हुआ था
मांझी' ने जो पतवार कभी अपनी संभाली

जब समुंदर में जाके समर्पण किया
तबसे 'मांझी' रही कब नदी भी नदी

क्या किसी लहर की नागिन ने डसा है 'मांझी'
लौटकर आया नहीं नाव चलाने वाला

सहमी-सहमी हैं मछलियाँ सारी
कोई 'मांझी' यहाँ लुटेरा है

छोड़ कर चल दिए सभी 'मांझी'
नाव साहिल पे ला के देख लिया

ये मजमून तवील होता जा रहा है। आप से गुज़ारिश है कि शीशे का इनक़िलाब पढिए। इसमें विभिन्न प्रकार के विषयों पर अलग अलग अंदाज में आपको शे'र मिल जाएँगे।

और आपको महसूस होगा कि श्री देवेन्द्र मांझी जी को यूं ही नहीं इतने प्रतिष्ठित सम्मानों से नवाज़ा गया गया है। इंडियन अकादमी फॉर पीस एण्ड एजुकेशन, बंगुलुरु ने उन्हें डाकटरेट की मानद उपाधि से भी विभूषित किया है। माँ शारदे से प्रार्थना है कि वे श्री देवेन्द्र 'मांझी' जी की लेखनी में शायरी के अनेक गुण भर दें!

यथास्तु

पुस्तक समीक्षा:-शीशे का इंक़िलाब
शायर:-देवेंद्र माँझी
प्रकाशक: पंछी बुक्स, दिल्ली
क़ीमत:-रू 300 सजिल्द, 108 पृष्ठ

रमेश 'कँवल'
पटना
मोबाईल 878 976 1287

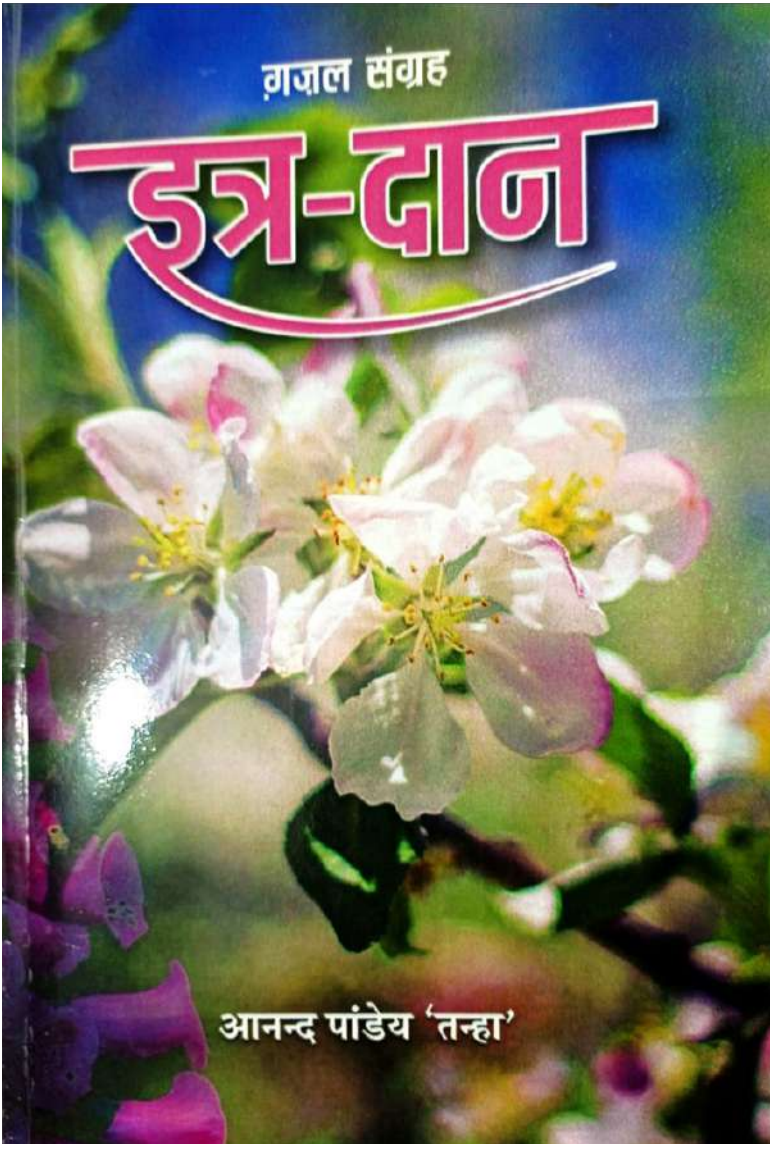
ग़ज़ल संग्रह
इत्र-दान
आनन्द पांडेय 'तन्हा'

इत्रदान-आनंद पाण्डेय 'तन्हा' : इत्रदान से उमड़ती खुशबू का सफ़र

लोग समझते हैं कि बैंकों में सिर्फ़ धन का कारोबार होता है। नोट गिने जाते हैं, ड्राफ्ट बनते हैं और चेक क्लियर होते हैं। एप के माध्यम से या ऑनलाइन रुपयों का लेनदेन होता है-मार्केटिंग और शोपिंग होती है। बैंकों को साहित्य और शायरी से क्या लेना देना लेकिन कानपुर निवासी श्री आनंद पाण्डेय 'तन्हा' ने तो इलाहाबाद बैंक में वरिष्ठ प्रबंधक रहते हुए भी धनसम्पदा से इतर यश सम्पदा का ही अर्जन कर लिया। रिटायरमेंट के बाद जब उनके बैंक के लाकर की तलाशी ली गयी तो इत्रदान के ख़ुशबू की दौलत से सभी मालामाल हो गए।

महकते ज़ुबान से बात करने की ख़्वाहिश और इत्रदान बनने की ललक ने सारी धन सम्पदा त्याग कर श्री आनंद पाण्डेय 'तन्हा' को एक कलम उठा लेने के लिए प्रेरित किया। आज मैं समदर्शी प्रकाशन, मेरठ से प्रकाशित उनके ग़ज़ल संग्रह 'इत्रदान' के चुनिंदा अशआर आपको पेश करने की कोशिश कर रहा हूँ। ग़ज़लों का म्यूजिक एल्बम 'दिल की अंजुमन में' निकालने के बाद श्री तन्हा ने इस किताब में अपनी 91 ख़ूबसूरत ग़ज़लें शामिल की हैं। सारे अशआर लाजवाब है। फिर भी मेरी कोशिश है कि उनमें से भी बेहतरीन आपके हुज़ुर में पेश करूँ।

इत्रदान का मतलब बताते हुए पाण्डेय जी कहते हैं:

अदीब हैं, जो महकती ज़ुबान कहते हैं
तभी तो लोग इन्हें इत्रदान कहते हैं।

और अपने क़लम उठाने पर गर्व करते हुए यह भी बताते हैं कि इसी से उनकी ज़िन्दगी में रस है:

चीज़ हर एक यूँ मयस्सर थी,
हम सुख़नवर, क़लम उठा लाये।

कहें मत व्यर्थ की इसको क़वायद,
सुख़न से ज़िन्दगी अपनी सरस है।

वैसे तो हर आदमी दिल के हाथों मज़बूर रहता है लेकिन एक शायर ही है जो इसकी कारगुज़ारियों का खुले आकाश में बयान करने से नहीं हिचकता। चन्द शे'र मुलाहिजा हो:

दिल

हानि-लाभ ये क्या जाने,
दिल तो पूरा पागल है।

हमें क्या पता दिल कहाँ जा रहा है,
अभी तो सफ़र का मज़ा आ रहा है।

गर मिल जाओ मुझको 'तनहा',
दिल की बात ज़ुबानी लिख दूँ।

मिल गयी है प्यार की दौलत हमें,
दिल ज़रा बरबाद माना हो गया।

हर वरक़ पर दर्ज़ है जिसके ग़मों की दास्ताँ,
आज दिल इंसान का ऐसा रिसाला हो गया।

दिल को वश में कर लेता है,
आँखों का ये जादू-टोना।

जब आँखों के जादू टोना का ज़िक्र आ गया तो आँखों पर चन्द लाजवाब शे'र देखिये:

आँखें

वही तो कहें, क्यों नशा छा रहा है,
निगाहों से मय कोई छलका रहा है।

बारहा बात हमसे करतीं हैं,
काँच के फ़्रेम में जड़ीं आँखें।

साक़ी इस मय से तो तेरी,
आँखों का पैमाना अच्छा।

आँखों के रस्ते दिल में उतर जाने के हुनर को इश्क़ मुहब्बत प्रेम कहते है। ऐसा नहीं है कि 'तन्हा' की ग़ज़लें इनसे महरूम है लेकिन ज़रा दीगर अंदाज़ देखिए:

इश्क़

हमारा रोज़ बी.पी. बढ़ रहा है,
तुम्हारे इश्क़ में है क्या नमक अब।

इश्क़ करती हैं गुलों से देखिये,
किस क़दर तहज़ीब से ये तितलियाँ।

यूँ तो महबूब से मिलने की ख़ुशी का बयाँ इस से बेहतर क्या होगा

नब्ज़ में फिर से रवानी आ गयी है,
आप आये शादमानी आ गयी है

लेकिन तन्हा साहब की नज़रों में मुहब्बत और हवस का फ़र्क देखिये

मुहब्बत नाम है बाहम कशिश का,
उसे हर हाल में पाना, हवस है।

यूँ तो मुहब्बत में मौसम भी सुहाना हो जाता है:

क्या बिखेरी है किसी ने ज़ुल्फ़ जो,
दफ़अतन मौसम सुहाना हो गया।

लेकिन मुहब्बत करने से पहले इजाज़त लेना ज़रूरी समझते हुए शायर कहता है:

हमें भी तो इजाज़त दीजिये ना,
हमेशा ज़ुल्फ़ें क्यों रुख़सार चूमें।

मुहब्बत पर कुछ और शे'र देखिये:

प्रेम की पोथी कभी पढ़ते नहीं हैं,
यों उन्हें कंठस्थ हैं सारी ऋचाएँ।

हमसे मिलना, भूल अगर है,
भूल यही हर बार करो ना।

मुहब्बत हो गयी है तर्क लेकिन,
महकती आज भी हर इक नफ़स है।

अब मुहब्बत के कुछ गिले शिकवे देखिये। आशिक़ों की बेबसी देखिये:

बेबसी /शिकवा

ज़िन्दगी में यूँ हमारी क्या नहीं है,
आप जैसा बस हसीं चेहरा नहीं है।

मुब्तला है आप ही के इश्क़ में दिल,
ये हमारी कुछ कभी सुनता नहीं है।

हो गये हैं हम निकम्मे इस क़दर अब,
कुछ, मुहब्बत के सिवा, होता नहीं है।

आपकी ही रूह है इस जिस्म में अब,
दूसरा कोई यहाँ रहता नहीं है।

राब्ता

सज़ा भी किस तरह देते तुम्हें हम,
हमारे दरमियाँ जब राब्ता है।

अब जिस जिस्म पर हम जान देते हैं और जिसे मुहब्बत का उन्वान बनाते हैं उसके मुतल्लिक भी कुछ अशआर मुलाहिजा हो:

जिस्म

समझते थे इसे हम जाविदानी,
मगर निकला हमारा जिस्म, फ़ानी।

जिस्म हासिल हुआ किराये पर,
मौत का हक़ ही मालिकाना है।

ज़ईफ़ी आ गयी है जिस्म पर यूँ,
अभी दिल में हमारे बचपना है।

यूँ लगे है जब हुआ बेटा जवां तो,
लौट कर हम पर जवानी आ गयी है।

घर नया देखूँ, कहा यह रूह ने,
जिस्म यह अब तो पुराना हो गया।

रूह की बात कीजिये साहिब,
छोड़िये भी शरीर के क़िस्से।

और इसीलिए हुस्न पर ग़ुरूर न करने का मशविरा देते हुए तन्हा कहते हैं:

ग़ुरूर हुस्न पे इतना न कीजिये साहिब,
ज़हीन लोग बदन को मकान कहते हैं।

बदन में है ज़ईफ़ी मानते हैं,
अभी महफ़ूज़ है दिल में जवानी।

ग़ज़ल में सिर्फ़ प्रेम मुहब्बत ही नहीं है और भी टॉपिक्स /मसअले है जिन्हें इत्रदान में देखा जा सकता है। अना, ग़ुरूर, ख़ुदा, ख़ौफ़, ग़म, दुश्मनी, दौलत, धूप, नसीहत, मशविरा, मज़हब, मज़दूर, मौत, रहबर, शजर, शराब, शुक्रिया, सरकार, समाज, सियासत, हौसला वगैरह को भी ग़ज़ल के शे'र का मौजूं बनाया गया है। पहले ग़ज़ल पर दो शे'र देखिये:

दर्द की इंतिहा हुई जब भी,
ज़हन में दफ़अतन ग़ज़ल आये।

इबादत, भाईचारा-औ-मुहब्बत,
ग़ज़ल के बस यही उनवान होते।

अब आइये ख़ुदा के दर पर दस्तक दें। वैसे तो ख़ुदा पर अनेक अशआर हैं लेकिन तन्हा के अलग-अलग मिज़ाज शे'र मुलाहिजा फ़रमाइए:

कहीं से भी नहीं जब काम बनता,
ख़ुदा को ही पुकारा जा रहा है।

फिर क्या इधर-उधर जाना,
जब है रब के घर जाना।

अपनी दुनिया से बेहिस,
कैसा बन्दा परवर है।

जब भी सोचा, राहे-ख़ुदा पर चलना है,
सब रिश्ते, हमको समझाने बैठ गये।

अब ज़िन्दगी और मौत पर इत्रदान से चुनिन्दा अशआर पेश करता हूँ:

ज़िन्दगी

हम हुबाबों की तरह हैं, भूल जाते हैं,
कौन जाने कब फ़ना हों एक ही पल में।

जानते हैं तयशुदा है मौत लेकिन,
जी रहे हैं लोग सारे बेख़बर से।

तमाम उम्र रहे रू ब रू हक़ीक़त से,
मगर न छोड़ सके लोग ख़्वाब की बातें।

मौत

मौत तो सिर्फ़ इक बहाना है,
इक नया जिस्म आज़माना है।

देह का रूपान्तरण है मृत्यु केवल,
शोक फिर इस मृत्यु का हम क्यों मनाएँ।

कामनाओं को तन्हा साहब ने पुनर्जन्म से जोड़ते हुए मोक्ष का दुश्मन समझा है:

एक भी है शेष जब तक कामना,
इस धरा पर है नियत आवागमन।

जब तलक हसरतें अधूरी हैं,
लौट कर बार-बार आना है।

इसलिए उनका मशविरा है:

ख़ूब तअल्लुक़ रखिये सबसे,
ख़ुद से भी पहचान निकालें।

ख़ुदा के बाद वे सामाजिक विसंगतियों, समाज की विद्रूपता, विरोध की आवाज़ पर आते हैं लेकिन एक सरकार की परिकल्पना करने के बाद:

सरकार

अब न कोई और लूटेगा हमें,
अब हमारे पास इक सरकार है।

लेकिन जब सरकार के रहते हुए भी अवाम की हक़मारी होने लगती है तो शायर पूछता है:

चंद लोगों की मुसल्सल क्यों बढ़ी है सम्पदा,
हक़ सभी का है बराबर देश की टकसाल में।

मुफ़लिस अब भी वैसे ही हैं,
क्या करती हैं ये सरकारें।

तब कोई एक शख्स भी हक़ लेने के लिए आगे बढ़ता है तो

इक अलम्बरदार आया सामने तो,
हर ज़ुबाँ पर हक़ बयानी आ गयी है।

समाज में व्याप्त बुराइयों, अजब ग़जब रिवाज़ों, सामाजिक विषमताओं सरकार से उमीदें और उमीदों का पूरा नहीं हो पाना, ग़रीबी अमीरी की खाइयाँ पर भी इत्रदान में बेशतर अशआर भरे पड़े हैं। आपदा में भी अवसर तलाशने पर तन्हा साहब का तंज़ देखिये:

ज़िन्दगी में बढ़ा अँधेरा तो,
जुगनुओं की चमक उठीं आँखें।

दुश्मनी

उजालों की अंधेरों से ठनी है,
तभी तो रात-दिन में दुश्मनी है।

अजब ग़ज़ब रिवाज़ों पर चुटकी लेते हुए शायर कहता है:

ज़हन में है ख़ब्त इनके फुल करें ए.सी.,
गर्मियों में भी घुसे हैं लोग कम्बल में।

अमीरों में हमें अक्सर ये पागलपन नज़र आया,
बढ़ाएँ ठंढ ए. सी. से मगर कम्बल निकल आये।

अब फ्लैट कल्चर आने के बाद दहलीज़ का तसव्वुर नहीं रहा। तंज देखिये:

घरों में अब कहाँ दहलीज़ होती,
हदे-तहज़ीब सबको लाँघना है।

सत्य बोलने वालों का हश्र देखिये-

इधर सच बोलता इक आइना है,
उधर हर हाथ में पत्थर तना है।

समाज के बिचौलिए की मंशा देखिये:

क़ैद करना चाहते हैं सूर्य को वो,
जो उजालों की दलाली कर रहे हैं।

पुरुषवर्चस्व वाले समाज की तरफ़ से 'तन्हा' ऐतराफ़ करते हैं कि समाज में जो नारियाँ वेश्या जीवन यापन कर रही हैं उनकी ज़िम्मेदारी पुरुषों पर ही है:

सच कहें तो यह पुरुष की देन है,
जो बनीं हैं वेश्या कुछ नारियाँ।

और सच को कोई झुठला नहीं सकता:

न हारा था, न हारेगा कभी भी सच यहाँ 'तन्हा',
बचाने के लिये इक झूट को सौ झूट जाते हैं।

सच कहिये तो कोई भी रोये तन्हा की आँख से आंसू टपकने लगते हैं:

रोया है जब भी कोई,
मेरे आँसू छलके हैं।

हर दुःख की तासीर वही,
सिर्फ़ अलग ही क़िस्से हैं।

वक़्त पर लाजवाब शे'र है:

वक़्त मुकम्मल मरहम है,
ज़ख्मों का तय, भर जाना।

धूप को 'तन्हा' की नज़र से देखिये:

यों न धरती घूमती है अक्ष पर,
सेंकती है धूप में सम्पूर्ण तन।

कहते है लोग घर वहीँ बनाते हैं जहाँ सुख-सुविधा के सभी साधन मयस्सर होते हैं इस बात को कहने का अंदाज़ देखिये:

घर

घर बनाते हैं कहाँ उस पर परिंदे,
जो शजर महरूम है बर्गो-समर से।

और गर भाई भाई के बीच बटवारा हो जाय आँगन में दीवार हो जाय तो सबसे ज़्यादा तकलीफ़ घर को ही होता है: शे'र देखिये:

तन्हा-तन्हा रोया था घर,
आँगन में दीवार लगा कर।

लेकिन शजर पर एक और शे'र समाज में बुलंदियों पर पहुँचने वालों के लिए 'तन्हा' ने कहा है:

जिस शजर पर हैं बहुत से गुल, समर,
वो शजर सबका निशाना हो गया।

सियासत और ईमान की बात करने से पहले राहबर की बात कर ली जाए:

खोया-खोया रहबर है,
लुट जाने का अब डर है।

सियासत/ ईमान

मुनासिब है, सियासत आप चुन लें,
अगर ईमान अपना बेचना है।

अच्छी क़ीमत मिल जाएगी,
आप अगर ईमान निकालें।

न होती मुल्क की बदहाल सूरत,
सियासत में अगर ईमान होते।

रखें महफ़ूज़ अपनी बस्तियों को,
सियासत का शरारा जा रहा है।

दौर जब इंतिखाब का आया,
हुक्मरां तब अवाम तक पहुँचे।

हज़ारों वासनाएँ ज़हन में हैं,
बदन पर, पैरहन यूँ जोगिया है।

पहले तो पुचकारेगा,
फिर वो ठोकर मारेगा।

शुहरत का लालच देकर,
इज़्ज़त रोज़ उतारेगा।

अक्सर मजदूरों का व्यक्तिगत शोषण तो मालिक करते ही हैं लेकिन जब उनकी औरतों पर भी उनकी बुरी नज़र पड़ने लगती है तो मजदूरों की गुज़ारिश को 'तन्हा' साहब ने यूँ शायरी में ढाला है:

हमारी औरतों को यूँ बुरी नज़रों से मत देखें,
मयस्सर आपकी ख़ातिर हज़ारों हूर हैं साहिब।

कहाँ तारीख़ में ज़िंदा हमारा नाम रहता है,
शिलालेखों के ज़रिये आप ही मशहूर हैं साहिब।

मज़हब पर 'तन्हा' के मुख़्तलिफ़ ख़यालात हैं:

मज़हब

आग ही तो लगा रहा मज़हब,
भाड़ में जाये आपका मज़हब।

लीजिये पैरहन मुहब्बत का
छोड़िये भी सड़ा-गला मज़हब।

यह सनातन धर्म है वट-वृक्ष जैसा,
अन्य धर्मों की यहाँ लिपटीं लताएँ।

श्री आनंद पाण्डेय तन्हा ने समाज हित में लोगों को कुछ मशविरा और नसीहतें भी इत्रदान की ग़ज़लों में दिया है।आप भी इनका लुत्फ़ उठाइये:

नसीहत

किसी दिन क़ज़ा छीन लेगी बदन ये,
कभी आज का, काम कल पर न टालें।

सभी के पास हैं अपने मसाइल,
बताएँ मत किसी को पीर अपनी।

घायल करती है दिल को,
तल्ख़ ज़ुबाँ भी नश्तर है।

इब्तिदा तो कीजिये परवाज़ की,
सर झुकाने को खड़ा है आसमां।

फ़िक्र दुनियाँ भर की सर पर लाद कर,
ज़िन्दगी को और बरहम क्यूँ करें।

आ रहे हैं कुछ सियासी लोग फिर,
आइये, महफ़ूज़ कर लें बस्तियाँ।

जब समझ मे नहीं आये क्या मांग लें,
तब मुनासिब यही है दुआ मांग लें।

जब इनामात से हम न ख़ुश हो सकें,
चाहते हैं ख़ुदा से, ख़ुदा मांग लें।

जिनसे मिल कर ख़ुशी का न एहसास हो,
जोड़ कर हाथ उनसे क्षमा मांग लें।

मशविरा

पहले अपने दोष निहारें,
फिर औरों पर पत्थर मारें।

आ गये हैं कुछ दरिंदे शहर में अब,
बे-सबब निकला न करिये आप घर से।

तंग लिबास

न पहनें तंग इतने पैरहन अब,
नज़र सबकी बदन पर ही गड़ी है।

ख़बर हर जुर्म की वो देखता है दूरदर्शन पर,
तभी इस दौर का बच्चा हमें बच्चा नहीं लगता

दौलत की अहमियत बताते हुए तन्हा साहब अपने औलाद में सारी दौलत न बाँट देने का एक नेक मशविरा देते हैं:

करें तक़सीम, मत औलाद में सब,
यही दौलत बुढ़ापे की छड़ी है।

ग़ज़ल में हिंदी के अलावा उर्दू और फ़ारसी के अलफ़ाज़ तो शुअरा इस्तेमाल करते ही हैं लेकिन अंग्रेज़ी के शब्दों की ख़ुशबू को जिस ख़ूबसूरती से श्री आनंद पाण्डेय 'तन्हा' ने इत्रदान में समेटा है उसकी मिसाल नहीं। बिल्कुल लाजवाब

अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग

हमें ही देख कर वो मुस्कुराया,
खड़े थे यूँ बहुत से लोग क्यू में।

जुस्तजू में जिस ख़ुदा की दर-ब-दर भटके,
कल उसे ढूँढेंगे शायद लोग गूगल में।

कुछ तो सिग्नल भेज ख़ुदा,
डाउन दिल का सर्वर है।

अहद जब भी वफ़ा का तुम करोगे,
हमारी ओर से हर बार यस है।

सुना है, इस धरा पर फिर हमारा अवतरण होगा,
ख़ुदा के पास क्या हम ले के पैराशूट जाते हैं।

वासना के वायरस हैं ज़हन में,
आदमी अब फ़ितरतन बीमार है।

चलो अच्छा हुआ प्रतिबंध पालीथीन पर अब है,
लिफ़ाफ़े, बैग, हुन्डे, दोने औ पत्तल निकल आये।

बिहार जैसे कई सूबे हैं जिनमें शराबबंदी है वहाँ 'तन्हा' को शराब की बातें कैसे अच्छी लगें:

मये-निगाह मिले तो हमें पिला देना,
हमें पसन्द नहीं यूँ शराब की बातें

रंज से जो नजात पाना है,
दैर, मस्जिद, शराबखाना है।

आप कर दें नक़ाब से तौबा,
हम भी कर दें शराब से तौबा।

व्यक्ति के निजी जीवन में हौसला के साथ साथ संतोष, धैर्य यानि इत्मीनान की भी बड़ी अहमियत है; देखें:

हौसला

न मानी हार फिर भी हौसलों ने,
कहा सबने मुसीबत ये बड़ी है।

अमीरी-ग़रीबी

ख़ुश नहीं है अगर अमीरी तो,
इक महल भी ग़रीबखाना है।

संतोष

तुम्हारा चाँद लेकर क्या करेंगे,
हमारे पास अपनी चांदनी है।

कौन है जो, ख़ता नहीं करता,
छोड़िये, क्या मलाल करना है।

लब्बोलुबाब ये कि बैंक के वरीय प्रबंधन से जुड़े श्री आनंद पाण्डेय जो इतने अशआर की मौजूदगी में भी ख़ुद को 'तन्हा' कहते हैं और बिना किसी शुभ मुहूर्त के इत्रदान लिए शहर दर शहर उसकी ख़ुशबू बिखेरते फिरते है क्योंकि बक़ौल उनके

सवाबों के लिये क्या शुभ मुहूरत,
भलाई को हमेशा शुभ घड़ी है।

आइये अपने बीच ऐसी ऐसी अदबी हस्तियों को पाकर हम ईश्वर को धन्यवाद और रब का शुक्रिया अदा करें

इस धरा ने क्या नहीं हमको दिया,
प्रात उठ कर कीजिये इसको नमन।

रमेश 'कँवल'
चेयर पर्सन

डॉ. महेन्द्र अग्रवाल
की नई ग़ज़लें
डॉ. महेन्द्र अग्रवाल

नई ग़ज़लें-डॉ. महेंद्र अग्रवाल
रहे जो साथ में ग़ालिब के बेख़ुदी आई

ग़ज़लों का आरंभ अरबी साहित्य की काव्य विधा के रूप में हुआ। अरबी भाषा में कही गयी ग़ज़लें वास्तव में नाम के ही अनुरूप थी अर्थात उसमें औरतों से बातें या उनके बारे में बातें होती थी।

अरबी से फ़ारसी साहित्य में आकर यह विधा शिल्प के स्तर पर तो अपरिवर्तित रही किंतु कथ्य की दृष्टि से वे उनसे आगे निकल गई। उनमें बात तो दैहिक या भौतिक प्रेम की ही की गई किंतु उसके अर्थ विस्तार द्वारा दैहिक प्रेम को आध्यात्मिक प्रेम में बदल दिया गया। अरबी का इश्के मजाज़ी फ़ारसी में इश्क़े हक़ीक़ी हो गया। फ़ारसी ग़ज़ल में प्रेमी को सादिक (साधक) और प्रेमिका को माबूद (ब्रह्म) का दर्जा मिल गया। ग़ज़ल को यह रूप देने में सूफ़ी साधकों की निर्णायक भूमिका रही। सूफी साधना विरह प्रधान साधना है। इसलिए फ़ारसी ग़ज़लों में भी संयोग के बजाय वियोग पक्ष को ही प्रधानता मिली।

फ़ारसी से उर्दू में आने पर भी ग़ज़ल का शिल्पगत रूप ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया गया लेकिन कथ्य भारतीय हो गया। लेकिन उत्तर भारत की आम अवधारणा के विपरीत हिन्दोस्तानी ग़ज़लों का जन्म बहमनी सल्तनत के समय दक्कन में हुआ जहाँ गीतों से प्रभावित ग़ज़लें लिखी गयीं। भाषा का नाम रेख़्ता (गिरा-पड़ा) पड़ा। वली दकनी, सिराज दाउद आदि इसी प्रथा के शायर थे जिन्होंने एक तरह से अमीर ख़ुसरो (1310 इस्वी) की परंपरा को आगे बढ़ाया। दक्किनी उर्दू के ग़ज़लकारों ने अरबी फ़ारसी के बदले भारतीय प्रतीकों, काव्य रूढ़ियों, एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को लेकर रचना की।

उस समय उत्तर भारत में राजकाज की भाषा फ़ारसी थी इसलिए ग़ज़ल जब उत्तर भारत में आयी तो पुनः उसपर फ़ारसी का प्रभाव बढ़ने लगा। ग़ालिब

जैसे उर्दू के श्रेष्ठ ग़ज़लकार भी फ़ारसी ग़ज़लों को ही महत्वपूर्ण मानते रहे और उर्दू ग़जल को फ़ारसी के अनुरूप बनाने की कोशिश करते रहे। बाद में दाउद के दौर में फ़ारसी का प्रभाव कुछ कम हुआ। 1947 के बाद राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों के कारण उर्दू का प्रभाव बढ़ने लगा।

हिंदी में अनेक रचनाकारों ने इस विधा को अपनाया। जिनमें निराला, शमशेर, बलबीर सिंह रंग, भवानी शंकर, जानकी वल्लभ शास्त्री, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, त्रिलोचन आदि प्रमुख रहे। हिन्दी ग़ज़ल की स्वीकार्यता दुष्यंत कुमार के बाद बेतहाशा बढ़ गई। सभी पत्रिकाओं, समाचार पत्रों में ग़ज़ल प्रमुखता से प्रकाशित होने लगे। हमेशा ग़ज़ल विशेषांकों के अंक आने लगे।जिससे ग़ज़ल विधा लोगों के जनमानस में स्थापित हो गई।हिन्दी ग़ज़लों में नए-नए बिम्ब उपमा और उपमान के प्रयोग से इसका स्तर श्रेष्ठकर होने लगा। उर्दू ग़ज़लों से भी उच्च स्तर की ग़ज़लें हिन्दी में आने लगीं। आज हम आपको हिन्दी ग़ज़ल के अप्रतिम साधक डॉ. महेंद्र अग्रवाल से रूबरू कराते हैं जिन्होंने न सिर्फ़ हिन्दी भाषा में मन मुदित करने वाली ग़ज़लें कही हैं बल्कि सनातन संस्कृति के विभिन्न आयाम के साथ यह सफ़र तय किया है। मेरे सामने उनके नए ग़ज़ल-संग्रह ‘ नई ग़ज़लें’ की पांडुलिपि है जिसका शुभारंभ उन्होंने ईश्वर में आस्था व्यक्त कर की है

निराकार हो या कि साकार ईश्वर
हो कुछ भी जगत का है आधार ईश्वर

कहीं नाम कुछ है, कहीं रंग कुछ है
क़बीले हों कितने ही सरदार ईश्वर

तो इस ग़ज़ल संग्रह का समापन शिवजी को समर्पित शे’रों से की है:

जोड़े सभी चक्र इक कुंडली से
ऊर्जा का अक्षय हैं भंडार शिवजी

सर्जन कभी ध्वंस या ध्यान नर्तन
चेतन-अचेतन सहस्त्रार शिवजी

आम फ़हम भाषा की ग़ज़लें ग़ज़लों की ख़ूबसूरती से लबरेज़ होती हैं। छोटी बहरों में ग़ज़लें कहना आसान नहीं है लेकिन ये महारत भी डॉ. महेंद्र अग्रवाल को हासिल है।

गम से यारी

दिल है भारी
जाने की अब
कर तैयारी

प्यार मुहब्बत
इक बीमारी

उसके घर में
ख़ुशियाँ सारी

खुश रखती है
बिटिया प्यारी

माँ-बाबूजी और घर भारतीय संस्कृति के प्रतीक हैं। ग़ज़ल संग्रह के आरंभ में ही इन विषयों पर लाजवाब ग़ज़लें मन को लुभाती हैं। कुछ शे'र देखिए:

आंधी हो या धूप कड़ी हो सर्द हवा में एक कवच
भीग रहा हो बेटा जब-जब उसकी बरसाती है मां

हैं सबकी आशा के मोती सबकी दौलत बाबूजी
हम लोगों की पूरी दुनिया सारा भारत बाबूजी

घर नहीं चल पाये जब घर की तरह
सबकी नज़रों से उतर जाता है घर

हमें बचपन से ही ये संस्कार दिए गए हैं कि किताबों में देवी सरस्वती का वास होता है। इसलिए जब कताबें गिर जाएँ या पैरों से छू जाएँ तो हम उन्हें सर-माथे पे लगा कर क्षमा मांगते हैं। अफ़्सोस करते हैं:

पांव छू जाये किताबों से जो अनजाने में
मैं अभी भी उन्हें माथे से लगा लेता हूँ

जब संतान अपनी पहली सैलरी (कमाई) माँ-बाप के हाथों में रखता है तो कितनी ख़ुशी होती है:

मेरे हाथ बेटे की पहली कमाई
लगाया था पौधा शजर देखते हैं

और जब बच्चे माँ-बाप से अलग हो जाते हैं; पता नहीं देते तब भी वे उदास नहीं होते:

अलग ही रहते हैं बच्चे सुना बहुत खुश हैं
मुझे भी कौन सा ख़त लिखना है पता लेकर

प्रेम की चाशनी में भिगोए हुए लाजवाब अशआर भी डॉ. अग्रवाल ने कहे हैं:

यक़ीं नहीं है उसे इक किताब लिखती हैं
बदन पे उसके थिरकती ये उंगलियाँ मेरी

आपके होंठ आपकी नज़रें
इक ग़ज़ल की किताब क्या करिये

तमाम रात उसे कैसे शुक्रिया बोलूं
कि जिसकी याद सताती रही वही आई

यूं पसीना हवा सुखाती रही
धूप में छांव याद आती रही

वक़्त ऐसा भी आ गया इक दिन
मैं उसे वो मुझे मनाती रही

तो जुदाई की कसक लिए कुछ शे'र भी देखिए-

वफ़ा नहीं की, मगर बेवफ़ा कहूँ कैसे?
अलग हुआ है वो अपनी ज़रूरतें लेकर

वक्त पर कोई किसी का है नहीं
ये समझने में ज़माने लग गये

आज भी गाँव-सुदूर देहातों में पेयजल की कितनी क़िल्लत है इसे ख़ूबसूरत अंदाज में बयान करता एक शे'र मुलाहिजा हो:

उठा के लाते हैं सर पे ज़रूरतों जितनी
हमारे गाँव या घर तक नदी नहीं आती

कचहरी, प्रशासन और भ्रष्टाचार की तरफ़ ध्यान आकर्षित करते ये अशआर देखिए:

खड़ा हुआ हूँ कचहरी में कितने सालों से
किसी उम्मीद की जलती हुई चिता लेकर

रिश्वत लेने की
सबको आदत है

यही राजा की चाहत है
सदा आंचल पसारा कर

फ़ैसला इजलास ने कैसा किया?
कह दिया क़ातिल को ही क़ातिल नहीं

बात भी ठीक से नहीं करते
यार नेता अजीब होते है।

बीस पच्चीस वोट से हारे
लोग यूं बदनसीब होते हैं

किसानों की फ़टेहाली बयान करता ये ज़िंदा शे'र देखिए:

खेत सूखा किसान गीला है
पेट भरता नहीं पसीनों से

वतनपरस्ती पर एक सुंदर शे'र देखिए

फ़सादों में इसे बरबाद मत कर
तेरा भी है तो है मेरा वतन भी

आजकल सामाजिक उत्सवों में पंगत में बैठकर खाने की आत्मिक रिवाज ने बुफ़े का रूप धरण कर लिया है। शायर की तमन्ना देखिए

उस बफे में तू कहीं दूर खड़ी प्लेट लिए
चाहता था कि हो पंगत तो यहीं मैं परसूं

सत्ता परिवर्तन के साथ ही नेताओं की स्थिति को दर्शाता एक शे'र देखिए

रुतबा सिमट गया है, कुरसी खिसक गई है
सरकार की इनायत कल तक थी, अब नहीं है

पर्यावरण के प्रति शायर की चिंता देखिए

हर तरफ़ हैं इमारतें ऊंची
देखने को कहाँ हरा सा कुछ

आजकल अभिजात्य वर्ग के साथ-साथ मिडल क्लास के लोगों में भी उरियानियत (नंगा दिखने की चाह) हावी हो गई है। छोटी बह्र में बड़ी बात देखिए:

कपड़े तंग
खुलते अंग

इतना उम्दा शायर जब कहे:

अब उसकी याद से बाहर निकल गया, देखो
अब इसके बाद मुझे शायरी नहीं आती

ग़ज़ल कहना तुम्हारा शौक़ फिर भी
ग़ज़ल जैसा तेरा लहजा नहीं है

गीत ग़ज़लों के लिए
व्याकरण की बात है

तो लगता है

पढ़ा जो दाग़ को, मोमिन को ज़िंदगी समझी
रहे जो साथ में ग़ालिब के बेख़ुदी आई

जब आदमी अपना आत्म सम्मान खोने पर उतारू हो जाता है तो उसकी स्थिति कितनी नाज़ुक हो जाती है उसे इस शे'र से समझा जा सकता है:

सर झुकाते ही मैं झुक गया
गिर पड़ी सर से दस्तार भी

जब कोई अनुभवों के पहाड़ पर चढ़ता है तो उसे पता चलता है कि लोग हादसे की तरह मिलते है और ये ज़िंदगी किसी झमेले से कम नहीं। हर बार कोई अनहोनी दस्तक देकर लौट जाती है। अभी तक जी लिए ये कम नहीं। हम जो ख़ुशी ढूंढते हैं वो इधर है ही नहीं। मन तन से ऐसे लड़ता रहता है जैसे लुटेरे आपस में फूट पड़ने के बाद लड़ते हैं। रिश्तों को समझिए फिर व्यापार करिए। अंत में वक़्त सबसे बाद मदारी है और इसी के इशारे पर हर कोई नाचता फिरता है। कुछ लाजवाब शेर देखिए:

ज़ल्दबाजी के नाश्ते की तरह
लोग मिलते हैं हादसे की तरह

उम्र गुज़री तो समझ आया
ज़िन्दगी है तो झमेले हैं

लौटती हर बार है
पांव को छूकर लहर

ज़िंदा हैं अब तक
बड़ी इनायत है

ढूंढ़ते हैं हम खुशी
जो इधर होती नहीं

देह से लड़ता रहा है मन
फूट पड़ती ज्यों लुटेरों में

रिश्तों को समझो
फिर व्यापार करो

नाचता फिर रहा है हर कोई
वक़्त सबसे बड़ा मदारी है

डॉ.महेन्द्र अग्रवाल ख्यातिलब्ध साहित्यकार हैं। उन्होंने हर विधा में ख्याति प्राप्त की है। डॉ.महेन्द्र अग्रवाल की हिन्दी में 8 और उर्दूमें 1 ग़ज़ल संग्रह, 1 नवगीत संग्रह 9 व्यंग संग्रह 2 उपन्यास 1 कहानी संग्रह, 9 आलोचना की पुस्तकें और 7 संपादित कृतियाँ अब तक प्रकाशित हो चुकी हैं। अनेक समवेत ग़ज़ल संकलनों में आपकी ग़ज़लें जलवानुमा हैं। मध्य प्रदेश साहित्य

अकादमी ने आपको पुरस्कृत किया है। आपको ग़ज़ल गौरव सम्मान सहित दर्जनों पुरस्कार और सम्मान प्राप्त हुए हैं। आप जन्तु विज्ञान के साथ-साथ हिन्दी साहित्य में गोल्ड मेडलिस्ट हैं। विधि-स्नातक और पी-एच.डी. भी हैं। आपकी ग़ज़लें देश विदेश की उर्दू एवं हिन्दी की प्रतिष्ठित पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं। आपकी ग़ज़लों पर विभिन्न विश्व विद्यालयों में शोध प्रबंध प्रकाशित हो रहे हैं। आकाशवाणी और दूरदर्शन ने गायन हेतु आपकी ग़ज़लों का चयन किया है

'नई ग़ज़लें' डूब जाने वाला ग़ज़ल संग्रह है। इसमें शिल्प की कसावट है तो कथन की सजावट है। ग़ज़ल के व्याकरण का अनुकरण है तो हरि नाम का शरण है। विम्ब और प्रतीकों की महफ़िल में आप डॉ. महेंद्र अग्रवाल की ग़ज़लों का आनन्द उठाइए।

मेरी कामना है कि डॉ. महेंद्र अग्रवाल ग़ज़ल व्योम में देदीप्यमान सितारे की तरह चमकें। माँ वीणावादिनी इन पर विशेष कृपा करें। यथास्तु

इति शुभं

पटना
कार्तिक शुक्ल पक्ष 7 संवत 2081
8 नवंबर, 2024

बूँद बूँद ग़ज़ल
डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ'

'बूंद बूंद ग़ज़ल-डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ'

सत्ता विरोधी एवं जन चेतना के स्वर के साथ साथ प्रेम के एहसास की खुशबू की तलाश

ग़ज़ल जनमानस में सर्वाधिक लोकप्रिय काव्य विधा बनकर उभरी है। इसमे ग़ज़ब की सम्प्रेषणीयता है। ग़ज़ल आज सबसे ज़्यादा लिखी, पढी और सुनी जाने वाली काव्य–विधा बन गयी है। वजह यह है कि ग़ज़ल के एक शे'र में बहुत कुछ कहने की क्षमता होती है। यानी गागर में सागर भरने की कला ग़ज़ल के पास है। इसीलिए आज जिसे देखिए वही ख़ुद को ग़ज़लकार होने का दावा कर रहा है। सोशल मीडिया पर ग़ज़लकारों की बाढ़-सी आ गयी है। लेकिन वास्तव में ग़ज़ल जितनी आसान दिखती है, उतनी होती नहीं। ग़ज़ल का अलग व्याकरण और अंदाजे-बयाँ है, जिसे सीखना और पढ़ना पड़ता है। ग़ज़ल को साध पाना एक मुश्किल काम है। यह हुनर सबको नहीं आता। फिर भी ग़ज़ल की चमक को देखते हुए बहुत सारे लोग ग़ज़ल कहने लग गए हैं।

ग़ज़लें पत्र-पत्रिकाओं में भी खूब छप रही हैं। इस समय सबसे ज्यादा ग़ज़ल के ही विशेषांक छप रहे हैं। इसलिए ग़ज़ल के प्रति कवियों / पाठकों / श्रोताओं का जबदस्त रुझान देखने को मिल रहा है।

ग़ज़ल से इश्क़ करने वालों में आमजन तो हैं ही अभिजात्य वर्ग के लोग भी इसकी ख़ुशबू से प्रभावित हैं। आज हम ऐसे शायर की बात करेंगे जो हिमाचल प्रदेश के शीर्ष प्रशासनिक पद पर रहने के बावजूद ग़ज़ल कहने के लोभ से पीछा नहीं छुड़ा सके। हालांकि ये सत्ता विरोधी स्वर के शायर हैं। सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध बिगुल फूंकने, ग़रीबों वंचितों और शोषितों की आवाज़ बुलंद करने वाले शायर हैं फिर भी ग़ज़ल की मूल भावना प्रेम से ये अपने को अछूता नहीं रख सके। जी हाँ! मैं बात कर रहा हूँ ग़ज़लों के आकाश में चमकने वाले नए सितारे डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' की जिनका दूसरा ग़ज़ल संग्रह **"बूँद**

बूँद ग़ज़ल" मेरे हाथों में है। आइए! हम उनकी ग़ज़लों में मुहब्बत के तिलस्मी एहसास की ख़ुशबू को पकड़ने की कोशिश करें। लेकिन बेहतर होता कि हम सत्ता के चरम ऐश्वर्य प्राप्त करने वाले इस शायर के सत्ता विरोधी एवं जन चेतना के स्वर की विवेचना पहले करें और फिर मुहब्बत की शायरी का जाइज़ा लें।

डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' की शायरी विगत कुछ वर्षों की ही है। उनका प्रथम ग़ज़ल संग्रह 'आओ नई सहर का नया शम्स रोक लें' 31 अगस्त, 2019 को दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी के अमीर खुसरो हॉल में लोकार्पित हुई। अपने दूसरे ग़ज़ल संग्रह 'बूंद बूंद ग़ज़ल' में वे स्वीकार करते हैं कि 'मेरी ग़ज़ल यात्रा वर्ष 2017 में प्रारम्भ हुई। यह एक अद्भुत सफ़र रहा और मेरे ऊपर सृजन की बारिशें हुईं और अनवरत हो रही हैं।'

नदियों की कोई बात न साहिल, न समुन्दर,
बादल की तरह आती हैं उड़ती हुई ग़ज़लें।

जैसी भी हैं, ये हैं मेरे मन का ही तो दर्पण,
झूठी नहीं हैं सच में नहाई हुई ग़ज़लें।

सच में नहाई हुई ग़ज़लों से रूबरू होने पर बड़ा मज़ा आता है। पहले वे बताते हैं कि दुनिया कैसी है। सियासत क्या है और उस से दूर कैसे रहा जाए। कुछ संदेश भी देने से वे परहेज़ नहीं करते।

हालात ए हाजिरा-'शलभ' की शायरी में वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य और देश की स्थितियों-परिस्थितियों का सजीव चित्रण है। भय का माहौल, सपने दिखाना और सपने पूरे नहीं होने पर हँस देना, बेचैनियों के आसमां के नीचे जमीन पर सोया पस्त आदमी, हवाओं में ज़हर घोलते धर्म के उन्मादी वातावरण, सच छुपाने की कोशिश और मीडिया का मुखर होना आपको 'शलभ' की ग़ज़लों में बखूबी मिल जाएँगे। कुछ शे'र देखिए-

हर तरफ़ जकड़न भरा आकाश ही छाया हुआ है,
हर दिशा में इक अजब संत्रास ही छाया हुआ है।

बहुत लज़्ज़त से देते हैं हमें वो वस्ल की दावत,
मगर जब राज़ खुलते हैं तो हँसकर मुस्कुराते हैं।

आस्मां में दूर तक बैचेनियाँ हैं,
औ' ज़मीं पर आदमी सोया हुआ है।

पहले बारूदों से मिट्टी पाट दी थी,
अब हवाओं में ज़हर घोला हुआ है।

किस तरफ़ ले जाएगी धर्मों की नफ़रत,
आदमी उन्माद में अन्धा हुआ है।

असलियत जमकर छुपाती है सियासत,
मीडिया अब ढोल उसके पीटता है।

जहाँ हर तरफ़ झूठ का बोलबाल हो, जहाँ सच को भी झूठ के आवरण में लिपटने की बेबसी हो, जहाँ अखबार में वही छपता है जो सरकार चाहती है, जहाँ पाँच साल की सत्ता अनुमति मिलने को देश की हर सांस पर अधिकार और आधिपत्य होने के रूप में लिया जाय, जहाँ हक़ की कोई आवाज़ उठाने पर ज़माने भर की सख़्तियों का सामना करना पड़े उन हालात में अगर डॉ. 'शलभ' निम्न अशआर पेश करते हैं तो हैरत क्या!

हर दिशा में झूठ का है बोलबाला,
सच भी बाबू झूठ में लिपटा खड़ा है।

साथियो अब झूठ पकता है वही बाज़ार में,
जो हुक़ूमत चाहती है छापना अख़बार में।

लोकसत्ता क्या मिली उनको चलाने को 'शलभ',
वो ये समझे देश की हर साँस है अधिकार में।

बड़ा मासूम-सा इक प्रश्न पूछा था हुकूमत से,
ज़माने भर की मुझ पे सख़्तियाँ बढ़ती नज़र आईं।

डॉ. 'शलभ' का मानना है कि अब हर मदारी नेता हो गया है। ऑफ़िसर अजब ग़ज़ब आंकड़ों के जाल में उलझाए रखने की कला में माहिर हो गए हैं। पुख़्ता साक्ष्य भी अदालतों के सामने बेमानी हो गए है। सियासी दावों से देवता भी शर्माने लगे हैं। आदमी की ज़िंदगी किसी पटकथा लेखक की लिखी हुई संवाद सी सिमट कर रह गई है। कुछ शे'र मुलाहिजा हो-

अब सियासत जादू का थैला हुआ है,
हर मदारी आजकल नेता हुआ है।

ग़ज़ब के आँकड़ों से लैस हैं मुस्तैद अफ़सर,
समूचा देश उनके हाथ का दफ़्तर रहा है।

तथ्य हों मज़बूत कितने, साक्ष्य हों कितने अटल,
है अदालत में निरर्थक हक़बयानी आजकल।

आसमां से ऊँचे हैं दावे सियासी,
देवता भी अब तो शर्माने लगे हैं।

पटकथा-सी फ़िक्स है अपनी कहानी आजकल,
खुद में सिमटी जा रही है ज़िन्दगानी आजकल।

डॉ. 'शलभ' को महसूस होता है कि जिन्हें वो अपना रहबर समझते थे वही नेता अब जेलों में हैं। भ्रष्टाचार के कारण सब कुछ पूर्ववत होने के बावजूद कुछ भी पहले जैसा नहीं है। मीडिया जब जनता के सवाल उछालती है तो सियासी दलों के प्रवक्ता जवाब नहीं दे पाते। सियासी होशियारी, वफ़ादारी और तरफ़दारी का मौसम छा गया है। अगर आप शामिल नहीं होते हैं तो अदालतें संज्ञान लेंगी और पुलिस मुस्तैद हो जाएगी। यह सही है कि सियासत हसीन ख़्वाब दिखाती है लेकिन ग़रीबों की क़िस्मत में भग्न घर ही होते हैं। भले ही

हुकूमत हवाई चप्पलों में चलने वाले बेचारों को हवाई सफ़र के ख़्वाब दिखाए लेकिन ग़रीबों के भाग्य का सितारा वहीं का वहीं झिलमिलाता है। भले ही सोशल मीडिया पर हुक्मरान ट्रोल हों लेकिन सियासत का चेहरा बदल नहीं पाता है-कुछ शे'र देखिए-

सुनते हैं जेल में है कहीं आजकल वही,
सजदे किए थे हमने कई जिस 'फ़क़ीर' के।

सागर, पहाड़, पेड़, नदी, सहरा औ' सराब,
इन सब के बावजूद वो आलम नहीं रहे।

ऐंकरों की फौज के आगे प्रवक्ता,
दुम दबा कर अब तो मिमियाने लगे हैं।

सियासी होशियारी के अदाकारी के मौसम हैं,
बढ़ाओ हाथ दोनों, अब गिरफ़्तारी के मौसम हैं।

वज़ीफ़ा आप भी ले लें अंगूठा ही लगाना है,
ये हाँ में हाँ मिलाने के तरफ़दारी के मौसम हैं।

अब अदालत लेगी कुछ संज्ञान यारो,
अब पुलिस मुस्तैद है, तन के खड़ी है।

दिखाती है सियासत गुलमुहर के ख़्वाब लेकिन,
नसीबों में तो मुफ़लिस के वही खण्डर रहा है।

हवाई चप्पलों वाले उड़ेंगे आसमाँ में,
वो जिनके सर पे अब तक घास का छप्पर रहा है।

हर तरफ़ से हो रही है खींचातानी आजकल,
फ़ेसबुक पर ट्रोल होते 'राजा-रानी' आजकल।

हज़ारों पैरहन बदले सियासत,
पर उसका रूप तो बदला नहीं है।

अजब किरदार होता है सियासत के सिंहासन का,
अगर दरवेश भी बैठे वो पाकीज़ा नहीं होता।

सियासत

राजनीति क्या है, सियासत की उलझनें क्या हैं; डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' ने इस टॉपिक को भी जम कर अपनी शायरी का मौजूं बनाया है।

सियासतदानों के मन में हमेशा एक हैवान छुपा रहता है जो उसे सत्ता के नशे में चूर रखता है। जो हमेशा से जनता को लूटते आए हैं वही सियासत के मीरे-कारवाँ होते हैं। वे आम जन की निजी ज़िंदगी में दख़्ल देने से बाज नहीं आते। अगर किसी को सियासत में अपना दबदबा क़ायम करना है तो वह लुटेरा पाल कर देखे। सियासतदाँ अगर दान भी करते हैं तो चाहते हैं कि टीवी और अखबारों में उनका फ़ोटो छपे। जिन्हें हम दानी समझते हैं वही लुटेरे होम करने के आवरण में घरों में आग लगा देते हैं। मीडिया, अखबार पुलिस, फ़ौज अदालतें जब सब सियासतदानों के ही हैं तो कोई उनका क्या बिगाड़ सकता है। आइए ग़ज़लों को हुस्न-इश्क़, प्रेम-मुहब्बत तक सीमित समझने वाले लोगों को डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' के इन अशआर से भी रूबरू कराया जाए:-

शासक के मन में होता है हैवान इक छुपा,
सत्ता के मद में रहता है जो चूर दोस्तो।

वही जो लूटते आए थे हमको आज तक खुल कर,
वही अब बन के बैठे हैं नए सरदार दुनिया में।

नए आयाम तय होंगे, 'शलभ' अब बुतपरस्ती के,
ये शासक तय करेंगे किसका अब क्या पैरहन होगा।

आपका भी दबदबा हो जाएगा,
पाल कर कोई लुटेरा देखिए।

फ़ोटो तो आए टी.वी. पे ख़बरों में सुर्ख़ियाँ,
यूँ कर रहे हैं दान वे फंडों को आजकल।

हवन की आग से उसने जला डाला है बस्ती को,
लुटेरा भी वही था हम जिसे दानी समझ बैठे।

खोखले रिश्तों की सच्चाई समझ में आ गई,
इन सभी की जड़ में जब पैसा नज़र आया मुझे।

हुकूमत, मीडिया, मुंसिफ़, ये फ़ौजें ये पुलिस अपनी,
अरे शासन को देखा है कहीं झुकते दलीलों पर?

संदेश

डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' हौसलों और उम्मीदों के शायर हैं। सियासत कितनी भी बुरी हो वे लोगों को चेतावनी, शुभ संदेश और नसीहत देने से परहेज़ नहीं करते। उन्हें यक़ीन है कि आसमान में कोई देवता नहीं होता इसलिए जो ज़मीन पर है उसे ही पूजना श्रेयस्कर है। धरती, सूर्य और गगन ही मिलकर मानव सभ्यता की सारी ज़रूरतों को फिर से उपलब्ध करा देंगे। जिन्हें अपनी श्रेष्ठता और ज्ञान पर गुमान था न तो वे सलामत रहे न ही ग़ालिब मीर और कबीर से श्रेष्ठ साहित्यकार। अत: निरंकुश हो रही सत्ता पर बंदिशें लगाने का वक़्त है। वे अवाम का हौसला बढ़ाते हुए धरती पर ख़ुशियों का नया सवेरा उगाने का आह्वान करते हैं।किसी तरह धरती पर अम्नो-अमां का राज्य स्थापित

करने की बात कहते हैं। जो लोगों को बर्गालाये नहीं वैसे रहबर ढूँढने की बात करते हैं। जो धरा के विष को पी ले ऐसे कलंदर की बात करते हैं। जो सबको ख़ुशियों से भर दे ऐसे मंतर की बात करते हैं। और सभी बस्तियों में यह ऐलान करने की हद तक जाते हैं कि सर्वत्र हमारा ही राज है। आइए उनके ख़ूबसूरत शे'रों की तह तक पहुँचें:-

जो है ज़मीन पर उसे ही पूजिए जनाब,
कोई भी देवता नहीं है आसमान में।

ये धरा औ' सूर्य मिलकर फिर उगा लेंगे
वो सब, पेड़, पर्वत, झाड़, जंगल, सभ्यताएँ, बस्तियाँ

इलहाम जिनको अपनी इदामत का है यहाँ,
नामो-निशाँ भी उनके तो क़ायम नहीं रहे।

ग़ालिब-फ़िराक़-मीर कि दुष्यन्त हों 'शलभ',
सब वक़्त की सलीब पर दायम नहीं रहे।

निरंकुश 'लोकसत्ता' हो रही कसना ज़रूरी है,
लगानी ही पड़ेंगी बन्दिशें अब इख़्तियारों पर

किसी सूरत हमारा कारवां अब रुक न पाएगा,
नया सूरज उगेगा अब यहाँ सारी फ़सीलों पर।

बरग़लाते हैं अधिकतर लोग ही लोगों को अब,
जो दिखाए राह सच्ची ऐसा रहबर छोड़ जा।

पेड़-पर्वत, झरने-सागर, शाश्वत दुनिया में हैं,
जो धरा के विष को पी ले वो क़लन्दर छोड़ जा।

ऐ शलभ! ग़ज़लों में तेरी ख़ूब ज़ीनत है भरी,
ख़ुश रहें सब देश में ऐसा तू मन्तर छोड़ जा।

तीनों लोकों में हमारा राज है अब,
कर दो ये ऐलान सारी बस्तियों में।

जन चेतना के स्वर और सत्ताविरोधी भावनाओं को मुखर करने वाले इस आशावादी शायर ने तरह तरह की उपमाओं और बिंबों से अपनी शायरी को पठनीय और अनुभूति चिंतन का श्रोत बनाया है इसी तरह इनके यहाँ प्रेम के चित्र और दृश्य प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। आदमी क्या है;प्रेम क्या है, मानवता के विविध आयाम क्या हैं-'शलभ' जी ने सब कुछ अपनी शायरी में समाहित कर लिया है। आइए इस पक्ष पर भी दृष्टि डालें।

आदमी क्या है! आदमी ज़िंदगी की दौड़ में थक कर गिरने, गिर कर सँभलने और फिर संभल कर दौड़ पड़ने का नाम है। आदमी का अस्तित्व ही दुआओं और प्रार्थनाओं पर निर्भर है इसलिए ज़िंदगी का सिलसिला ही आदमी है। 'शलभ' का शे'र देखिए:

ज़िन्दगी की दौड़ में जब-जब थका है आदमी,
गिर के सँभला, फिर उठा, उठ के चला है आदमी।

मौत भी यह जानती है इक दुआ है आदमी,
इस ज़मीं पर ज़िन्दगी का सिलसिला है आदमी।

और इस आदमी को अगर कोई प्रेम भरी नज़रों से देखने लगे तो उसके दिल का हाल दीवानों जैसा हो जाता है। मानो अँधेरों के आकाश से उलझ कर उसे आनन्दमय प्रकाश प्राप्त हो गया हो। मानो एक अल्हड़ नदी बहक सी गई हो, मुलाहिजा फ़र्माइए-

लज़्ज़त भरी निगाहों से देखा जो उसने आज,
दीवानावार दिल की तो आवारगी न पूछ।

मैं तीरगी के दश्त से इक बार जा भिड़ा,
फिर उसके बाद जो मिली वो रौशनी न पूछ।

जितना भी चाहे उफन ले अब समुन्दर,
एक अल्हड़ सी नदी बहकी हुई है।

तब ग़ज़ल के शेर उभरते हैं:

मुझे इश्क़ का तो पता नहीं, तेरे दिल का मुझको ख़याल है,
जो मैं तुझ से मिल के न कह सका, उसी बात का तो मलाल है।

ये जो चाँदनी के हैं सिलसिले, ये पहाड़ों नदियों के क़ाफ़िले,
तेरे आस्मां का वजूद है, तो इन्हीं के दम का कमाल है।

तेरा शह्र था कभी आशना मेरी दिलरुबा मेरी हमनवा,
ये ख़फ़ा हुआ है जो बेसबब करे मुझसे कितने सवाल है।

इन्हीं हालात में उसके जी में आता है कि मुहब्बत के फूलों से अपने महबूब का दामन भर दे। केसर के बाग़ों के पास थिरकते जलप्रपात पर गुलाबों सी मोहक कहानी लिख दे-

मुहब्बत के गुलाबों को सजाएँ उसके दामन पर,
गुलों की शादमानी की कहानी फिर नई लिक्खें

उन्हीं केसर के बाग़ों से सटे फिर चश्मे-शाही पर,
मुहब्बत ज़ाफ़रानी की कहानी फिर नई लिक्खें।

वो ख़ुशी का इज़हार करते हुए कहता है कि कल छत पर मिलने वाला चेहरा ही उसका प्रेम है।जल में उसका प्रतिबिंब ऐसा लगता है जैसे झील उसके ज़ेवरों से सजा हुआ है। उसका प्रेम करने का इरादा नहीं था पर उसका प्रेम अचानक हो जाता है। उसके महबूब की आँखें ग़ज़लों का ख़ज़ाना और कठिन

व्याकरण हैं। इतने सुंदर सुंदर बिम्ब 'शलभ' जी ने प्रस्तुत किए हैं कि मत पूछिए सिर्फ़ लुत्फ़ उठाइए-

वो कल जो बाम पे आई थी मिलने,
वही ख़ुशबू हमारी गुलबदन है।

झिलमिलाता अक्स पानी में तेरा,
झील भी पहने हुए ज़ेवर लगे।

नहीं सोचा था होगा इश्क़ हमको,
हुआ जो भी हुआ वो दफ़अतन है।

तेरी आँखें हैं ग़ज़लों का ख़ज़ाना,
बहुत मश्किुल ग़ज़ल का व्याकरण है

फिर ऐसा भी दौर मुहब्बत के सफ़र में आता है जब पहले सा कुछ नहीं होने की नौबत आ जाती है लेकिन उसके ज़ह्न से उसके रूह में बसी मुहब्बत के ख़ुमार की ख़ुशबू निकल नहीं पाती। वह पुरानी चिट्ठियों को तलाश करने की कोशिश करता है जिनमे उसके इश्क़ के राज समाहित थे। डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' के शेर मुलाहिजा हों-

जिससे कि गूँजती थी मुहब्बत फ़िज़ाओं में,
अब साज चाहते हैं वो सरगम नहीं रहे।

मैं अपने ज़ह्न से तुझको निकालूँ अब कैसे,
बसी है रूह में तेरे ख़ुमार की ख़ुशबू।

उस पुराने इश्क़ के पिनहाँ बहुत से राज़ थे,
अब कहाँ ढूँढ़ें 'शलभ' जादूभरी वो चिट्ठियाँ।

वह नींद की आगोश में इसलिए सोया रहता है कि उसकी पलकों पर महबूब के सपने जागे रहें। इश्क़ की सारी बाजियाँ हारने के बावजूद उसे इश्क़ करना प्रिय है। उसका मानना है कि अगर उसका हमसफ़र साथ होता तो वह जुदाई में इस तरह बर्बाद नहीं होता। बड़े अच्छे अच्छे अशआर कहें है डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' जी ने-

रात भर सोया रहा मैं नींद की आग़ोश में,
रात भर पलकों पे इक सपना मिला जागा हुआ।

इश्क़ में सब बाज़ियाँ हारीं मगर,
इश्क़ करना ही मुझे बेहतर लगे।

हाथ तेरा जो मेरे हाथ में होता साथी,
उम्र भर हिज्र में ऐसे नहीं बिखरा होता।

मोहब्बत में आज़माने से काम नहीं चलता। प्रेम के सारे कार्य अपनेपन से फलीभूत होते हैं। नदियों के बिना समुंदर के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती।बिगड़े हुए रिश्तों में भी कुछ न कुछ खुलापन रखने से बनने की उम्मीद बची हुई रहती है। अगर कोई भगवा रूप में किसी को लुभाने लगे तो कोई जीवन भर के लिए योगी बनने से नहीं हिचकता। 'खाप' जैसी दकियानूसी संस्थाओ के हस्तक्षेप पर प्रेमी का जोश चौगुना हो जाता है। यूं तो ज़माने में अलौकिक प्रेम के कई मिसाल हैं। लेकिन आजकल लव जिहाद की चर्चा बढ़ गई है जहाँ माशूक़ के इनकार को इनकार नहीं समझा जा रहा है फलस्वरूप प्रेम जैसे पावन शब्द को कलंकित करते हुए नृशंस हत्याएँ हो रही हैं-

नहीं फलती मुहब्बत आज़माने से कभी यारो,
मुहब्बत के तो सारे काम अपनेपन से चलते हैं।

समुन्दर जान ले अस्तित्व हैं उसका यही नदियाँ,
कहाँ होता वो, नदियों से अगर रिश्ता नहीं होता।

बहुत बिगड़े हुए रिश्तों में भी कुछ आस रहती है,
उसी धुँधली किरण की आस में मन को खुला रखना।

फिर से जो भगवा रूप में मुझको लुभाओगी,
फिर तो रहेगा मन मेरा जोगी तमाम उम्र।

तुम्हारी 'खाप' ने हमको बहुत औक़ात समझाई,
हमारे इश्क़ का पर हौसला भी चौगुना निकला।

समर्पित थी मुहब्बत में अलौकिक इश्क़ था उसका,
उसी मीरा को राणा जी तो दीवानी समझ बैठे।

'हाँ' नहीं होता है मतलब तो किसी 'इंकार' का,
दोस्तो है अर्थ तो इंकार का इंकार में।

इक दरिन्दे ने किए थे उसके टुकड़े,
ये कहानी मीडिया पर चल रही है।

"बूँद बूँद ग़ज़ल" में अनेक संदेश भी समाहित किए गए हैं मैं आपका ध्यान उस तरफ़ भी आकृष्ट करना चाहता हूँ। किसी के सम्मान में अगर कोई बात नहीं बढ़ाता है तो इसे उसकी नादानी नहीं समझी जानी चाहिए। सम्राट अशोक को भी कलिंग युद्ध की हार से यह ज्ञान हो गया कि हम प्रेम से ही किसी को जीत सकते हैं। गुरुनानक देव के साहिबज़ादों को दीवारों में ज़िंदा चुनवा देने के बावजूद अत्याचार के सामने उन्होंने सर नहीं झुकाया। अत: जरूरत है कि प्रेम का नया सूरज उगाकर तमस को दूर भगाया जाए। मुहब्बत वेश्याओं की अटारी नहीं है बल्कि उम्र भर की उपासना है। शे'र प्रस्तुत हैं-

तुम्हारे रास्ते से हट गया मैं एहतरामन क्या,
मेरी दानाई को तुम मेरी नादानी समझ बैठे।

प्रेम से ही 'जीत' पाएँगे दिलों को आप सब,
ज्ञान ये अर्जित हुआ 'सम्राट्' को संहार में।

झुक न पाए शीश वो ज़ुल्मो-सितम के सामने,
ज़िन्दा चिनवाए गए बेटे भी जब दीवार में।

जहाँ कल था वहाँ मैं अब नहीं हूँ,
यही तो रस्म है आवारगी की।

नया सूरज उगाओ अब तो यारो,
तमस को है ज़रूरत रौशनी की।

जी, ख़ुदा रहता नहीं है इनके भीतर,
पत्थरों की रह गईं हैं मूरतें सब।

मुहब्बत बन्दगी है उम्र भर की,
तवायफ़ का कोई कोठा नहीं है।

उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' के ग़ज़ल संग्रह **"बूँद बूँद ग़ज़ल"** में प्रेम अपने बहुआयामी अस्तित्व के साथ हर मोड़ पर अठखेलिया करते हुए मिल जाता है। हमें डॉ. 'शलभ' से ऐसे ही अनेक ग़ज़ल संग्रह की उम्मीद रखनी चाहिए। चलते चलते कुछ शे'र आपके हवाले किए जा रहा हूँ कि आप भी देखें इस सेवानिवृत प्रशासनिक पदाधिकारी ने ग़ज़ल के गुलिस्तान में क्या क्या गुल खिलाए हैं:

ज़ालिमों के सामने तो काम लीजे अक़्ल से,
सर रखें पहले सलामत क्या रखा दस्तार मे

गाँव के हर झूठ सच का साक्षी पीपल हुआ,
देवता अन्धे हुए, ओझा कवच-कुंडल हुआ।

जिस शजर ने उम्र भर दी धूप-छाँवों में पनाह,
हो गए पंछी ही अब तो उन बसेरों के ख़िलाफ़।

आदमी ही आदमी के काम आता है 'शलभ',
आदमी ही रास्ता है आदमी मंज़िल हुआ।

विख्यात समालोचक और ग़ज़लकार द्विजेंद्र द्विज की नज़रों में डॉ. विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ' की ग़ज़लें हमारे वर्तमान के अभिशप्त और सन्तप्त जीवन की संश्लिष्ट सच्चाइयों की अभिव्यक्ति के साथ-साथ मनुष्य की अदम्य जिजीविषा व जीवन के उल्लास के उत्सर्ग का गौरवगान भी हैं। एक फ़क़ीर की दुआओं जैसी अभिमंत्रित शायरी के विविध रंग शलभ' की शायरी को अभूतपूर्व बनाते हैं। एक सचेतक की भूमिका निभाते हुए इन ग़ज़लों को उन्होंने मानव कल्याण के लिए सम्पूर्ण परिवर्तनकामी चेतना के साथ रचा है। ये ग़ज़लें हमारे समय के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व धार्मिक परिवेश की नवीनतम प्रवृत्तियों की मुखर प्रतिध्वनि तो हैं ही, मानवीय सहनशीलता की सीमाओं के टूटने को उद्यत तटबन्धों की चेतावनी भी हैं। ये सारी ग़ज़लें इंसानियत के हक़ में दलीलें, फ़रियादें और दुआएँ हैं।

आलेख-रमेश 'कँवल'

ग़ज़ल संग्रह
श्वेतवर्णा
SHWETWARNA
तज कर चुप्पी
हल्ला बोल
रवि खण्डेलवाल

तज कर चुप्पी हल्ला बोल-रवि खंडेलवाल
बंद हैं जो रोशनी के द्वार उनको खोलिए

'तज कर चुप्पी हल्ला बोल' श्री रवि खंडेलवाल के ग़ज़ल संग्रह का नाम है। ग़ज़ल का एक मा'नी औरतों / प्रेयसी से बात करने के रूप में भी लिया जाता है। यानी नर्म नाज़ुक लहजे में महबूब के हुस्न की तारीफ़ करना, वस्ल की आरज़ू करना, उनकी जुदाई में अपने ग़म का इज़हार करना इत्यादि ही शुरूआती दौर की ग़ज़लों की ख़सूसियत होती थी। लेकिन हिंदी ग़ज़ल अनेक मरहलों को तय करती हुई उस मुक़ाम पर पहुँच गई है जहाँ इसमें समाज के दुख-दर्द की अभिव्यक्ति, मानव में मानव-तत्व की कमी पर हैरत और ऐतराज़, सियासत के रंग-ढंग, उसके जन विरोधी एवं ग़ैर कल्याणकारी स्वरुप का चित्रण शामिल होता जा रहा है। राजनितिक अवमूल्यन, भ्रष्टाचार का नया नया रूप, इंसान की बेबसी, सामर्थ्यवान लोगों का असमर्थ आम जनों का शोषण ऐसे उन्वान हैं; टॉपिक्स हैं जो **"तज कर चुप्पी हल्ला बोल"** ग़ज़ल संग्रह में आप के सामने सर उठाते हुए मिलेंगे। ऐसे अशआर ही आपका ख़ैर मक़दम करेंगे।

जन प्रतिनिधियों की मनमानी से बेज़ार जनता की भावनाओं को शब्द देते हुए शायर के चन्द अशआर मुलाहिजा फ़रमाइए-

था दिया विश्वास का मत, जिनको हमने
दे रहे हैं आजकल, धोखे पे धोखा

है नहीं मक़सद समस्या को करें हल
कर रहे पैदा समस्या पर समस्या

और इन परिस्थितियों में यह ख्याल भी ज़हन के फ़लक पर उभरता है:

वापसी का आपकी, अधिकार होता
इस क़दर जनमत नहीं लाचार होता

प्रशासनिक पकड़ के धराशायी होने एवं चरमराती हुई विधि व्यवस्था का चित्रण भी देखिये:

हो रही उन घर दुकानों में ही चोरी
जिन दरो-दीवार से थाने लगे हैं

घर से निकले थे भयमुक्त होकर सभी
लौटकर आये, देखा तो ताले न थे

दहशत का ऐसा आलम कोई भी कुछ न बोले
पूरी की पूरी बस्ती लगता है बेज़ुबां है

कोई मुझे बताए एक शख़्स जो वहाँ था
दंगे के बाद नंगा होकर गया कहाँ है

राहत वो बांटता है बस्ती जला-जला कर
जल्लाद इस सदी का जनता पे मेहरबां है

बेच कर सोये हैं घोड़े
वो कि जिनको जागना है

अब अँधेरे से क्या गिला शिकवा
जब उजाला ही छल गया यारो

धर्म और जाति के लफड़े नहीं होते तो कितना अच्छा होता-

धर्म के यदि जात के परचम न होते
आदमी को आदमी से प्यार होता

देश के आज़ाद होने के 75 साल बाद भी हम अपनी संस्कृति, वेश भूषा को अपना नहीं सके इस पर शायर का तंज़ देखिये-

हो गए आज़ाद अंग्रेज़ी हुकूमत से मगर
मुल्क में अंग्रेज़ियत की टाइयाँ बाक़ी रहीं

अब नई तालीम को पाकर सयाने
ईलु ईलु कर के चिल्लाने लगे हैं

पश्चिमी तालीम के पेशे-नज़र अब
घर का मुखिया घर का कोना हो गया है

देश विरोधी ताक़तें जब फिर सर उठाने लगे विदेशों में इसकी साज़िशें पनपने लगे और लाल क़िला पर दूसरा परचम लहराने का प्रयास होने लगे तो शायर व्यथित हो जाता है:

वो यक़ीनन मुल्क के ग़द्दार हैं जो
ग़ैर के परचम को लहराने लगे हैं

शायर देश के राजनितिक हालात से भी वाक़िफ़ है। आज कल के राजनितिक हालत किसी से छुपे हुए नहीं हैं। जहाँ विरोधी दल सरकार पर अपनी एजेंसियों के दुरुपयोग का आरोप लग़ाते हैं वहीँ सत्ता के लिए जन प्रतिनिधियों को होटलों में क़ैद कर रखना आम बात हो गयी है। झूठ के बोलबाला से कैसे कोई इनकार कर सकता है:

होने लगा है यारो सच्चे का फ़ेस काला
चारों तरफ़ है दिखता झूठे का बोलबाला

ई डी का रोल है अब सत्ता विरोधियों को
धमका डरा के मुँह पर उनके लगाना ताला

किडनैप करके बहुमत काबिज़ वो हो रहे हैं
सत्ता का खेल देखा हमने नया निराला

हो रही चर्चा नहीं किंचित सदन में
खेल खेला जा रहा रस्साकसी का

चलाता है दमन का चक्र लेकिन मीडिया के बल
मसीहा दीन दलितों का सदा ख़ुद को जताता है

लोकतंत्र में सशक्त और सबल विपक्ष आवश्यक होता है। लेकिन शायर विपक्षी दलों की अपनी डफली अपना राग को इंगित करते हुए मायूसी प्रगट करता है:

वो खा रहे हैं एकता की कसमें बारहा
हाथों में जिनके अपने अपने इश्तिहार हैं

जब हर तरफ़ आतंक का माहौल हो, ग़लत मानसिक प्रवृत्तियाँ सर उठा रही हों, महंगाई घर में डेरा डाले हुए हो तो शायर बेबस होकर अफ़सोस ज़ाहिर करता है:

अमृत का लेबल चिपका कर
बोतल में विष भर लाये हैं

रुपये का अवमूल्यन कर के
महंगाई को घर लाये हैं

पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण
आतंकी बादल छाये हैं

मिलावट का मंज़र देखिये:

दूध-घी-खोआ के जब-जब भी बढ़े हैं दाम 'रवि'
जम के शक्कर को मिलाया पास के हलवाई ने

काला धन का उल्लेख देखिये:

जिसे कहते हैं काला धन, बनाने में लगे हैं ये
जजों की नाक के नीचे, कमाने में लगे हैं ये

आदमी को समाज उसका अधिकार आसानी से नहीं देता है। इसलिए शायर उन्हें नसीहत देता है:

आप बढ़ कर छीन लें मिल जायेंगे
बैठकर अधिकार पाना है कठिन

खून को इतना उबालो
हाथ में पत्थर उठा लो

दहेज़ का दानव समाज को निगलता जा रहा है। लोग परेशान हैं इस से। इसलिए जब बेटियाँ सयानी होने लगती हैं तो पिता की चिंता का कारण बन जाती हैं:

भूख भी लगती नहीं अब, प्यास भी लगती नहीं
जबसे हमने सामने बेटी सयानी देख ली

उलझनों और परेशानियों की आँच में कौन नहीं सुलगता। लेकिन मायूस हो जाना तो इसका जवाब नहीं। यह शायर ही है जो मायूसी के दौर में प्रोत्साहन का दीप-स्तंभ बन जाता है। दिलों में उल्लास भरने के लिए कहता है:

डर के डर से बाहर निकलो
अब तो घर से बाहर निकलो

हाथ पर धर हाथ यदि बैठे रहे तो
वक़्त को यूँ ही सदा, खोते रहोगे

तज कर चुप्पी हल्ला बोल
कस कर मुट्ठी हल्ला बोल

बच कर जाने मत दे तू
छू कर ठुड्डी, हल्ला बोल

कौन उनकी राह का रोड़ा बनेगा
जो अटल विश्वास को लेकर चले हैं

मौन धारण कर नहीं कुछ भी तुझे मिल पाएगा
है अगरचे चाहिए हक़ रार कर तकरार कर

कर गुज़रने की तमन्ना ठान कर तो देखिये
आप की भी मुश्किलों का हर क़िला ढह जायेगा

ख़ुद के अश्कों को जिसने पिया ही नहीं
ज़िंदगानी को उस ने जिया ही नहीं

आदमीयत ही नहीं ज़िंदा रही तो दोस्तो
आदमी के पास में फिर क्या भला रह जायेगा

मुक़द्दर को क्यों दोष देता है पगले
तेरे कर्म का ही तुझे फल मिला है

देखिये तो ये अँधेरे आप ही की देन हैं
बंद हैं जो रौशनी के द्वार उनको खोलिए

मान कर प्याले में अमृत है भरा
रोज विष पीते रहोगे कब तलक

ढोल पीटा जा रहा है झूठ का
आप सच माने रहोगे कब तलक

जब रक्षक ही भक्षक बन जाँय तो शायर के मुंह से आह निकलती है:

छा गया हर सू अन्धेरा
क्या किया तुमने उजालो

बाद में पड़ताल करना
आग को पहले बुझा लो

जब उफन के आई तो टापू के टापू खा गई
ऐ समंदर हमने तेरी भी जवानी देख ली

आदमी अपनी बेबसी को याद करता है कि इतने बुरे दिन भी तो नहीं थे। क्या इसलिए हमारी माँगें नहीं मिल सकीं कि हमने प्रतिरोध के स्वर नहीं निकाले-

ज़िंदगी में ये माना उजाले न थे
थे अँधेरे, मगर ऐसे काले न थे

इसलिए हमको शायद किया अनसुना
ईंट पत्थर जो हमने उछाले न थे

इसलिए अपनी बेबसी का इज़हार वो यूँ करता है:

आंसुओं को पिया नहीं जाता
ज़िन्दगी को जिया नहीं जाता

बेखुदी में कहोगे जी लेंगे
होश में अब जिया नहीं जाता a

इस समाज में सच को समर्थन नहीं मिल पाता जबकि झूठ के पैरवीकार बेशुमार मिल जाते हैं:

सच का पैरोकार कोई सामने आया नहीं
झूठ के हक़ में हजारों लोग आगे आ गये

सत्य को रस्ता दिखाया द्वार का, दुत्कार कर
और, सीने से लगाया झूठ को, मनुहार कर

कोरोना काल के कुछ मंज़र भी रवि खंडेलवाल के इस संग्रह में उजागर किये गए हैं। कोरोना काल जब चिताएँ बुझती नहीं थीं मानो उत्सव मना रही हों। मौत एक व्यापार बन गया था। लोग आपदा को अवसर समझ कर सिर्फ़ धन अर्जन के मौक़े ढूंढते थे। सरकार मौत के आंकड़े छुपाने में मगन थी और अफ़सरान अपने चहेतों को चिता जलाने के ठेके दे दे कर मस्त थे:

उजालों से हुई है रात तक रोशन न पूछो कुछ
चिताओं ने भी ठानी है यहाँ उत्सव मनाने की

चलो अब मौत का व्यापार भी कर देख लेते हैं
ज़रा सी चाहिए इंसान को मोहलत बहाने की

बदलकर आपदा को आपने अवसर में दिखलाया
जिसे भी देखिए केवल पड़ी है बस कमाने की

कहाँ कितनी हुईं हैं आँकड़ा मौतों का बतलाएँ
लगी है होड़ संख्या को है कम करके बताने की

शामिल न हों हुजूम में, कोविड के वक़्त में
देखा है हश्र हमने भी यारो जमात का

बड़े निश्चिंत दिखते हैं हमारे मुल्क के हाकिम
चिताओं को जलाने के लिए भक्तों को ठेके दे

हर तरफ़ ही हर तरह की बंदिशें काबिज़ हुईं
आप ही मुझको बताएँ दाल किसकी गल रही

इसका अर्थ यह भी नहीं है कि शायर प्रेम तत्व से अपरिचित है। प्रेम मुहब्बत पर भी कई लाजवाब अशआर आपको इस संग्रह में मिल जायेंगे।

बेशक बनके सूरज निकलो, अच्छा है
मेरे घर से होकर गुज़रो, अच्छा है

बढ़ता है दुख, अंतर्मन में रखने से
अपने मन की कहलो सुनलो, अच्छा है

घर अन्धेरा देखकर वो लौट न जाएँ कहीं
एक दीपक द्वार पर मुझको जला आने तो दो

आप इसमें खो न जाना
याद का जंगल घना है

आइये ख़ुशियाँ मनाएँ
आँख ने आँसू जना है

आग नफ़रत की कैसे बुझेगी रवि'
प्रेम जल आपने तो पिया ही नहीं

ग़रीबों के लिए ग़रीबी एक अभिशाप से कम नहीं। दिन लाचार हो जाते है। सत्कार कोई करता नहीं। आदमी कोई उसे समझता नहीं:

कभी एक बच्चे-सा लाचार दिन
कभी एक बूढ़े-सा बीमार दिन

आजकल इस मुफ़्लिसी के दौर में
आपका सत्कार पाना है कठिन

अब समझते ही नहीं वो आदमी को आदमी
जब से उनके पास यारो चार पैसे हो गए

मुश्किलों पर मुश्किलें आईं हमारे सामने
पाँव पर अपने खड़े हम जैसे तैसे हो गए

ज़िन्दगी में ऐसा भी होता है कि मनुष्य के वश में कुछ नहीं रह पाता। बेबसी का आलम फुंफकार मारता है-

यारो ऐसा भी होता है
हम हँसते हैं दिल रोता है

कह लो जितना कहना है
आगे चुप ही रहना है

सब कुछ मैंने कह डाला
अब तुमको क्या कहना है

आँसू की तासीर न पूछो
अंगारों सा दहते आँसू

यहाँ पानी मांगो तो मिलता नहीं है
न मांगे लहू की नदी पा रहा हूँ

तुम कहोगे तुम्हारा सी देंगे
ख़ुद का दामन सिया नहीं जाता

इसे सिर्फ़ औपचारिकता नहीं कहिये तो क्या कहिये:

आपकी शुभकामना है
ये महज़ संभावना है

काँच का मंदिर बना है
और मंदिर पूजना है

पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता को इंगित करता शे'र देखिये:

पेड़ पौधों का नहीं आधार होता
साँस लेना भी यहाँ दुश्वार होता

शायर अपने हौसलों को सलाम करते हुए कहता है:

और होंगे जो चुप हो के ज़िंदा रहे
मैंने होंठों को अपने सिया ही नहीं

ज़ालिमों के हैं सौ-सौ ठिकाने यहाँ
और मज़लूम का इक ठिया ही नहीं

सच का साथ न छोड़ूंगा
चाहे जितने ताने दे

सुर में गायेगा इक दिन
जैसा भी है गाने दे

चुल्लू भर से काम चला
सबकी प्यास बुझाने दे

आप किसी ग़ज़ल का तसव्वुर बिना क़ाफ़िया के नहीं कर सकते। बेमज़ा हो जाता है। शायर ज़िन्दगी के दुःख तक्लीफ का सामना करते हुए उदास होकर कहता है:

ज़िन्दगी एक ऐसी ग़ज़ल दोस्तो
जिसमें सब कुछ मगर क़ाफ़िया ही नहीं

यह हमारे ऊपर है कि हम किसी बात में कितनी पोज़िटिविटी ढूँढ लेते

हैं। अगर हम किसी में बुराई ही ढूँढने लगे तो हम उससे सकारात्मक उर्जा कैसे प्राप्त कर सकेंगे:

बुराई अगर आप देखेंगे मुझमें
दिखेगी सदा ही बुराई-बुराई

शायरी दिल से होती। जज्बात के इज़हार का नाम शायरी है लेकिन शायर की मज़बूरी समझिये कि उसे शायरी के इल्म को उरूज़ का लिबास पहनाने में नाको चने चबाने पड़ते हैं। एक-दो दो-एक की मात्रा गणना में सर खपाना पड़ता है तब कहीं वो शायर बन पाता है:

एक-दो, दो-एक में उलझे रहे
शायरी को जो गणित तक ले गये

आज हम निखरे हैं सोने सा अगर
अनुभवों की आग में जमकर तपे

शायरी में हैं सभी उस्ताद 'रवि'
कोई ग़ालिब है तो कोई मीर है

इस दौर का वही आदमी सफल है जो सरल नहीं है। जिसे झूट, छल, कपट, मक्कारी में महारत हासिल है वही इस दौर का सफल इंसान है:

ज्ञान जिसको झूठ का छल का कपट का
आदमी इस दौर में वो ही सफल है

आखिर में एक प्यारी सी ग़ज़ल के चन्द अशआर पेश कर इस आलेख को विराम देता हूँ। निम्नलिखित अशआर में दुख, दर्द, सुख, बेबसी, हौसला, मज़बूरी सारी बातें उजागर हो गई हैं:

चोट खाकर भी, जान बाक़ी है
हौसला है, उड़ान बाक़ी है

सुख ने दिखलाई कब रुची मुझमें
दुख का अब भी रुझान बाक़ी है

दुख से पा ली निज़ात कैसे भी
दर्द का ख़ानदान बाक़ी है

अनमना सा है इसलिए दिन भी
रात भर की थकान बाक़ी है

अब तो बस ओढ़ने बिछाने को
ये ज़मीं-आसमान बाक़ी है

आशा है आपको ये अशआर पसंद आए होंगे और आप **"तज कर चुप्पी हाला बोल"** पढने का लोभ संवरण नहीं कर पाएँगे।मुझे उम्मीद है कि ये ग़ज़ल संग्रह ग़ज़ल व्योम में देदीप्यमान सितारा बन कर अपनी रश्मि से मोहित करेगा।

रमेश 'कँवल'

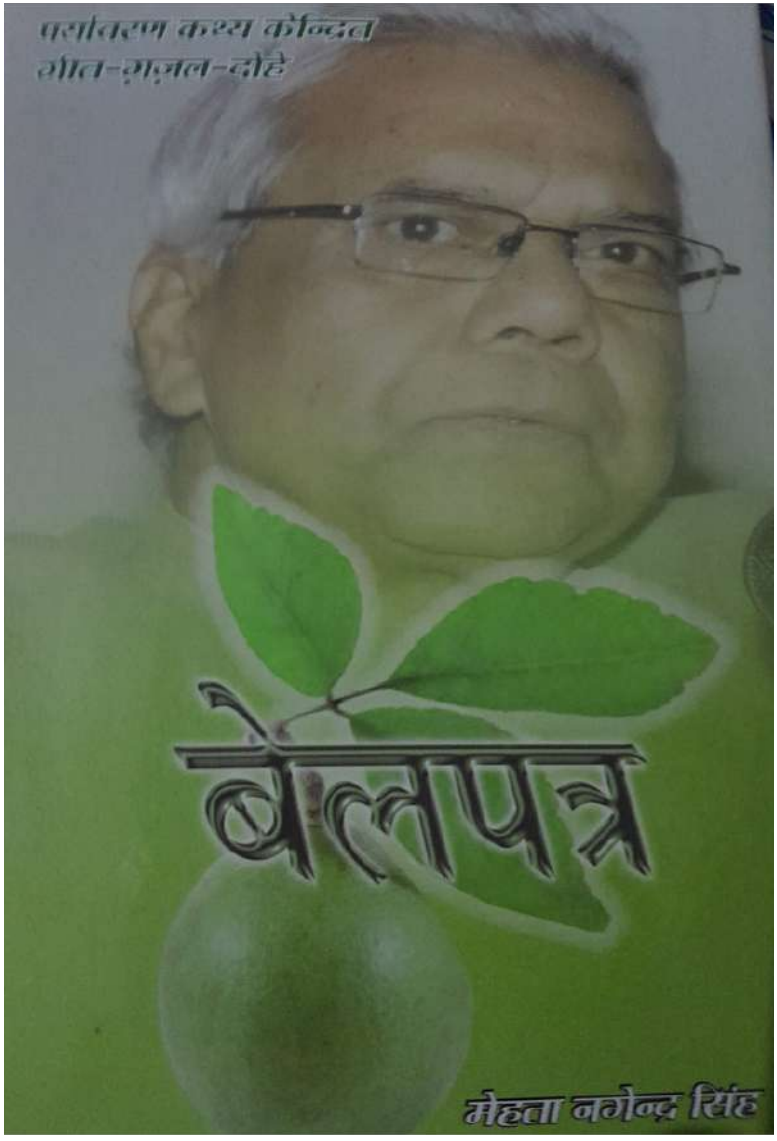

पर्यावरण कथ्य केन्द्रित
गीत-ग़ज़ल-दोहे
बेलपत्र
मेहता नगेन्द्र सिंह

डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह-पर्यावरण संरक्षण के लिए सतत प्रयासरत हरित मानव

विज्ञान के विकास और टेक्नॉलजी के सामर्थ्यवान होने के साथ ही मनुष्य के सुविधाजीवी होने की लालसा इतनी बढ़ गई कि नए नए शब्द शब्दकोश में बलात प्रवेश करने लगे। वैश्विक ऊष्मा या ग्लोबल वार्मिंग इक्कीसवीं सदी का बहु प्रचलित एवं समाज को अत्यंत प्रभावित करने वाला शब्द बन गया है। पहले जंगल, पेड़, पहाड़, नदी, झरने, बाग़-बग़ीचा वसुंधरा के सिंगार हुआ करते थे लेकिन धीरे धीरे इनका सौन्दर्य बिगड़ने लगा। पहाड़ काट कर सड़क, मकान, अट्टालिकाएँ खड़ी होने लगीं। जंगल काटकर दरवाज़े-खिड़कियाँ और तरह तरह के फर्निचर बनने लगे। बगीचे अपार्टमेंट में बदल गए। नदियों में कल कारखानों का मल निवेश होने लगा। शहरी वातावरण इतना प्रदूषित हो गया कि बादल भी अम्लीय वर्षा कराने लगे। खेतों में इतने खाद और केमिकल डाले जाने लगे कि उनकी उर्वरक क्षमता तहस-नहस हो गई।

इस परिदृश्य में पेड़ की चिंता कुछ मनीषियों की चिंता बन कर सर उठाने लगी। साहित्य पर्यावरण संरक्षण की पताका लेकर निकल पड़ा और कविता हरित वसुंधरा की ध्वजवाहक बन गई। अनेक सुविधाभोगी मनुष्य भी अपनी वातानुकूलित कुटिया से पर्यावरण संरक्षण की चिंता लिए समाज को जगाने चल पड़े। इन लोगों में केंद्र सरकार और राज्य सरकार के अनेक उपक्रमों से जुड़े एक भू वैज्ञानिक ने बिहार और देश का नेतृत्व किया। इस महामानव का नाम डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह है।

डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह का जन्म 22 जुलाई 1940 को मुंगेर के ग्रामीण परिवेश में हुआ था। इनका शुभ विवाह 29 मई, 1963 को डॉ. सुशीला राव के साथ हुआ है। जब ये अपने या अपनी संगिनी के कार्य से सन 2000 में मेरे कार्यपालक दंडाधिकारी, पटना के कार्यालय में आए थे तभी मेरा इनसे परिचय हुआ। उस समय इन्होंने मुझे हरित वसुंधरा पत्रिका भेंट स्वरूप दी। तभी से मैं

इनसे मिलता जुलता रहा हूँ। बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन में तो अक्सर इनके दर्शन हो जाते हैं।

डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह मूलत: भू वैज्ञानिक हैं। लेकिन पर्यावरण को निरंतर विकृत होने से बचाने के लिए इन्होंने साहित्य का चयन किया। ये कवि, कथाकार, ग़ज़लकार, लघु कथाकार सब बन गए। इनकी प्रमुख काव्य कृतियाँ निम्न लिखित हैं:

1. पेड़ की चिन्ता
2. कल का सूरज
3. बेलपत्र
4. बोनसाई
5. शजरनामा।

कुदरत का सरगम (गीत संग्रह)

हरित घास पर ग़ज़लें (ग़ज़ल-संग्रह)

धूप-हवा-पानी (दोहा-संग्रह)

इनकी गद्य कृति है-

1. हम और हमारा पर्यावरण (निबन्ध-संग्रह)
2. वृक्ष ने कहा (लघुकथा संग्रह)

पृथ्वी के लिए (कहानी-संग्रह) इनकी सम्पादित कृतियाँ हैं-

सभी साहित्य लेखन के केंद्र में पर्यावरण को हरित रखने की चाहत है, एक विधवा सी उजड़ती हुई वसुंधरा को हरा-भरा कर उसे सुहागन बनाने की ज़िद और जद्दो-जेहद है। इस पृष्ठभूमि में आप अन्य साहित्यकारों से अलग और विशिष्ट पहचान बनाए हुए हैं।

इनकी कृति बेलपत्र इस लिहाज से अनूठा है कि इसमें गीत, ग़ज़लों व दोहों की तीन अतिप्रचलित विधाओं में बड़े सलीक़े से मन मुग्ध करने वाली भाषा में प्रकृति प्रेमियों और साहित्य प्रेमियों के दिलों में उतरने का अनूठा प्रयास किया गया है।

गीत विधा की सारी खूबियों से सज्जित डा मेहता के प्रकृतिपरक गीत अति आकर्षक और हृदयग्राही बन पड़े हैं जिन्हें गुनगुनाए बिना कोई नहीं रह सकता-चाहे वह "वृक्ष-वंदना", "वसुंधरा" या "वृक्ष सहोदर" हो या "मेघ-अर्चना" या "विनाश की दस्तक"-सभी में इनके प्रकृति प्रेम और उसके प्रति अनन्य भक्ति भाव ही दिखाई देते हैं।लगता है, कवि के पास एकतरफ़ा काम रह गया है-प्रकृति की रक्षा, उससे प्यार-दुलार और उसी के लिए उपहार की गाथाएँ लिखना।

आइए इनके "वृक्ष-बंधु" शीर्षक गीत का अवलोकन करें-

"इक दिन हम इतिहास बनेंगे,
धरती का आकाश बनेंगे।
हम चंपा, कचनार बनेंगे,
तेजस में छतनार बनेंगे।
गाँव-शहर से दूर कहीं हम,
वन के फूल पलाश बनेंगे।"

पृष्ठ-39

एक अन्य गीत में कवि प्रदूषित शहरों के चेहरे को देखकर रुआंसा हो उठता है-

"धुआं-धुआं है शहर हमारा
रंग जमुनिया बना नजारा।
फूल चमन का है मुरझाया
स्याह बनी क़ुदरत की काया
दिन में सूरज लू बरसाता
गर्म हुई बरगद की छाया
प्रलय-नाश की दस्तक सुनकर
कांप रहा है शहर हमारा।"

पृष्ठ-41

शहर के साथ साथ गाँव में भी अब पहले सा प्राकृत प्रेम नहीं है-

"जाना गाँव, बताकर जाना
बदल गया है पता-ठिकाना।
पीपल-बरगद खड़ा नहीं है
किसने काटा, पता नहीं है
बचपन का मैदान नहीं अब
अन्न भरा, खलिहान नहीं अब
सूख गया पोखर का पानी
ग़ायब है सब मीन-मखाना।"

पृष्ठ-47

तो ग़ज़ल-पत्र के अंतर्गत ग़ज़लों के हरे-हरे 115 पत्तों के अवलोकन से मन आह्लादित हो उठता है

"अंधेरी निशा में सहर ढूंढ़ता हूँ
खड़ा रेत पर मैं लहर ढूंढ़ता हूँ।
दरकना नहीं ठीक ओजोन का अब
उसे पाटने का हुनर ढूंढता हूँ।"

पृष्ठ-91

मेरे सम्पादन में प्रकाशित इक्कीसवीं सदी के इक्कीसवें साल की बेहतरीन ग़ज़लें के पृष्ठ 323 पर प्रकाशित उनकी एक ग़ज़ल यहाँ प्रस्तुत करना चाहूँगा-

नहीं कर सकेगा प्रदूषण तबाही
शजर हैं हमारे हितैषी सिपाही

शजर की बदौलत नगर हैं सुरक्षित
शजर हैं तो है मौज में बादशाही

प्रदूषित हवा का असर भी बुरा है
भारी ज़हर से है सेहत की सुराही

खड़ा हर तरफ़ ज़हर का है हिमालय
इसे ढाहने में ही है वाहवाही

"बेलपत्र" का तीसरा पत्रांश है-'दोहा पत्र' जिसमें कवि ने अपने एक-से-एक ढाई सौ दोहों को जगह दी हैं जिनका सरोकार धरा, हरितिमा, पर्यावरण प्रदूषण आदि से है। आइए कुछ प्रभावित करने वाले दोहों की बानगी देखें-

मानव करता है अधिक, धरती का उपभोग।
दोहन का कारक यही, ऐसा है संयोग।।

जब-जब इसकी देह से, मिली रसायन खाद।
फसल अधिक उपजी मगर, खेत हुआ बरबाद।।

पेड़ कटे, जंगल घटा, धरती हुई उदास।
कैसे होगा अब यहाँ, पतझड़ में मधुमास।।

वसुंधरा विधवा हुई, उजड़े सारे खेत।
धान, चना के खेत में, लगी झलकने रेत।।

जलता जंगल देखकर, रहते क्यों सब मौन।
जीव-जंतु सब पूछते, आग बुझाते कौन।।

एक व्यक्ति दस पेड़ के, रोपण का अभियान।
इससे ही जंगल बचे, ऐसा कर अनुमान।।

एक बात बताऊँ। ये सिर्फ़ कविता ही नहीं करते हैं। हर अवसर पर पेड़ लगाते रहते हैं। मेरे डूप्लेक्स के सामने भी इनका लगाया हुआ नीम का पेड़ इस भीषण गर्मी में शीतल छाया देता है।

मैं इनके सुखद स्वस्थ जीवन की कामना करता हूँ। इनका वंदन करता हूँ और आत्मिक अभिनंदन करता हूँ।

स्नेहाकांक्षी
रमेश 'कँवल'

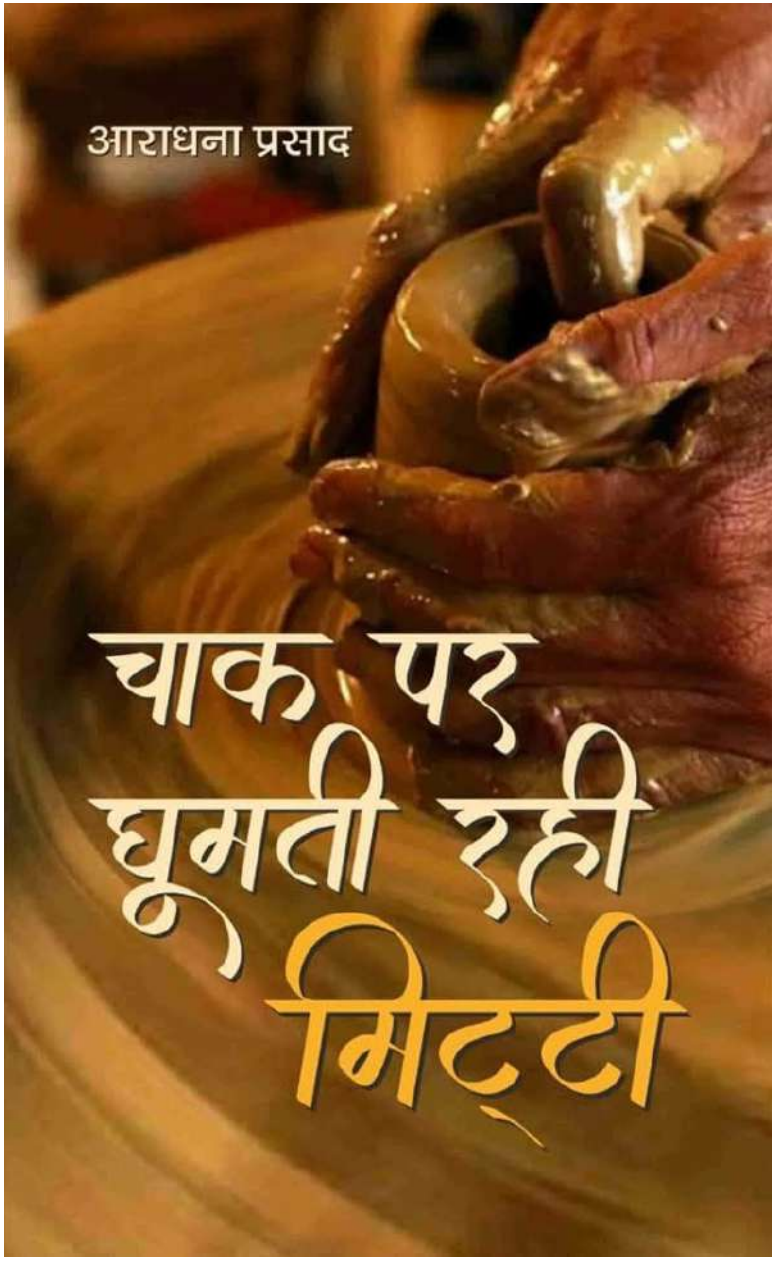
आराधना प्रसाद
चाक पर
घूमती रही
मिट्टी

चाक पर घूमती रही मिटटी-आराधना प्रसाद
इस दिल से निकलने में अभी वक़्त लगेगा

इक्कीसवीं सदी में ग़ज़ल पहले से कहीं और ज़्यादा लोकप्रिय होती जा रही है। बिहार की महिला ग़ज़लकारों में नारी स्वर का प्रतिनिधित्व करने वाली शाइरात में अनेक नाम ग़ज़ल व्योम में उभरते हैं। भाषा शिल्प, कथन विन्दु, कहन प्रभाव, ग़ज़ल लालित्य और जनमानस में ग्राह्यता के स्तर पर जिन नौ ग़ज़ल दुर्गा का नाम मेरे ज़हन में उभरता है उनमें डॉ. भावना, आराधना प्रसाद, डॉ. कविता विकास, डॉ. आरती कुमारी, ज्योति मिश्रा, डॉ. नूतन सिंह, अनीता सिंह, आरती आलोक वर्मा, और डॉ. नीलम श्रीवास्तव के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें कुछ ग़ज़लकारों के ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं: कुछ तैयारी में हैं। सबकी रचनाओं का आकाश नये नए कथ्य शिल्पांतरण में व्यस्त और मस्त है। उन्हें एक चाक की तलाश है जिस पर वे घूम घूम कर यह प्रतीक्षा कर सकें कि क्या उन्हें दिलपसंद ज़िन्दगी नसीब हो पाती है या नहीं। इसी बात को वनस्पति विज्ञान की परास्नातक पाटलिपुत्र निवासिनी आराधना प्रसाद जब शे'र में ढालती हैं तो उनके पहले ग़ज़ल संग्रह के नाम की ख़ुशबू फ़िज़ा को मुअतर कर देती है:

इक नई ज़िंदगी की चाहत में
चाक पर घूमती रही मिट्टी

जी हाँ हर शायर की दिली तमन्ना होती है कि उनका मजमुआ मंज़रे-आम पर आ जाय और वे साहबे-दीवान कहलायें। ग़ज़लों का मजमुआ ही ऐसी ज़मीन की मिटटी होती है जो उनकी शायरी की उड़ान का अंजाम होता है

उड़ लो जितना यहीं तो आओगे
कह रही है ज़मीन की मिट्टी

ग़ज़ल की एक परिभाषा में इसे औरतों से बात करने का हुनर भी बताया गया है लेकिन जब औरतें ही बात करने पर आतुर हो जाएँ तो क्या कहना-

झील पर यूँ चमक रही है धूप
जैसे पानी की हो गई है धूप

आप की याद आ गई हम को
चाँद पर अपना घर बनाते हुए

आज मैं आपको पटना की मशहूर और खुश्गुलू शायरा आराधना प्रसाद की ग़ज़लों के पहले मजमुआ चाक पर घूमती रही मिट्टी के बेहतरीन अशआर पेश करने की कोशिश करता हूँ:

ग़ज़ल, गीत, नज़्म या कविता का मूल तत्व प्रेम है और इसे कोई भी शायर नज़र अंदाज़ नहीं कर सकता:

आराधना भी इस प्रेम अनुभव से अछूती नहीं हैं। कुछ शे'र मुलाहिजा फ़रमाइए:

उतरा जब अपना चाँद दबे पाँव सहन में
उस रात चाँदनी का मज़ा हमसे पूछिये

ज़िक्र कैसे बयाँ हो उस पल का
उसकी आँखें थीं और मेरी आँखें

आपकी इक झलक की हसरत में
चाँद भी आसमान से निकला

सतरंगी ख़्वाहिश है मेरी
दिल में इक तितली रक्खी है

कौन था उस पहाड़ के पीछे
किसकी ख़ातिर रुका रहा कोहरा

एक प्रेमिका के दिल की ख़्वाहिश बयान करता हुआ शे'र देखिये:

दिल में उसको बसा के रक्खूँगी
छोड़ कर वो अगर न जाये कहीं

और आरज़ू:

बात दफ़्तर की छोड़ आओ वहीं
घर में आओ तो मुस्कुराते हुए

मायूसी होती है जब कोई वादा कर के नहीं आता

कैसे गुज़री वो रात सावन की
वो नहीं आए आ गई बारिश

और लोगों का ताना मजीद मायूस कर देता है

वो क़यामत तलक न आएगा
जिसके पीछे हुई है पागल तू

प्रिय के बिना हर चीज़ अधूरी लगती है लेकिन जब वस्ल हो जाता है फिर कहना ही क्या

आपके बिन थी उदासी हर तरफ़
आप आये मुस्कुराई ज़िंदगी

लेकिन जब प्रिय साथ नहीं होते हैं तो उनकी जुदाई अखरती है।

विरह वेदना के चन्द स्वर देखिये:

मैं उसे झाँकती थी खिड़की से
मेरी आँखों में झाँकता कोहरा

मुझ से मिलती थीं, बात करती थीं
पहले ऐसी न थीं तेरी आँखें

वो ही ओझल था मेरी आँखों से
एक पल मुझसे जो जुदा न हुआ

ऐसा क्या है तुम्हारी आँखों में
तुमको ढूँढ़ें गली-गली आँखें

और फिर प्रेमी को चुनौती देने का अंदाज़ देखिये:

जाते हो निकल कर मेरे कूचे से तो जाओ
इस दिल से निकलने में अभी वक़्त लगेगा

हाँ, मैं इक कागज़ की कश्ती ही सही
पार फिर भी जाऊँगी, तुम देखना

किसी ने पूछ लिया, चाहते हो कब से उन्हें
तड़प के बोला दिले-बेक़रार, मुद्दत से

फिर उसका डर भी कितना दिलकश है:

रात है और डर रही हूँ मैं
चांद छत पर उतर न जाये कहीं

और महबूब से गुज़ारिश का अंदाज़ देखिये

एक मुद्दत से मैं अधूरी हूँ
आके कर दे मुझे मुकम्मल तू

हम बनें सूर्य तुम बनो पृथ्वी
छोड़ना मत परिक्रमा करना

मैं अब भी बाख़ुदा ये कह रही हूँ
अगर तुम हो तो कोई ग़म नहीं है

प्रेमी और प्रेमिका के अंतर को स्पष्ट करते हुए चन्द अशआर देखिये:

तुम क्षितिज पर सूर्य हो,
मैं धूप हल्की गुनगुनी हूँ

तुम किनारों-से हो जोगी
और मैं चंचल नदी हूँ

ऐसा नहीं है कि चाक पर घूमती हुई मिटटी में सिर्फ़ प्रेम और रुमान के अशआर ही हैं। सामजिक विषमता, तंत्र की विद्रूपता, व्यवस्था के हाथों मज़बूर होना, नौजवानों का संकल्प, दुनिया को ही बदल देने का जज़्बा, क़ुदरत का उसूल, ग़ुरूर, रिटायरमेंट, इत्यादि मौजूं पर भी आराधना ने अशआर कहे हैं:

सामजिक विषमता पर बड़े अच्छे अशआर मुलाहिजा हों:

शहर सारे हो गये बेनूर-से
रंग में बस राजधानी रह गई

एक दीया लड़ रहा तूफ़ान से
आंधी का हर एक पेचो-ख़म गया

मेरी हसरतों के दिये बुझ रहे हैं
कोई आ के देखे हवा का तमाशा

छत टपकती रही ग़रीबों की
और अमीरों को भा गई बारिश

जब व्यवस्था के हाथों कोई मज़बूर हो जाए उस पल का मंज़र देखिये:

पंख जब कट गये परिंदों के
शाख़ पर छटपटा के बैठ गये

थरथराती हुई लौ लड़ी देर तक
आँधियों को उजाले खटकते रहे

हवाएँ छू के कह दो ख़ैरियत तुम
लिफ़ाफ़े पर यहाँ पहरा बहुत है

उनसे लड़ता वो कब तलक आख़िर
ग़म हज़ारों थे, दिल अकेला था

बिहार और देश के अधिकाँश भाग में बाढ़ आती है और प्रत्येक वर्ष आती है। मनुष्य की त्रासदी को उकेरती आराधना जी का ये शे'र देखिये

यहाँ तक हो गया था पानी-पानी
ये पानी की निशानी कह रही है

बाढ़ की विभीषिका के बाद नौजवानों की मन:स्थिति देखिये:

हमने चाहा है कि कुछ करके दिखायें सबको
बस यही सोच के हम घर से कमाने निकले

शुरू में जब एक नौजवान तंत्र की ख़ामियों से दो-चार होता है तो वह दुनिया को बदल देने की सोचता है लेकिन शाइरा अपने तजुर्बे से उसे आगाह करती है:

फ़िलहाल ये काफ़ी है कि तुम ख़ुद को बदल लो
दुनिया को बदलने में अभी वक़्त लगेगा

क़ुदरत का उसूल है कि सूरज के उगते ही लोग काम पर निकल पड़ते हैं और शाम की दुल्हन के विदा होते ही अपने घरौंदे की तरफ़ लौट पड़ते हैं। पशु-पक्षी भी यही करते हैं और इंसान भी। आप भी महसूस करिए:

पंछियों की है सिफ़त इन्सान में
शाम को घर लौटकर आते हैं सब

शाम को झील की तरफ़ देखो
वस्ल करते हैं आफ़ताब के रंग

किसी के भी दिन एक समान नहीं रहते। इसलिए अपने पर घमंड और ग़ुरूर नहीं करना चाहिए। इसे कौन नहीं जानता पर इसे कौन मानता है:

पहले जैसी नहीं रहीं आँखें
वक़्त बदला, बदल गईं आँखें

डूबता सूरज जहाँ से कह गया
सरबुलंदी से उतर जाते हैं सब

रूप क्या है, शाम को ढल जाएगा
डूबते सूरज को जा कर देखिये

दुनिया एक सराय है कौन यहाँ ता उम्र ठहरा है इस बात को कितने दिलकश अंदाज़ में बताया गया है:

धर्मशाला ही तो है सारा जहाँ
आके सब जाते हैं ठहरा कौन है

कुछ लोग अपनी कमियों पर ध्यान नहीं देते लेकिन दूसरे की कमियाँ निकलने में माहिर होते हैं। आराधना जी को इसका पता है:

वो जो अपनी कमी से थे ग़ाफ़िल
मेरी कमियाँ गिना रहे थे मुझे

माँ पर चन्द अशआर कहे बगैर कोई कहाँ रह पाता है। आराधना जी का तर्जे-बयाँ देखिये:

माँ के पहलू में सो गया बचपन
फिर भी ख़्वाबों में आ गई तितली

साफगोई, सादा दिल, सादामिज़ाज
दिल में अम्माँ की निशानी रह गई

ख़ैरियत छोड़ ज़माने भर की
मेरी अम्माँ तू बता कैसी है

और माँ के साथ ही पुश्तैनी घर भी याद आता है:

जान लो पुश्तैनी है घर यह
दादा की कुरसी रक्खी है

जब हम एक संकल्प लेते हैं तो उसके पूरे होने की कामना करते हैं:

एक दिन वो गगन को छू लेगा
एक पंछी उड़ा दिया हमने

कभी कभी तो आदमी अपनी उपलब्धियों से भी डर जाता है:

इतनी बुलन्दियों पे हमें लेके पर गए
अपनी उड़ान देख के हम ख़ुद ही डर गए

आदमी ज़िन्दगी की जद्दो-जहद और रंगीनियों से उब कर रिटायरमेंट के बाद अपने मूल निवास को लौटता है तो वहाँ उसे कोई पहचानने वाला नहीं मिलता:

मुद्दत के बाद लौट के जब अपने घर गये
पहचानते थे लोग जो, जाने किधर गये

लोग पेड़ काटे जा रहे हैं। प्रदुषण का स्तर बढ़ता जा रहा है क्योंकि

अहमियत पेड़ की बताएँ क्या
पास इनके ही ऑक्सीजन है

ज़िम्मेदारी हमारी है यारो
अपना गुलशन हरा-भरा करना

अब ज़िन्दगी पर मुख्तलिफ़ अंदाज़ के चन्द अशआर देखिये:

तुझको गुज़ार देने की चाहत में ज़िंदगी
इक रोज़ यूं हुआ के जहाँ से गुज़र गए

एक धन होता है, संतोष का धन
जो कमाया नहीं जा सकता है

एक पत्ता जो शाख़ से टूटा
समझो वो ख़ानदान से निकला

जब से माना रब की मर्ज़ी है यही
ज़िंदगी से मेरी हर इक ग़म गया

ढलते सूरज ने भी क्या ख़ूब करिश्मा देखा
शाम ने ओढ़ी बदन पर जो गुलाबी चाहत

आराधना जी ने अंग्रेज़ी के शब्दों का भी निहायत ही ख़ूबी से प्रयोग किया है:

फूल से भँवरे का कनेक्शन है
किस क़दर तितलियों को टेंशन है

मिल न पाए अगर तुम्हें मंज़िल
राह बदलो, यही सजेशन है

ज़ख्म देते हुए वो कहते हैं
बोरोप्लस भी है, लो ये कॉटन है

इस प्रकार मुझे उम्मीद है कि आपने आराधना प्रसाद के ग़ज़ल संग्रह चाक पर घूमती हुई मिटटी के चन्द अशआर मुलाहिजा कर उनकी शायरी का लुत्फ़ उठाया होगा। इनकी ग़ज़लों का कला पक्ष जितना सुन्दर है उतना ही कमनीय उनका शिल्प पक्ष भी है। एक से एक बिम्ब और उपमा को धूप, बारिश, कोहरा, ख़ुशबू, मिटटी, तितली, मछली, आँखें जैसे चुनौतीपूर्ण रदीफ़ों में कही गयी ग़ज़लों में आत्मसात कर लेना वाकई उनके सिद्धहस्त ग़ज़लकार होने की दलील पेश करता है।अगर हम ऐसा न भी कह सकें कि

ऐसे एहसास को बयाँ कीजे
शेर में आए मीर-सी ख़ुशबू

तो भी इतना कहने के लिए हम पर कोई पाबंदी नहीं है कि

गंगा के जल-सी एक मुक़द्दस ग़ज़ल है वो
पाकीज़ा शायरी का मज़ा हमसे पूछिये

मुझे उम्मीद है आराधना प्रसाद के ग़ज़ल संग्रह चाक पर घूमती हुई मिटटी को ग़ज़ल के गगन के सितारे हाथो-हाथ लेंगे। मैं उनके स्वस्थ जीवन और यशस्वी होने की कामना करता हूँ।

रमेश 'कँवल'

दिल बंजारा
ग़ज़ल संग्रह
हिमकर श्याम

दिल बंजारा-हिमकर श्याम
हम मतवाले हैं साहब

ग़ज़ल का उद्भव अरबी दुनिया में हुआ। ईरान में इसने ख़ूबसूरत अंदाज़ अपनाए। इतराना और इठलाना सीखा। फिर इसकी नज़ाकत से प्रभावित हो कर हिंदुस्तान ने शफ़क़त और बरकत के पैरहन पहनाए। लगभग 3 शताब्दी तक दकन, दिल्ली और अवध में इसका अहतराम होता रहा।हिन्दी भाषा में भी इसे नवाज़ा जाने लगा। 50 वर्ष पहले दुष्यंत ने इसे हिन्दी में इस ताम-झाम के साथ पेश किया कि यह हिन्दी में खुशी-खुशी स्वीकृत कर ली गई। पहले ग़ज़ल में सिर्फ़ प्यार-मुहब्बत, होंठ और गाल, आँखों और ज़ुल्फ़ों, शराब जाम और साक़ी की बात होती थी लेकिन व्यवस्था के विरुद्ध, सरकारी नीतियों के खिलाफ, सामाजिक अन्याय के विरुद्ध कोई बात नहीं करता था। दुष्यंत ने यह मिथक तोड़ा और उनके पीछे अनेक शायर ग़ज़ल के तेवर बदलने में मशग़ूल हो गए। अब बेरोज़गारी की धूप, सामाजिक अत्याचार के बादल, मानवता के कष्ट की शाम और ग़रीबों के अंतहीन दुखों की रात भी ग़ज़ल के मौजूं बनने लगे। अब ग़ज़ल आंचलिक भाषाओं यथा भोजपुरी, मैथिली, वज्जीका, अंगिका इत्यादि में भी कही जाने लगी। ग़ज़ल अखबारों, पत्रिकाओं विशेषांकों की शोभा बढ़ाने लगी। अब तो ग़ज़ल विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों में भी शामिल की जाने लगी है।

ग़ज़ल में शिल्पगत अनुशासन के बावजूद विचारों का कोई बंधन नहीं है। प्रत्येक शे'र अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखता है। प्रत्येक शे'र में अलग-अलग भावों, विचारों, अनुभूतियों, अनुभवों को अभिव्यक्त किया जा सकता है। कथ्य और भाव के स्तर पर स्वतंत्र होने के कारण हर शे'र का अलग रंग उभर कर आता है। ये अलग-अलग रंग ग़ज़ल को इंद्रधनुषी शोभा देते हैं; यही ग़ज़ल का सौन्दर्य है। दो मिसरों या पंक्तियों में ऐसी बात कह देना कि वह पाठक या श्रोता के दिल में जगह बना ले यह ग़ज़ल में ही संभव है। ग़ज़ल के प्रत्येक शे'र के

भीतर एक छोटी सी कविता मौजूद होती है।

हिमकर श्याम ग़ज़ल की जमीन पर नई फ़सलें उगाने में प्रयासरत हैं। लगभग 25 वर्षों से एक असाध्य रोग से संघर्षरत रहने वाले हिमकर की ग़ज़लों में बला का असर है। आप रांची विश्वविद्यालय से वाणिज्य और पत्रकारिता और जनसंपर्क में स्नातक हैं। प्रभात खबर और दैनिक जागरण के संपादकीय विभाग से सम्बद्ध रहने वाले श्री हिमकर श्याम अब स्वतंत्र पत्रकारिता से जुड़े हुए हैं। दिल बंजारा-हिमकर श्याम का पहला ग़ज़ल संग्रह है। आप ने ग़ज़ल में प्यार, प्यार के इज़हार, आरज़ू पर्यावरण, सियासत, बेबसी, दुश्मनी, तरक़्क़ी, वक़्त, हिदायत, नसीहत आदमी, आज का दौर, जवानी, मुफ़लिसी हौसला, अदालत इंसाफ़ इत्यादि को अपना विषय बनाया है। लेकिन इस नौजवान शायर के यहाँ प्यार और प्यार का इज़हार ख़ूबसूरती के साथ मिलता है कुछ शे'र देखें-

मेरे दिल में थी बस तिरी चाहत
आरज़ू और कोई थी ही नहीं

मैंने तुझको कहाँ नहीं ढूँढा
यार तेरी ख़बर मिली ही नहीं

इश्क़ से थी हयात में लज़्ज़त
ज़िंदगी बाद तेरे जी ही नहीं

हू-ब-हू आप सा है वो चेहरा
और आदत भी आपकी सी है

कितनी अलग कशिश है निगाहों में यार की
दुनिया की भीड़ में भी वो सबसे जुदा लगे

शायर अपनी मज़बूरीयों का मंज़र भी पेश करता है-

क्या कहें, कैसे कहें, कुछ भी समझ आता नहीं
बंद हो जाती ज़ुबाँ है उस परी के सामने

उन्हें कैसे बताऊँ हाल दिल का
वो रहते हैं हमेशा हड़बड़ी में

आशिक़ों की कुछ खास अदाओं और ताक़त का बयाँ करते हुए चंद अशआर मुलाहिजा फ़रमाइए-

इश्क़ में ख़ामोश रहती है ज़ुबाँ
आशिक़ों ने बात कर ली आँख से

मय-कदे की क्या ज़रूरत है हमें
उसने देखा है नशीली आँख से

निगाहों से मिलीं जब से निगाहें
नई रंगत भरी है शायरी में

कहते हैं कि जब कोई किसी को याद करता है तो हिचकिया आती हैं-

किसी ने याद किया आज मुझको शिद्दत से
खड़ीं हैं साथ मिरे हिचकियाँ गवाहों में

रूठने और मनाने की स्थिति बनने पर एक शे'र देखिए-

ज़रा सी बात पर रूठे हुए हैं किस क़दर वो
चलो इक बार फिर उनको मना कर देखते हैं

अगर पुरानी डायरी सामने आ जाए तो उस परिस्थिति का शे'र देखिए-

खुल गये हैं अतीत के पन्ने
आज बैठे हैं डायरी ले कर

प्यार में बहुत लोगों को मनचाही मुरादें नहीं मिल पाती है। बेबसी उनका मुक़द्दर बन जाता है। इस मौज़ूं पर चंद अशआर मुलाहिजा फ़र्माइए-

उड़ा के नींद आँखों की गया जो
मेरे ख़्वाबों में अब आता नहीं है

निगाहों में वही चेहरा अभी तक
सिवा उनके कोई भाता नहीं है

मुद्दतों से प्यासी है दिल की नदी
और आँखों में है पानी क्या करें

अश्क आँखों में उम्र भर आए
उनको आना न था मगर आए

मेरी आवाज़ उस तक न पहुँची कभी
बात मेरी सुनी-अनसुनी रह गयी

लोग रिश्ते सभी तोड़ कर चल दिए
मेरी आँखों में बहती नदी रह गयी

हमारी आँख के आँसू न सूखे
चले आए नये ग़म फिर रुलाने

लेकिन जब वो देखता है कि सिर्फ़ मुझ पर ही बेबसी के बादल नहीं छाए हुए है तो वह बेसाख्ता कह उठता है-

जी रहा उम्मीद पर हर आदमी
है सभी की इक कहानी क्या करें

और इक तंज देखिए-

जिसके चर्चे हैं बे-वफ़ाई के
वह मिरा इम्तिहान लेता है

हर व्यक्ति की कुछ तमन्नाएँ, कुछ आरज़ू होती है। हिमकर श्याम की ख़ूबसूरत आरज़ू है-

मिटाना हर बुराई चाहता हूँ
ज़माने की भलाई चाहता हूँ

लकीरों से नहीं हारा अभी मैं
मुक़द्दर से लड़ाई चाहता हूँ

जो निगाहों से दूर रहता है
मेरे दिल का मकीन हो जाए

शायर ने देश की सियासत पर भी कलम चलाई है-

अपने चेहरे पे चढ़ा कर चेहरा
आज हमने भी सियासत कर ली

माहौल है ख़राब, नज़ारे हैं बदनुमा
कैसा हुज़ूर आपने मंज़र बना दिया

तारीकियाँ, तबाहियाँ, ज़ुल्मो-सितम, बला
कब तक रखेंगे मुल्क को बीमार देखिए

जिस ने मेरा मकाँ जलाया था
अब वही अश्क भी बहाता है

उड़ गई नींद हुक्मरानों की
देख शाहीनबाग़ का मंज़र

कभी-कभी ऐसा होता है कि जो किसी आंदोलन का झण्डा उठाता है वह किसी इनाम की लालच में अपने लक्ष्य से भटक जाता है-

यूँ बग़ावत की तहरीर मिटती रही
चंद सिक्कों में बिकते रहे रहनुमा

आदमी को सबसे पहला प्यार उसकी माँ से मिलता है और इस प्यार कोई मोल नहीं होता। हिमकर श्याम ने इस ग़ज़ल संग्रह का प्रारंभ ही माँ की स्तुति से किया है-

दिल की बातें पढ़तीं माएँ
दर्द भले हम लाख छुपाएँ

रहती हरदम साथ दुआएँ
हर लेती सब कष्ट बलाएँ

नाम कई एहसास वही है
इक जैसी होती सब माएँ

फीके लगते चाँद सितारे
माँ के जैसा कौन बताएँ

सारी पीड़ा हँस के सहती
कर देती माँ माफ़ ख़ताएँ

माँ का रिश्ता सबसे प्यारा
रब से ऊपर होतीं माएँ

ममता का कोई मोल नहीं
कैसे माँ का क़र्ज़ चुकाएँ

आपने महसूस किया होगा कि माँ के प्रति उनकी कितनी श्रद्धा है।माँ पर 2 शे'र और प्रस्तुत हैं-

कई रिश्ते हैं इस दुनिया में लेकिन
मिरी अम्मा कोई तुझ-सा नहीं है

कौन 'हिमकर' है बड़ा माँ-बाप से
उनके अहसानात मैं भूला नहीं

तरक़्क़ी

यूं तो देश बहुत तरक़्क़ी कर रहा है लेकिन इस तरक़्क़ी पर हिमकर श्याम के तंज देखिए-

मुल्क में ख़ूब 'हिमकर' तरक़्क़ी हुई
बेकसी, बेबसी, मुफ़लिसी रह गयी

कहीं बर्बाद होता हर निवाला
किसी के थाल में रोटी नहीं है

ठिठुर कर मर गया कोई सड़क पर
मगर अख़बार की सुर्खी नहीं है

इस तरक़्क़ी की गवाही दे रही थीं झुग्गियाँ
इसलिए तो सामने दीवार ऊँची कर गया

पर्यावरण

पर्यावरण पर भी शायर परेशान है। दो शे'र प्रस्तुत है-

काटिए मत हर इक शजर ऐसे
धूप में सब के काम आता है

कहाँ तितलियाँ हैं, हुए गुम परिंदे
फ़ज़ाओं को ऐसी सज़ा किस ने दी है

वक़्त

वक़्त किसी का नहीं होता एक पल में राजा को रंक बना देता है।

आदमी को चाहिए कि वक़्त के साथ बदलना सीखे। शे'र देखिए-

नाम, शोहरत, गुमान लेता है
वक़्त सब छीन छान लेता है

वक़्त के साथ न 'हिमकर' ने बदलना सीखा
वक़्त के साँचे में ढल जाते तो अच्छा होता

आदमी

आदमी और इंसान की फ़ितरत के मुतल्लिक शायर ने कुछ बेहतरीन शे'र प्रस्तुत किए हैं-

आदमी है उसूल का पक्का
सबसे लड़ने की ठान लेता है

कौन देता गवाहियाँ हक़ की
कौन सच्चा बयान लेता है

साफ़गोई की बुरी आदत थी
बे-सबब सबसे अदावत कर ली

इंसानियत का रोज़ जनाजा निकालकर
हैवानियत के बीज यहाँ बो रहे हैं लोग

चेहरे हैं गर्द-गर्द नहीं इसका कुछ ख़याल
हाँ, अपने आइने को बहुत धो रहे हैं लोग

ख़ुशियाँ तलाशते हैं गुनाहों की भीड़ में
अपना ज़मीर बेच अभी सो रहे हैं लोग

दुश्मनी

और दुश्मनी पर एक लाजवाब शे'र देखिए-

चंद मिनटों में ही जल गए घर के घर
आग तो बुझ गयी, दुश्मनी रह गयी

हिदायत

जो भी सच्चा शायर होता है वो दुनिया को कुछ न कुछ अनुदेश, इन्स्ट्रक्शन हिदायत देता है और इसमें हिमकर श्याम भी आपको निराश नहीं करते-

उँगलियाँ जो उठाता है सब की तरफ़
रू-ब-रू उसके भी आइना कीजिए

इस नये दौर का है तक़ाज़ा यही
साथ दुनिया के 'हिमकर' चला कीजिए

हर घड़ी क्या नसीब से शिकवा
ज़ीस्त को ख़ुश-गवार कर लेना

ज़रा सय्याद से बचना परिंदों
चला है जाल ले कर फिर फँसाने

नसीहत

शायर कुछ सीख कुछ नसीहत देने से भी पीछे नहीं रहते। और ये सारी नसीहतें बड़े काम की हैं-

अपनी किस्मत से बढ़कर, मिला है किसे
क्या मिला ख़ूँ जलाकर घुटन के सिवा

ख़ुदी में यहाँ लोग मशग़ूल मिलते
जिधर देखिए ख़ुद-नुमाई बहुत है

हक़-बयानी है उसकी फ़ितरत में
झूठ बोले तो आइना कैसे

फ़र्क़ अच्छे बुरे का न वो कर सका
उसने देखा न कुछ पैरहन के सिवा

हौसला

हौसला पर भी 2 शे'र पेशे-ख़िदमत है-

'हिमकर' ख़ुशी ने छोड़ दिया साथ क्या हुआ
पर ग़म को मेरा साथ निभाना है दूर तक

बाजुओं में दम अभी 'हिमकर' बहुत
क्या मुक़द्दर से शिकायत दोस्तो

आज का दौर

आज का दौर कैसा है। कोई अच्छी सूरत नज़र नहीं आती। दोस्त हों या दुश्मन सभी चेहरा पर नक़ाब डाले रहते हैं। अगर कोई मुहब्बत करता है तो उसे मात मिलती है। नफ़रत मिलती है। कैसा ज़माना है कि किसी का किसी से संबंध ही नहीं।हर तरफ़ मज़हब मज़हब का झगड़ा है। तल्ख़ियाँ ही तल्ख़ियाँ हैं। सच बेबश है, झूठ का बोलबाला है, बदी के आगे नेकियों की नहीं चलती। शहर अजनबी लगता है कौन क्या है कुछ पता नहीं चलता। अगर सड़क पर किसी के साथ कोई दुर्घटना हो जाए तो लोग उसे मौत के हवाले छोड़ कर चले आते हैं। हिन्दु-मुसलमान तो मिल जाते हैं लेकिन ढूँढने से भी आदमी नहीं मिलता। देश में ख़ौफ़ का ऐसा माहौल बन गया है कि कोई सच और उचित बात बोल ही नहीं पाता। लोग ख़ुद में सिमटते जा रहे हैं और सारे रिश्ते बिखरने

को बेबस हैं। अब दोस्त के नाम पर कोई भी यहाँ नहीं है। सब जात और धर्म में सिमट गए हैं। हिमकर श्याम ने अपनी पीड़ा निम्न शे'रों के माध्यम से व्यक्त की है। आप भी मुलाहिजा फ़र्माइए-

शहर भी कमाल का, लोग भी कमाल के
यार हों, रक़ीब हों सब मिले नक़ाब में

इश्क़ की बिसात पर मात ही मिली सदा
नफ़रतें मिली हमें प्यार के जवाब में

ज़माना है कैसा ज़रा सोच 'हिमकर'
किसी का किसी से नहीं राब्ता कुछ

मज़हबी नफ़रतें फिर अयाँ है यहाँ
दरमियाँ तल्ख़ियाँ आज के दौर में

झूठ का है बोलबाला, सच दिखे बेबस यहाँ
नेकियाँ टिकती कहाँ हैं अब बदी के सामने

काम उसके न आईं कभी नेकियाँ
सोचता जो रहा हर किसी के लिए

अजनबी शहर है हर शख़्स नया लगता है
कौन है, क्या है ज़रा हमको बताते रहिए

वह सड़क पर लड़ रहा था मौत से
छोड़ आये सब उसे मरता हुआ

कोई हिन्दू, कोई मुस्लिम यहाँ पर
न मिलता ढूँढने से आदमी है

ख़ौफ़ का माहौल ऐसा बन गया
अब न होती हक़-बयानी मुल्क में

सिमटते जा रहे हैं लोग ख़ुद में
सभी रिश्ते बिछड़ते जा रहे हैं

अब दोस्तों के नाम पे कोई नहीं यहाँ
मज़हब में बँट गया कोई ज़ातों में खो गया

मुफ़लिसी

ग़रीबों की स्थिति का क्या मार्मिक चित्रण हिमकर ने किया है-

सोया तमाम रात बिछा कर ज़मीन को
अपनी थकन को ओढ़ के चादर बना दिया

न्याय और विधि-व्यवस्था

आजकल बिना फ़रियाद सुने फ़ैसला होने लगा है। यहाँ तक कि गुनाह साबित नहीं होने पर भी सज़ायें मिलने लगी हैं। वहीं कुछ लोगों पर तो लाख ग़लतियाँ करने के बावजूद कोई इल्ज़ाम तक नहीं आया।इसलिए लोग उनको अपनी व्यथा सुनाने से कतराने लगे हैं जिनके पास दर्द दूर करने का इलाज न हो। सारे सिपाही तो नेताओं की सुरक्षा में ही तैनात हैं तो आम आदमी की हिफ़ाज़त कैसे हो; आप भी चंद बेहतरीन अशआर का लुत्फ उठाइए-

हो न पाया गुनाह जब साबित
मिल गई मुझको ये सज़ा कैसे

मेरी फ़रियाद तो सुनी न गई
कर दिया उसने फ़ैसला कैसे

कभी कोई इल्ज़ाम उन पर न आया
ख़ता पर भी उनको मिली वाह-वाही

हाले-दर्द-ओ-ग़म सुनाएँ क्या उसे
पास जिसके दर्द का मरहम न हो

फ़क़त लीडरों में है उलझा सिपाही
भला कैसे होगी हिफ़ाज़त किसी की

हिमकर श्याम को ग़ज़ल की समझ है। वे इसके व्याकरण से परिचित हो गए हैं। उर्दू अल्फ़ाज़ का धड़ल्ले से प्रयोग करते हैं। नए नए बिम्ब और उपमाओं को अपनी शायरी में समेटने में माहिर है। उनका पहला ग़ज़ल संग्रह उनके द्वारा भविष्य में ग़ज़ल में नई नई संभावनाएँ तलाश करने के प्रति आश्वस्त करता है। माँ शारदे उनकी लेखनी को इस क्षेत्र में सफल और यशस्वी होने का वरदान दें। इस आलेख का समापन उन्हीं के एक शे'र से कर रहा हूँ-

आख़िर कब तक एक जगह पर यह टिकता
दिल बंजारा हम मतवाले हैं साहब

अनंत शुभकामनाओं सहित

पटना,
कार्तिक शुक्ल 3 संवत 2082
24 अक्टूबर, 2025

रमेश 'कँवल'
मोबाईल 8789761287
ई-मेल-rameshkanwal78@gmail.com
वेबसाईट www.rameshkanwal.com

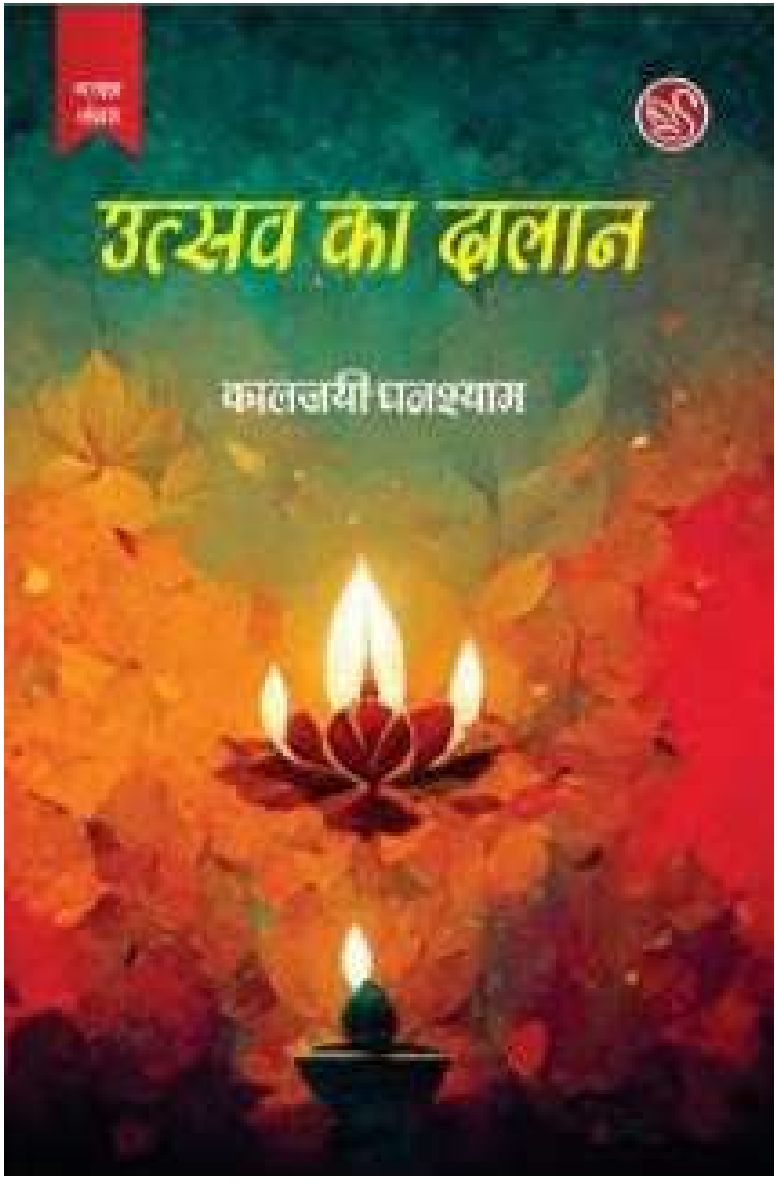
उत्सव का ढलान
कमलजयी घनश्याम

उत्सव का दालान-कालजयी घनश्याम ग्रामीण सुगंध की शहरी ग़ज़लें

ग़ज़ल आज मस्ती के दौर से गुज़र रही है। हिन्दी ग़ज़ल और उर्दू ग़ज़ल के झगड़े विराम प्राप्त हो गए हैं। गीत, कविता से भी ज्यादा लोकप्रिय यदि कोई विधा हो गई है तो वह ग़ज़ल है। यह सभी के प्राथमिकता क्रम में शीर्ष पर है। आंचलिक भाषाओं में भी इसे चाहा और सराहा जाने लगा है।भोजपुरी, ब्रज, अवधि, मगही, अंगिका, वज्जीका इत्यादि भाषाओं में उर्दू ग़ज़ल के तौर पर रूप शृंगार होने लगा है। यह बात अलग है कि उर्दू ग़ज़ल का विषय, विचार वस्तु से परे इन ग़ज़लों ने अपनी सीमा निर्धारित कर ली है। औरतों से गुफ्तगू से चलकर हिन्दी में कही जाने वाली ग़ज़लें प्रेम शृंगार से परे मानवीय समस्याओं, सामाजिक बुराइयों, खेत-खलिहान, किसान और सरहदों की हिफ़ाज़त में घर से दूर रहने वालें जवानों तक से बात करने लगी हैं। अब ग़ज़ल में देश के राहबरों राजनेताओं ढोंगियों, पाखंडियों की बातें भी होने लगी है। हिन्दी ग़ज़ल का कैन्वस इतना विशाल हो गया है कि तकनीकी युग और अंतरिक्ष की यात्रा करने से भी परहेज नहीं करता। ग़ज़ल एक करिश्माई विधा बन गई है जिसके दो मिसरों में सारी दुनिया का ज्ञान, सारी संवेदनाएँ, जीवन की अनुभूतियाँ और दिलो-दिमाग़ के अनुभव समाहित किए जा रहे हैं। आज ग़ज़ल अनेक भारतीय भाषाओं पर छाई हुई है।

जब ग़ज़ल इतनी ख़ूबसूरत हो जाए तो उसे चाहने वालों की तादाद बढ़ना लाज़िमी है। चाहे कोई घर में रहे या सरहदों पर फ़ौज में आप इससे प्रेम करने से दूर नहीं रह सकते। आज हम फ़ौज से VRS लेकर सेवा निवृत होने वाले सीमा सड़क संगठन के फ़ौजी कालजयी घनश्याम के ग़ज़ल संग्रह **"उत्सव का दालान"** के संदर्भ में चर्चा करेंगे। इस फ़ौजी को भी ग़ज़ल ने अपने हमराह कर लिया। देखते देखते ये इतनी ग़ज़लें कह गए कि उनका ग़ज़ल संग्रह आपके हाथों में है। लेकिन अपनी पहचान-एक फ़ौजी का परिचय देने से ये रुक नहीं सके:

सिर्फ़ रिश्ता निभाते हैं घर से
सरहदों पर मकान है मेरा

देश के दुश्मनों पर हैं नजरें
और कोई निशाना नहीं है

वतन पर हो गए क़ुर्बान सैनिक
उन्हें करना नमन, गुणगान करना

और एक सैनिक किसी हक़ की बात पर किसी से भी टकरा सकता है:

बात हक़ की जो कभी आए अगर तो
आदमी क्या मैं किसी से रार कर लूँ

अशोक 'अंजुम' का एक शे 'र है-

बड़ी मासूमियत से सादगी से बात करता है
मेरा किरदार जब भी ज़िंदगी से बात करता है

कालजयी घनश्याम के ग़ज़ल संग्रह में किसानों, मजदूरों, मज़लूमों, नेताओं, प्रशासन पुलिस समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार की बातें बड़ी बेबाकी से की गई हैं। किसी भी सियासी मजमे की बात करते हुए वे कहते हैं कि आज के राहबर (लीडरान-नेता) जनता को फंसा कर कैसे अलग हो जाते हैं। शे 'र देखिए-

ग़लत राह पर डाल कर
अलग राहबर हो गया

जब वह सड़कों पर नेताओं को लाव-लश्कर के साथ देखता है तो उसे कोफ्त होती है जलन होती है-

जलन होती अज़ीमुश्शान से जब
मैं उनका लाव लश्कर देखता हूँ

वह देश की क़ानून व्यवस्था के बुरे हाल से परेशान है।उसकी समझ में नहीं आता कि जब देश में सरकार है तो फिर इतने गुंडे मवाली क्यों हैं। सड़कों पर

मॉब लिंचिंग क्यों हो रही है।पुलिस के सामने ही क़त्ल का साहस कोई कैसे कर सकता है। कैसे शहर हैं ये? जो क़ानून का मज़ाक बना के रखे हुए हैं वे चैन से हैं। जो शरीफ़ हैं वे गिरफ़्तार हो जाते हैं। दबंग लोगों के आगे शरीफ़ लोग कितनी बेबसी से जीने को मज़बूर हैं। क्यों इतनी चुस्त-दुरुस्त प्रशासनिक व्यवस्था के बावजूद राहज़नी होती रहती है। घनश्याम के शे'र देखिए-

राज गुंडा मवाली करेंगे
देश में फिर ये सरकार क्यों है

भीड़ है मॉब लिंचिंग पे हावी
यूँ प्रशासन भी लाचार क्यों है

पुलिस के सामने ही क़त्ल हो रहा है अब
तुम्हारे शहर का दस्तूर क्या निराला है

कानून से जो खेलें वो सब तो मज़े में हैं
जो शख़्स है शरीफ़ गिरफ़्तार हो गया

गुज़ारा है बड़ा मुश्किल शरीफ़ लोगों का
दबंग चेहों का ही आज बोल-बाला है

चप्पे चप्पे पे पहरा लगा था जहाँ
क्यों उसी राह में रहज़नी हो गई

फिर वह ख़ुद समाज पर कटाक्ष करते हुए कहता है इन अराजकतावादियों को हम क्यों इतना संरक्षण देते हैं? क्यों उन्हीं लोगों को समाज की सुरक्षा में लगा देते हैं जो कल तक मुंह छुपाये फिरते थे? जिन पर देश-समाज की रक्षा का भार था उन नेताओं और पुलिस से ही अब डर क्यों लगने लगा है? घनश्याम की रचना धर्मिता देखिए।

गुंडा-मवाली जेल में कैसे रहें
उनके ज़मानतदार हैं चारों तरफ़

कल मुँह छुपाए फिरते थे जो ख़ौफ़ से
अब वे ही चौकीदार हैं चारों तरफ़

रक्षक भक्षक बन जाए तो कौन बचाए
डर क्यों लगने आज लगा खद्दर ख़ाकी से

घनश्याम की शायरी में ग़रीबों की व्यथा को भी शे'र का लिबास पहनाने का प्रयास किया गया है। कहीं तो कोई अच्छे अच्छे भोजन से तृप्त हो रहा है तो कहीं दाल रोटी भी नसीब नहीं। ग़रीबी ज़माने में बड़ी जुर्म बन गई है जिसे सारी ख़ताएँ ग़रीबों के सर मढ़ दी जाती हैं। ग़रीब दो जून की रोटी के लिए अपना गाँव घर छोड़ कर शहर आए हुए हैं। कुछ मिलने की उम्मीद में रैलियों में शामिल हो रहे हैं। उनकी घरवालिया टूटे फूटे छप्पर की याद दिलाती हुई मड़ई की मरम्मती की याद दिलाती है-

दूध दही मेवा मिसरी खाये कोई
रोटी दाल ने मुफ़्लिस को तरसाया है

जुर्म इफ़्लास था ज़माने में
मुफ़्लिसों की ही सब ख़ता निकली

रोटी मिले दो जून की उसकी जुगाड़ में
घर बार छोड़ शहर में आए हुए तो हैं

कहीं कुछ मिले बस इसी लोभ लालच
ये रैली में बेसुध चले जा रहे हैं

मड़ई अपनी टपक रही है
अबकी बरस पिया छत डालो

पर्यावरण की दुर्दशा से कौन परिचित नहीं लेकिन आवाज़ उठाने के लिए तो ग़जलकार ही हैं। शहर की जलवायु इतनी खराब है फिर भी लोग देहातों की स्वच्छ आबोहवा छोड़ कर शहरों में आते है। किसी फलदार पेड़ को सिर्फ़ पत्थर ही नसीब होते हैं।पानी जब झील सरोवरों, नदियों में था तो उसे प्रदूषण की मार झेलनी पड़ी। किसी ने उसे स्वचछ रखने का प्रयास नहीं किया अब वह बोतलों में बंद होकर बिकने लगा है। घनश्याम भी कहते हैं-

शहर की है बुरी इतनी आबोहवा
लोग क्यों आते रहते हैं देहात से

मिला है उसे सिर्फ़ पत्थर सभी से
फलों से लदा ख़ुशनुमा इक शजर है

मोल नहीं था जब पानी था झील नदी में
बोतल में आया तो महंगा बिकता पानी

घनश्याम अपनी शायरी को माँ शारदे, ईश्वर और गुरु की कृपा मानते हैं उनकी इच्छा है कि कभी उन्हें राधा कृष्ण के रूप में प्रभु के दर्शन हो जाए-

कृपा हो गई जिनपे मां शारदे की
वो महफ़िल में सुरतान से खेलते हैं

मेरे ऊपर हुई नज़रे इनायत
गुरू की मेहरबानी लिख रहा हूँ

दिया 'घनश्याम' ने मुझको बहुत कुछ
है रब की मेहरबानी लिख रहा हूँ

ज़िंदगी में काश! ऐसा भी कभी हो
राधिका-घनश्याम का दीदार कर लूँ

ये इस जगत के लिए सत्य है कि जब तक आपके पास धन हो तो सभी आपकी पूजा सत्कार करते है। ये सभी के लिए सही है चाहे हम हों या आप। घनश्याम ने इसे अपने ग़ज़ल शिल्प में कितने लाजवाब अंदाज में ढाला है-

धन रहा तो आरती सबने उतारी
देवता मैं और थे सारे पुजारी

आज जो ख़ुशियों में हैं वो कल न होंगे
ये कहानी हो तुम्हारी या हमारी

आज कल मीडिया एवं प्रचार माध्यमों में सनसनी फैलाने वाले तत्वों का तड़का लगा कर TRP बढ़ाने वाले अंदाज में समाचार परोसा जाता है। घनश्याम का लहजा देखिए-

मिर्च और कुछ मसाला लगाया गया
न्यूज़ फिर कुछ बड़ी सनसनी हो गई

इतना सब होने के बावजूद प्रेम आज भी ग़ज़ल की आत्मा में रचा बसा हुआ है। कोई भी शायर अपने को प्रेम मुहब्बत की भावनाओं से अलग नहीं रख सका है।

आज भी औरतों का स्वरूप, उनकी काया का सौन्दर्य, उनकी लुभावनी देहयष्टि मानव मन में हलचल मचा देता है उन्हें आकर्षित करता है। आप कह सकते हैं कि यह मानव जीवन का मूल आधार है। सरहदों पर रहने वाला सैनिक को उसका घर उसकी भार्या उसके अपने बेहद अज़ीज़ लगते है। आइए हम कालजयी घनश्याम की ग़ज़लों में इस प्रेम तत्व की तलाश करें।बड़े ही लुभावन और दिलकश अशआर मुलाहिजा फ़रमाइए-

मशग़ला मेरा शायरी है अभी
दिल की फ़ितरत में आशिक़ी है अभी

लबो-ज़ुल्फ़ पर गीत मैं लिख रहा हूँ
नई रहगुज़र पर हमारा सफ़र है

इश्क़ की धूप निगहबान रही
लज़्ज़ते-यार में क्या-क्या न किया

आप सुनते हैं 'घनश्याम' दिल की कहाँ
अब भला और फ़रमाइशें क्या करें

आइए बैठिए मेरे पहलू में अब
प्यार का प्यार से कुछ सिला दीजिए

घनश्याम की शायरी में सादगी बहुत स्पष्ट रूप से उजागर होती है। सादगी ख़यालों की हो या भाषा या शिल्प की। इनके शे'र अद्भुत होते हैं। आइए हम उम्मीद करें कि हमे आगे और भी बेहतर शायरी देखने को मिलेगी क्योंकि

दिलों पर दस्तखत 'घनश्याम' की है
ग़ज़ल हरदम नफ़ासत से कहेगा

कालजयी घनश्याम के ग़ज़ल संग्रह उत्सव का दालान के प्रकाशन पर मैं उन्हें हार्दिक बधाई देता हूँ। माँ हँसवाहिनी उन पर हमेशा अपनी कृपा बनाए रखें।

एवमस्तु!

पटना,
महालया, 2023
14 अक्टूबर, 2023

रमेश 'कँवल'
878 976 1287

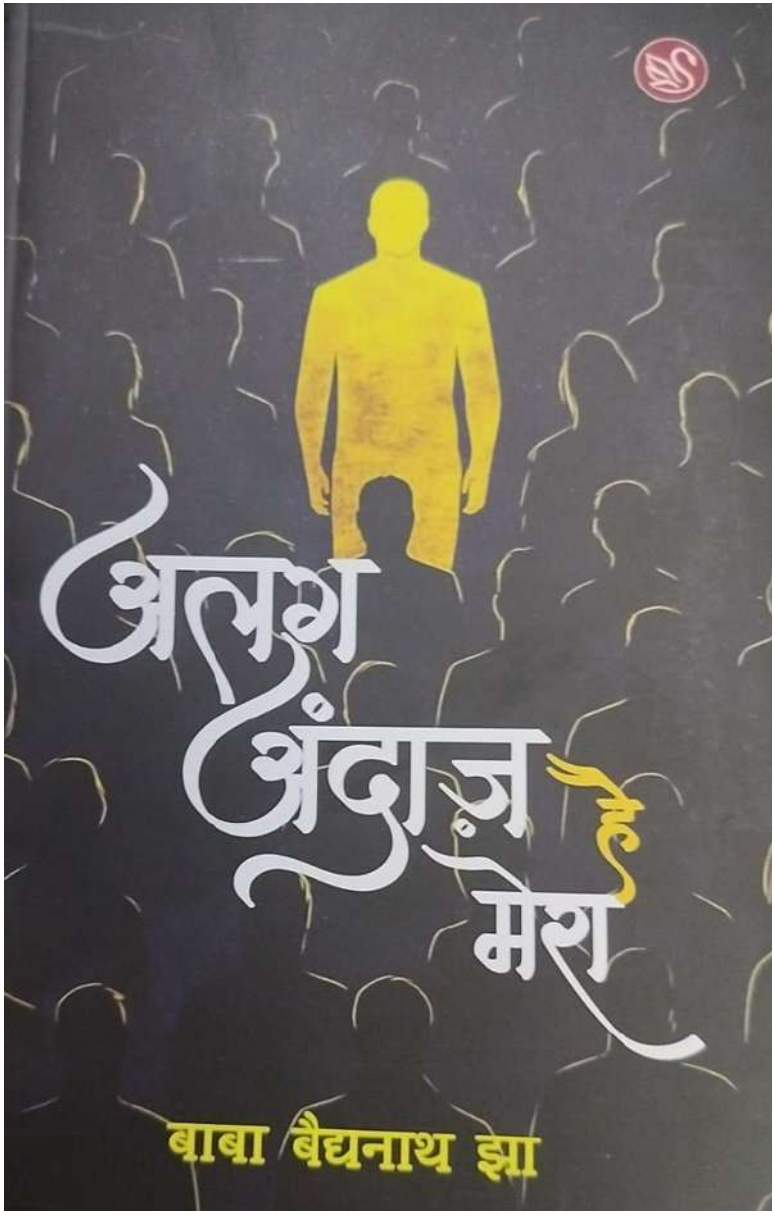
अलग अंदाज मेरा
बाबा बैद्यनाथ झा

अलग अंदाज़ है मेरा को उजागर करती ग़ज़लें- रमेश 'कँवल'

ग़ज़ल की दीवानगी आज सर चढ़ कर बोल रही है। पहले ग़ज़लें सिर्फ़ उर्दू और फ़ारसी ज़ुबान और अदब की ज़ीनत हुआ करती थीं लेकिन अब ग़ज़लों की मक़बूलियत इतनी बढ़ गई है कि इसे सभी ज़ुबान के शायरों /कवियों की सराहना मिलने लगी है। ब्रज, अवधी, भोजपुरी, मैथिली, अंगिका, वज्जीका सहित तमाम आंचलिक भाषाओं में भी ग़ज़लें कही जाने लगी हैं। हिन्दी में तो वर्षों से ग़ज़लें कही जाती थीं। ये और बात है कि विगत 50 वर्षों में हिन्दी में ग़ज़ल कहने वालों की तादाद बेतहाशा बढ़ी है।

उर्दू में ग़ज़ल का अर्थ औरतों से बात करने के संदर्भ में लिया जाता था। महबूब, प्रेयसी के सौन्दर्य वर्णन, नख-शिख के चित्रण से अलग कुछ सोचा ही नहीं जाता था। जाम शराब, साक़ी सुरा मदिरा सुरबाला के बीच ही ग़ज़लें सीमित रहती थीं। लेकिन आज उर्दू के साथ साथ हिन्दी साहित्य में भी ग़ज़लों की परिभाषा बदल चुकी है। इसकी व्यापकता का अंदाज़ा इसी से लगाया जा सकता है ग़ज़लों ने आस पास के सभी मौजूं को अपने में समावेशित कर लिया है। अपने पर दरबारी होने का ठप्पा इसने मिटा दिया है। पर्यावरण, समाज, सामाजिक कुरीतियाँ, तकनीकी परिवेश, राहबरों का छलावा, बेरोज़गारी का दंश, महंगाई, भ्रषटाचार सभी इसके दायरे में आ गए हैं।

बाबा वैद्यनाथ झा, मिथिलांचल में पूर्णिया के सशक्त ग़ज़लकार हैं। इन्हें शासकीय सेवा का अनुभव प्राप्त है। ये साहित्य की सेवा लगभग 40 वर्षों से कर रहे हैं। मैथिली में इनका प्रथम ग़ज़ल संग्रह 'पहरा इमान पर' 1989 में प्रकाशित हुआ। लेकिन हिंदी ग़ज़ल संग्रह **"जाने अनजाने न देख"** को प्रकाशित करवाने में इन्हें 2018 तक इंतज़ार करना पडा। इनकी काव्य साधना अनवरत चल रही है।आपके हाथों में **"अलग अंदाज़ है मेरा"** इनकी 36 वीं कृति है।

बाबा वैद्यनाथ झा, राष्ट्रवादी भावनाओं के कवि हैं। सामाजिक परिवेश को परिष्कृत करने की कामना रखते हैं। 2014 के बाद देश में उदित राष्ट्रवादी विचारों के पोषक हैं। ऐसा नहीं है कि इन्होने प्रेम-मुहब्बत को अपने शे'रों में नहीं ढाला है लेकिन देश के हालात इनके काव्य सृजन का पथ आलोकित करते रहे हैं:

अब मुहब्बत की ग़ज़ल ही आप बाबा मत कहें,
आज चर्चा है ज़रूरी देश के हालात की

उनकी अभिलाषा है:

मुल्क की रोज़ ही तरक़्क़ी हो,
एक ही ख़वाब एक चाहत है।

तिरंगा रोज़ फहरेगा बहुत ऊँचा सितारों तक,
बढाकर देश को आगे हमें जन्नत बनाना है

देश आगे बढ रहा है,
विश्वगुरु बनता रहेगा।

और ये सपने उनके पूरे होंगे इसका उन्हें पूरा विश्वास हो गया है क्योंकि

फ़रिश्ता आ गया हर काम होगा।
जहाँ में देश का अब नाम होगा

शेर बन कर दहाड़े डरे चीन भी,
मुल्क करता उसी पर अभी नाज़ है

हैं विराजित हुए राम तो जल्द ही,
अब दिखेगा यहाँ राम का राज है।

नववर्ष की शुभकामनायें वे अलग अंदाज़ में देते हैं-

ज़िन्दगी है हमें चार दिन की मिली,
साथ मिलकर बिताएँ नये साल में

ग़ैर कोई नहीं सभी अपने,
रोज़ सबको गले लगाएँ हम।

पर्यावरण के प्रति वे सजग हैं। लोगों को सार्थक सन्देश दे रहे हैं-

जानलेवा हवा चल रही आजकल,
पेड़ हर दिन लगाएँ नये साल में।

समाज में माँ-बाप के प्रति संतान की उपेक्षा बहुत खटकती है। वे उन्हें नसीहत भी देते हैं। उन्हें समाज के वेश-भूषा और पहनावे के बदलते ढंग से बहुत पीड़ा का अनुभव होता है-

बदतमीज़ी कर रही है आज की औलाद जब,
कुछ नहीं माँ-बाप करते यह शरारत देखकर

ख़ूब सेवा करो रोज़ माँ-बाप की,
है बड़ा तीर्थ काशी मदीना नहीं।

आज कुछ बेशर्म होकर घूमती हैं लड़कियाँ,
देखकर नज़रें घुमा लें आप ही लज्जा करें।

मौज-मस्ती के लिए कछ लोग आते रोज़ ही,
शाम को सजता यहाँ पर हुस्न का बाज़ार है।

वे आज के रहबरों, राजनेताओं के चरित्र को उजागर करते हुए कहते हैं-

मैं निठल्ला नहीं बैठता हूँ कभी,
झुनझुना हाथ में मत थमाएँ मुझे।

वायदे कर अंत में
आप देते झुनझुना

वे नयी पीढ़ी को नसीहत देते हुए कहते हैं-

दोस्त बाबा न एक है उसका,
वक़्त जिसका खराब रहता है।

छिपाता रहा है ग़लत जो कमाई,
सज़ा तो मिलेगी, नहीं वह बचेगा।

काम होंगे अगर सभी अच्छे,
ज़िन्दगी में बहार हो जाए।

सदा साथ देता बुरे का ज़माना,
भले लोग केवल छले जा रहे हैं।

पिलाते रहे दूध हम आँख मूंदे,
कई साँप घर में पले जा रहे हैं।

आज नयी पीढ़ी ज़िन्दगी शुरू करते ही क़र्ज़ के चक्कर में पड़ जाती है। घर-फ्लैट, कार, इलेक्ट्रॉनिक गज़ट्स, फ़ोन फ्रीज़ इत्यादि लोन पर लेकर अपनी ज़िन्दगी खुशहाल बनाना चाहती है। उन्हें कवि महोदय का सन्देश है-

लाख हों जरूरतें,
तुम नहीं उधार लो।

ग़ज़ल का मूल तत्व प्रेम है। अपनी ग़ज़लों में बाबा वैद्यनाथ झा ने शालीनता से इस प्रेम को निभाया है-

है बड़ा मौसम सुहाना,
आज मत दूरी बढाओ।

जो खता पहले हई थी,
माफ़ कर दो भूल जाओ।

हो गयी है जब मुहब्बत,
उम्र भर इसको निभाओ।

क्योंकि

आपके नाम पर हमेशा ही,
जान अपनी निसार करते हैं।

बेवफ़ाई नहीं करेंगे हम
एक ऐसा क़रार करते हैं।

हुस्न को देखकर हो गया बावला,
बेख़ुदी को कभी तुम नशा मत कहो

अपने रूमानी नौजवानी के दिनों में खो कर हर किसी को यह बात माननी पड़ेगी-

प्यार की एक चिट्ठी लिखी रह गयी,
दे सका मैं नहीं बुज़दिली रह गयी

और ये सब बातें शायर को बताने के लिए आज ग़ज़ल को माध्यम बनाना पड़ रहा है

हुई थी मुहब्बत मुझे
ग़ज़ल में बताना पड़ा।

लुत्फ़ का बाबा समंदर,
मंच पर बहता रहेगा।

'अलग अंदाज़ है मेरा' का वाकई अलग अंदाज़ है। यह ग़ज़ल संग्रह ग़ज़ल के विद्यार्थियों के लिए बहुत उपयोगी है। ग़ज़ल की बह्र का उर्दू में नाम

और उसके मिसरों के अरकान / मात्राभार देने के साथ-साथ हिंदी में उन सभी छन्दों का नाम देना निश्चित ही ज्ञान वर्धन के लिए अत्यंत उपयोगी है। यहाँ मैं पुस्तक में दिए गए 21 छन्दों का नाम दे रहा हूँ जो गागर में सागर है:-

1. आधार छन्द सिंधु
2. आधार-वाचिक स्रग्विणी छन्द
3. आधार-पारिजात छन्द
4. आधार-वाराभामागा छन्द
5. आधार-आनंद्वर्धक छन्द
6. अधार-गीतिका छन्द
7. आधार-मनोरम छन्द
8. आधार-वास्रग्विणी छन्द
9. आधार-विधाता छन्द
10. आधार-वाचिक भुजंगप्रयात छन्द
11. आधार-सुमेरु छन्द
12. आधार-दिग्पाल /मृदुगति छन्द
13. आधार वाचिक सार्द्धसोमराजी छन्द
14. आधार-वाचिक विमोहा छन्द
15. आधार-वातारायरालगा छन्द
16. आधार-वाजभातारागागा छन्द
17. आधार-मानव/हाकिल छन्द
18. आधार-शिव छन्द
19. आधार-वाचिक बाला छन्द
20. आधार-शक्ति /वाचिक भुजंगी छन्द
21. आधार-रजनी छन्द

मुझे उम्मीद है **"अलग अंदाज़ है मेरा"** ग़ज़ल-संग्रह का हिंदी साहित्य विशेषकर ग़ज़ल संसार में आह्लादित मन से स्वागत होगा। हम ये भी उम्मीद करते है कि बाबा उपनाम से ग़ज़लें कहने वाले वैद्यनाथ झा जी की अन्य पुस्तकें भी यथाशीघ्र प्रकाशित होंगीं क्योंकि मात्र 36 के आंकड़े से उलझने से तो काम नहीं चलने का

छत्तीसवीं हई है पुस्तक अभी प्रकाशित,
बाबा बचा हआ है कछ और का प्रकाशन

शुभकामनाओं के साथ

पटना,
श्रावण शुक्ल 9 संवत 2082
रविवार, 3 अगस्त, 2025

रमेश 'कँवल'
संपर्क-8789761287
ई-मेल-rameshkanwal78@gmail.com
वेबसाइट-www.rameshkanwal.com

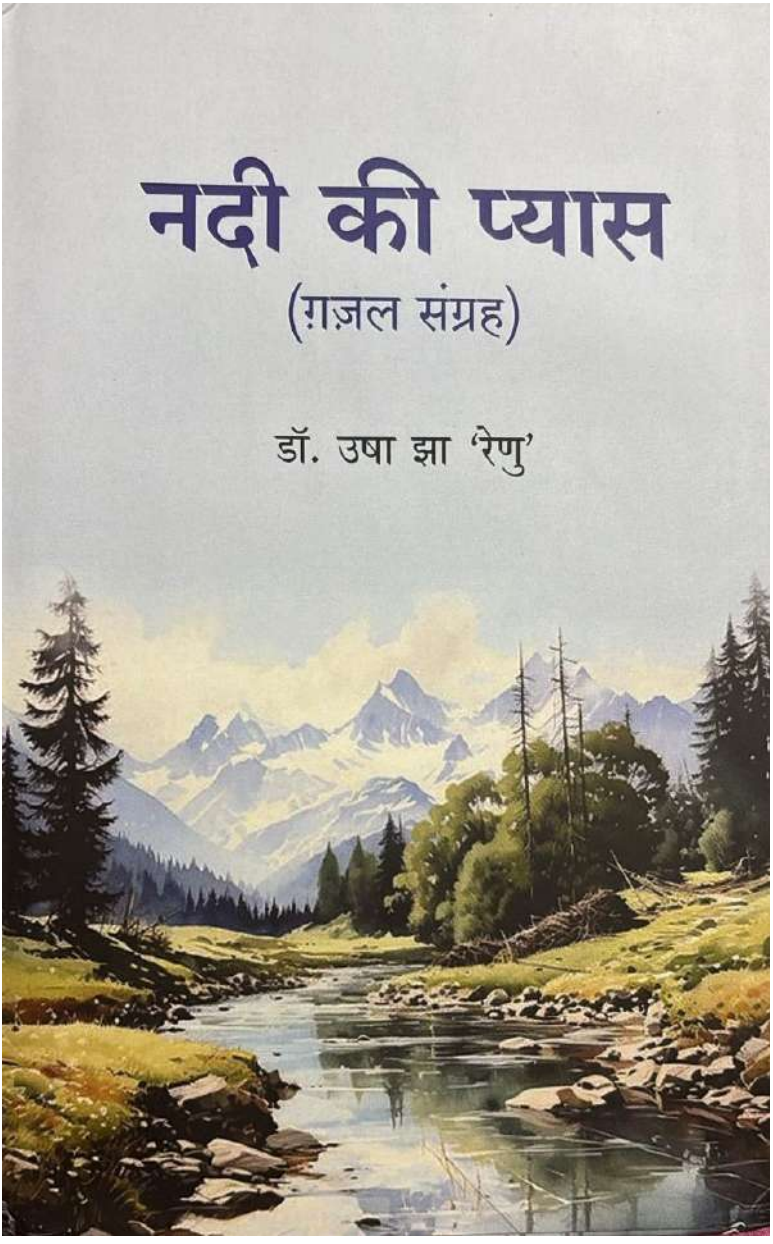
नदी की प्यास
(ग़ज़ल संग्रह)
डॉ. उषा झा 'रेणु'

नदी की प्यास-डॉ. उषा झा रेणु
चार दिन की चाँदनी है ज़िन्दगी

ग़ज़ल की दिलकशी सर चढ़ कर बोलती है। पहले ग़ज़लें सिर्फ़ उर्दू और फ़ारसी ज़ुबान और अदब की ज़ीनत हुआ करती थीं लेकिन अब ग़ज़लों की मक़बूलियत इतनी बढ़ गई है कि इसे सभी ज़ुबान के शायरों /कवियों की सराहना मिलने लगी है। ब्रज, अवधी, भोजपुरी, मैथिली, अंगिका, वज्जीका सहित तमाम आंचलिक भाषाओं में भी ग़ज़लें कही जाने लगी हैं। हिन्दी में तो वर्षों से ग़ज़लें कही जाती थीं। ये और बात है कि विगत 50 वर्षों में हिन्दी में ग़ज़ल कहने वालों की तादाद बेतहाशा बढ़ी है।

उर्दू में ग़ज़ल का अर्थ औरतों से बात करने के संदर्भ में लिया जाता था। महबूब, प्रेयसी के सौन्दर्य वर्णन, नख-शिख के चित्रण से अलग कुछ सोचा ही नहीं जाता था। जाम शराब, साक़ी सुरा मदिरा सुरबाला के बीच ही ग़ज़लें सीमित रहती थीं। लेकिन आज उर्दू के साथ साथ हिन्दी साहित्य में भी ग़ज़लों की परिभाषा बदल चुकी है। इसकी व्यापकता का अंदाज़ा इसी से लगाया जा सकता है ग़ज़लों ने आस पास के सभी मौजूं को अपने में समावेशित कर लिया है। अपने पर दरबारी होने का ठप्पा इसने मिटा दिया है। पर्यावरण, समाज, सामाजिक कुरीतियाँ, तकनीकी परिवेश, राहबरों का छलावा, बेरोज़गारी का दंश, महंगाई, भ्रषटाचार सभी इसके दायरे में आ गए हैं।

प्रो. उषा झा रेणु बिहार के सीमावर्ती इलाक़े की हैं लेकिन उत्तराखंड की सुरम्य वादियों में निवास कर रही हैं। साहित्यिक रुचि की कुलीन महिला हैं। लेखनी का वरदान इन्हें वंशानुगत मिला है।साहित्यिक मंचों ने इसे परिष्कृत और पोषित किया है। हिन्दी के साहित्य गगन में जिन काव्य कृतियों ने पाठकों के मन मंदिर में प्रशंसा की घंटियाँ बजाने के लिए विवश किया है उनमें इनकी कविता संग्रह-अंजुरी भर शब्द पुष्प, गीत संग्रह-मन का पलाश वन और दोहे-कुन्डलियाँ संग्रह-साधना के सोपान का नाम पर्याप्त आदर और प्रेम से लिया

जाता है। प्रेम, मिलन जुदाई, सामाजिक विसंगतियाँ, युवकों के मुद्दे एवं ज्वलंत समस्याओं को इन्होंने अपने लेखन में पिरोया है।

प्रेम इनकी ग़ज़लों का मूल आधार है। इनका मानना है कि प्रेम से ही दुनिया के अनेक मसायल दुरुस्त हो जाते हैं। इनकी उत्कट अभिलाषा है कि देश में शत्रुता का माहौल नहीं रहे। देश और दुनिया के हालात बदल जाएँ। शे'र देखिए:

हालात अब जहान के बदले भी दोस्तो
ख़्वाहिश है मुल्क में न कोई भी अदू रहे।

कृषकों को भी इन्होंने अपनी ग़ज़ल का मौजूं बनाया है:

भूख से आज कल जो कृषक मर रहा
पेट भी सारी दुनियाँ का वो भर रहा।

आज कल समाज में एकल परिवार की बहुलता हो गई है। बच्चे माँ-बाप को छोड़ कर रोज़गार के लिए बाहर चले जाते हैं; विदेशों में बस जाते है। माँ-बाप का उचित खयाल और देख भाल नहीं हो पाता है। वृद्धाश्रम फलने-फूलने लगे हैं। जो माँ-बाप संतान पर अपना सर्वस्व निछावर कर देते हैं। उनकी आँखों में बेतहाशा आँसू देखकर शाइरा का मन व्यथित हो जाता है। आखिर किसलिए वे पाई पाई जोड़ते रहते हैं जब संतान वसीयत के लिए लड़ते हैं। जब सब कुछ यहीं छोड़कर जाना है तो ये जोड़ तोड़ क्यों? आइए प्रो. उषा झा 'रेणु' के चंद अशआर मुलाहिजा फरमाइए:

वो रोज़गार के लिए परदेश जा बसे
रोती है आज मां कि दुलारे कहाँ गये।

रहे जो ठोकरें खाते सदा औलाद की ख़ातिर
उन्हीं माता-पिता के अश्क बेक़ाबू मिले मुझको।

माता-पिता को जिसने भुलाया विदेश जा
क्या बच्चों के हाथों वो सताये न जायेंगे

माँ बाप जोड़ते 'उषा' औलाद के लिए
संतान लड़ रहे हैं वसीयत की बात पर

जोड़ कर दौलत 'उषा' फिर क्या मिला इंसान को
एक दिन आख़िर सभी कुछ छोड़ कर जाना पड़ा।

ग़रीब लोगों की समस्याओं को उन्होंने प्रभावकारी ढंग से अपने शे'रों में प्रस्तुत किया है। फ़ुटपाथ पर रहने वाले ग़रीबों को छत मिल जाए इससे बढ़ कर क्या बात होगी। छत मिलने से ही लोगों को इज़्ज़त मिल पाती है। शाइरा को हैरत होती है कि लोगों के दिल से दया भाव कहाँ विलुप्त हो गया है। वे क्यों ज़ुल्म के सामने मुंह नहीं खोल पाते हैं। जो पंच बेधड़क हो कर इंसाफ़ करते थे वे गाँव की चौपालों से कहाँ गायब हो गए। शाइरा पूरी दुनिया जहाँ को ख़ुशियाँ बाँटने की हसरत रखती है।शे'र देखिए:

जिनका है फ़ुटपाथ बसेरा
सिर पर छत उनको दिलवाओ।

छत सभी को मिले ज़माने में
छत के नीचे ही सबकी इज़्ज़त है।

दीनों के दुख दूर करो रब
शुभ्र उजाला कुटि फैलाओ।

दया धर्म दिल में किसी के नहीं अब
सितम देख कर मुंह सिले जा रहे हैं

चौपाल गाँव की हुई वीरान आजकल
थे बेमिसाल पंच वो सारे कहाँ गए।

बाँट दूँ मैं जहान को ख़ुशियाँ
बस यही मेरे दिल की हसरत है।

शाइरा कर्म में विश्वास रखती हैं। नसीब को कोसना उनके स्वभाव में नहीं है। देश प्रेम उनके नस नस में बसा हुआ है देश की ख़ातिर जीना उनका संकल्प है। शे' र देखिए:

नसीब को न हमेशा ही कोसते रहिए
जो करते कर्म तो जीवन सँवर गया होता

देश के ख़ातिर जियें हर पल यही संकल्प है
बस निभाना फ़र्ज़ भारत से इबादत है मुझे।

'उषा' जबसे हिम्मत दिखाई है मैंने
मेरे दर्दो-ग़म सब चले जा रहे हैं।

कहते हैं कि प्रेम मानव स्वभाव है। विश्व साहित्य प्रेम और प्रेम की भावनाओं से भरा पड़ा है। यह सही है कि प्रो. उषा झा 'रेणु' ने अपनी शाइरी में मजदूरों, कृषकों, नौजवानों, बेरोज़गारों और वृद्धाश्रमों में सहारा तलाश करते हुए माँ-बाप की आँखों की विवशता को अपनी ग़ज़लों का मौजूं बनाया है लेकिन वे अपने हृदय में पनपने वाले प्रेम तत्व की उपेक्षा नहीं कर सकी हैं।

बड़ी बेजान सी थी ज़िन्दगी यह
भरी फिर से मुहब्बत ने ख़ुशी है।

रोशनी है शहर भर में आजकल
खिलखिलाती जा रही है ज़िन्दगी।

बात है बस मुख़्तसर सी जान लो
प्यार की ख़ातिर बनी है ज़िन्दगी।

छाई थी ज़िन्दगी में मेरी तीरगी बड़ी
तुम चाँद बनके आए उजाले निकल पड़े।

वक़्त फिर लौट कर नहीं आता
चार दिन की चाँदनी है ज़िन्दगी

बिन सजन जीवन अधूरा सच यही
पल सभी अनमोल धन का क्या करें

प्रेम के विस्तार के लिए वे सतत प्रयत्नशील हैं:

फूल खिले वन रंग बिरंगे
प्यारी धरती को महकाओ।

जो नफ़रत बोते हैं 'उषा'
उनके मन में नेह जगाओ

क्यों न मिल जुलकर रहें सारे यहाँ
चार दिन की चाँदनी है ज़िन्दगी।

बाँटते हैं जो ज़माने में ख़ुशी
उसके घर प्यार की बरकत होगी।

ग़म ज़माने ने दिया है जी भर
उसकी ख़ातिर भी दुआ है अब तो

प्रो. उषा झा 'रेणु' अपनी साहित्यिक प्रसिद्धि को ईश्वर की कृपा और मित्र बंधुओं का प्रेम मानती हैं

सँवारा है सृजन पथ को मेरे जिन मित्र वृंदों ने
मिला आशीष जिनसे वो सुख़नवर याद आते हैं।

जो मिला है 'उषा' को जीवन में
ये ख़ुदा की ही तो इनायत है।

दिया सम्मान 'उषा' को जहाँ ने
ख़ुदा की मेहरबानी लिख रही हूँ।

प्रो. उषा झा 'रेणु' की ग़ज़लों में सौन्दर्य और उपयोगिता का अद्भुत समन्वय है। ग़ज़ल का शिल्प पक्ष सुंदर है। देहाती परिवेश से उकेरे गए बिम्ब प्रभावित करते हैं। प्रेम प्रसंगों के वर्णन में इन्हें महारत हासिल है। मैं ग़ज़ल संग्रह नदी की प्यास की स्वीकार्यता एवं शुहरत की कामना करता हूँ। माँ शारदे इनकी लेखनी को तेज, ओज और ऊर्जा का प्रसाद दें। उनपर कृपा करें। उनके लिए मेरा सुझाव है:

ज़िन्दगी को 'उषा' जियो जी भर
वक़्त फिर लौट कर नहीं आता

धनतेरस, 2023
10 नवंबर, 2023

रमेश 'कँवल'
मोबाईल 878 976 1287

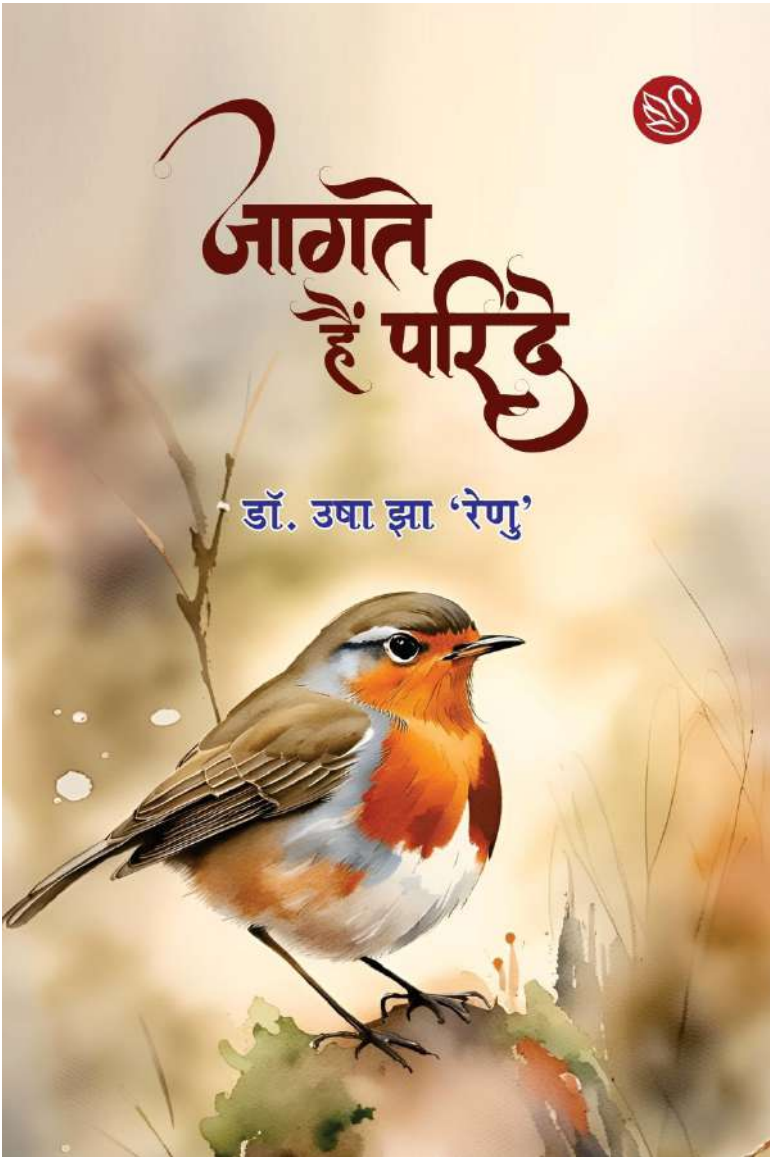
जागते हैं परिंदे
डॉ. उषा झा 'रेणु'

जागते हैं परिंदे-डॉ. उषा झा रेणु
ग़ज़ल की मधुरिम चहचाहट का बोलबाला

ग़ज़ल नाम की एक ख़ूबसूरत कमसिन बाला अरब से चलकर हिंदुस्तान पहुँची। इसके अरबी लिबास में विभिन्न रुकन रूपी गहनों से सुसज्जित मीठी जुबां में बतियाना अलग-अलग बह्र में गुनगुनाना लोगों को बहुत पसंद आया। उसकी जुबां हिन्दुस्तानी थी जो हिन्दी उर्दू फ़ारसी और तुर्की का मिश्रण था और आम अवाम में मक़बूल था। हिंदुस्तान के कवियों को ग़ज़ल बहुत पसन्द आई और सबके दिलों-दिमाग़ पर छा गई।

शुरू शुरू में ग़ज़ल पर अरबी और फ़ारसी भाषा का प्रभाव रहा। लेकिन धीरे-धीरे ग़ज़ल उर्दू से आशनाई कर बैठी। दकन के वली ने इसके शैशव काल में इसकी परवरिश की। सौदे के क़सीदे ने इसे तरन्नुम अता की। मीर ने इसे ठुमकना सिखाया; अपना हमराज़ बनाया। दाग़ ने इसमें सुगंध भरा। ग़ालिब ने इसे मेयार बख्शा और बुलंदी पर पहुँचाया। हाली ने इसे मुरव्वत का सबक सिखाया। मोमिन ने इसकी हवेली में ख़्वाबों की आमद कराई। ज़ौक़ की अज़मत, चकबस्त की उलफ़त, फ़ानी की सुहबत और अकबर की साफ़गोई ने ग़ज़ल के दामन को ख़ुशियों से भर दिया।

ग़ज़ल को हसीनों से बात-चीत की सिंफ (विधा) माना जाता रहा है। लेकिन ग़ज़ल के क्रमिक विकास ने इस अवधारणा को ग़लत भी साबित किया। आज से 50 साल पहले दुष्यंत कुमार ने हिंदी ग़ज़ल को एक झटके में ही पुरानी मान्यताओं से अलग कर दिया। अब यह प्रेम-मोहब्बत के साथ-साथ दुनिया के दुःख-दर्द, टूटते परिवार के दंश, बेरोजगारी की धूप, समाज में व्याप्त भ्रष्ट्राचार, राजनीतिक विद्रूपताओं पर वार करनेवाली और व्यस्था की विसंगतियाँ उजागर करने वाली विधा बन गयी है। ग़ज़ल की संरचना बुनावट और बनावट दोनों

स्तर पर उच्च मानदंड स्थापित करते हुए जीवन के मानदंडों पर खरी उतरने पर आतुर हो गई है।

हिन्दी ग़ज़ल के कथ्य और कहन पर दृष्टिपात करते हुए हम पाते हैं कि घनघोर निराशा-काल में भी यह पूरी परिपक्वता के साथ आशा की किरण और ज्योति पुंज बन कर उभरी है। नकारात्मकता के स्थान पर सकरात्मता का प्रचार-प्रसार करने में यह अत्यंत सफल रही है।

अधिकांश ग़ज़लों में सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक विषमताओं के विरुद्ध संघर्ष और नवनिर्माण की आकांक्षा का प्रतिपादन हुआ है। माधव कौशिक, ज्ञान प्रकाश विवेक, अशोक मिजाज, दरवेश भारती, हरेराम समीप, प्रेम किरण, डॉ. मधुसूदन साहा, डॉ. कृष्ण कुमार प्रजापति, विज्ञान व्रत, डॉ. कृष्ण कुमार नाज़, अनिरुद्ध सिन्हा, हर्षअदीब, देवेन्द्र मांझी, रमेश 'कँवल', डॉ. भावना, मधु मधुमन, डॉ. आरती कुमारी, आराधना प्रसाद, विकास आदि की ग़ज़लों को इस कसौटी पर परख सकते हैं।।

जागते हैं परिंदे देहरादून की रमणीक पर्वतीय वादियों में निवास करने वाली बिहार की चर्चित ग़ज़ल साधिका डॉ. उषा झा रेणु का तीसरा ग़ज़ल संग्रह है डॉ. उषा झा रेणु ग्रामीण परिवेश में पली-बढ़ी कुलीन महिला हैं। पारिवारिक मूल्यों और सामाजिक मान्यताओं का आदर उनके संस्कार में है। भाई-बहनों के बीच मनमुटाव हो जाने को वो अच्छा नहीं मानती। मीत को मना लेने में वो कोई कोर-कसर छोड़ना नहीं जानती। बसुधैव कुटुंबकम उन्हें अति प्यारा दर्शन लगता है। इन सब के बावजूद प्रेम उनकी ग़ज़लों का खास रंग है।मिलन-जुदाई, रूठना-मनाना, चाँदनी रातें उनकी ग़ज़लों में प्रचुरता से पाए जाते हैं। आइए प्रेम भावना प्रदर्शित करते हुए उनका कुछ शे'र मुलाहिजा हो-

देखकर रूबरू यार को
ज़िन्दगी मुस्कुराती रही

चाँद के संग है चाँदनी
रुत हसीं गुनगुनाती रही

पास जब भी 'उषा' के हों साजन
चाँदनी रात जगमगाई है

चल गया मीत पर मेरा जादू
मेरी पलकों पे छा गए आँसू

मुश्किलों में न हौसले कम थे
ज़िन्दगी प्यार से सजाई थी

दिल लुटाना यार पर भाया बहुत
उसका हर इक फ़ैसला अच्छा लगा

जुदाई के दिन काटे नहीं कटते इस मौजू पर भी कुछ बेहतरीन अशआर देखिए:

आप की याद भी नहीं आती
आँख में अब नमी नहीं आती

एक भी वादा नहीं पूरा किया
उनके सब वादे कहानी हो गए

रूठ कर दूर हो गये दोनों
दिल की हसरत रही कुवाँरी है

लेकिन जुदाई के दिन भी किसी न किसी तरह बीत ही जाते हैं। प्रेमी हृदय एक दूसरे को मना ही लेते हैं:

प्यार से ज़ख्म दिल के उषा भर गये
ज़ख्म की अब तो कोई निशानी नहीं

बीत मौसम गये जुदाई के
शोख़ अब हर तरफ़ नज़ारे हैं

दूर दिल के हो गये शिकवे गिले
जब गले हँसकर लगाया देर तक

आपका इन्तज़ार भी तो नहीं
दिल मेरा बेक़रार भी तो नहीं।

लोगों को अपनी इच्छाओं का संसार सीमित रखना चाहिए नहीं तो उन्हें काफी कष्ट उठाना पड़ता है:

ख़्वाहिशें जो हज़ार रखते हैं
आँखें फिर अश्कबार रखते हैं।

शायरा भाग्य में भी विश्वास रखती हैं:

जब भी मालिक की इनायत होगी
खत्म जीवन से मुसीबत होगी

ख़ुशी आई थी दर पे देने को दस्तक
कहाँ ये कोई गमज़दा जानता है

प्रेमीजनों की ख़ुशियाँ ज़माने को नहीं भाती:

खुशी से घर सजाया जा रहा है
ज़माने को नहीं यह भा रहा है

नई पीढ़ी के बातचीत के लहजे में आदर-भाव तिरोहित होता जा रहा है:

आधुनिक बन रही नई पीढ़ी
बात करती बड़ों से तू करके

शायरा को गाँव बहुत याद आता है:

आ गये शह्र में कमाने अब
गाँव को याद में बसा ली है

गाँव की याद जब कभी आयी
बेसबब आँख छलछलाई है

ज़िंदगी में सभी को यदि सुख-सुविधा की संपत्ति बराबर मिले तो आपसी रिश्ते सौहार्दपूर्ण रहेंगे:

हक सबको बराबर जो मिले दिल भी न टूटे
आपस का ये रिश्ता कभी कड़वा न रहेगा।

मुसीबत में सबकी मदद कीजिए
सभी हों सुखी ऐसी चाहत करें

काम अच्छा करें हमेशा ही
राह सबको नई दिखाएँ हम

आदमी को अनावश्यक कार्यों से दूर रह कर धर्म-पथ पर चल कर सबका उपकार करना चाहिए, ऐसा नहीं कि लोभ-लालच दिल में बसा कर दानी बनने की चाहत रखनी चाहिए:

कीजिए उपकार चल कर धर्म के पथ पर सदा
यूँ न मंदिर और गिरजाघर के चक्कर काटिए

लोभ की मदिरा है जिनकी आँख में
वो भी देखो आज दानी हो गए

आज के परिवार की त्रासदी की तरफ़ भी शायरा ने इशारा किया है

जिसको रक्खा था माँ ने आँचल में
उसने दुनिया अलग बसा ली है

रहे मिलजुल सभी माँ की है चाहत
बहन भाई पे बन आई हुई है

देख औलाद की 'उषा' ख़ुशियाँ
ज़िन्दगी खुल के मुस्कुराई थी

शायर का यह दायित्व है कि समाज को उत्साहित-प्रेरित करने के लिए भी वह अपनी लेखनी चलाए। डॉ. उषा झा रेणु ने इसमें कोई कोर कसर नहीं छोड़ी है:

हौसलों से उड़ान होती है
फिर अलग जग में शान होती है

'उषा' गुमां न करे कोई रूप यौवन का
हमारे गुण ही हमें आदमी बनाते हैं

इल्म से मंज़िलें हुईं हासिल
ज़िन्दगी हर तरह सुखी कर ली

सर क़लम कीजिये दरिन्दों का
जो किसी पर तरस न खाए हैं

दिल ज़रा कीजिए बड़ा अपना
भूल सब माफ़ भी किया जाए

इस तरह ग़म से दोस्ती कर ली
ज़ब्त दुनिया की बेबसी कर ली

बैर करें आपस में सयाने
छल से दूर सदा बचपन है

बड़े ही मतलबी इंसान हैं सब
ज़माना अब भलाई का नहीं है

दोस्त सच्चा नहीं यहाँ कोई
दर्द दिल का किसे बताएँ हम

उपर्युक्त अशआर के दर्पण में हम देखते हैं कि डॉ. उषा झा रेणु की ग़ज़लों की बनावट और बुनावट, कथन और कहन, अंदाजे-तकल्लुम में एक ताज़गी है। एक कशिश है। दिलों को मुतासिर करने का भरपूर माद्दा है।

मैं शायरा के तीसरे ग़ज़ल संग्रह परिंदे जागते हैं का स्वागत करता हूँ। आशा है ग़ज़ल व्योम में इस सितारे का हृदय से स्वागत किया जाएगा। इतना कुछ कहने के बावजूद जो शायरा अपनी जेब खाली होने की दुहाई देती है, आइए दिल से उनका स्वागत करें-

जेब खाली ज़रूर है लेकिन
दिल से स्वागत ग़रीबख़ाने पर

शुभकामनाओं सहित,

पटना
वैशाख कृष्ण 2, संवत 2082 रमेश 'कँवल'
मंगलवार, 15 अप्रैल, 2025

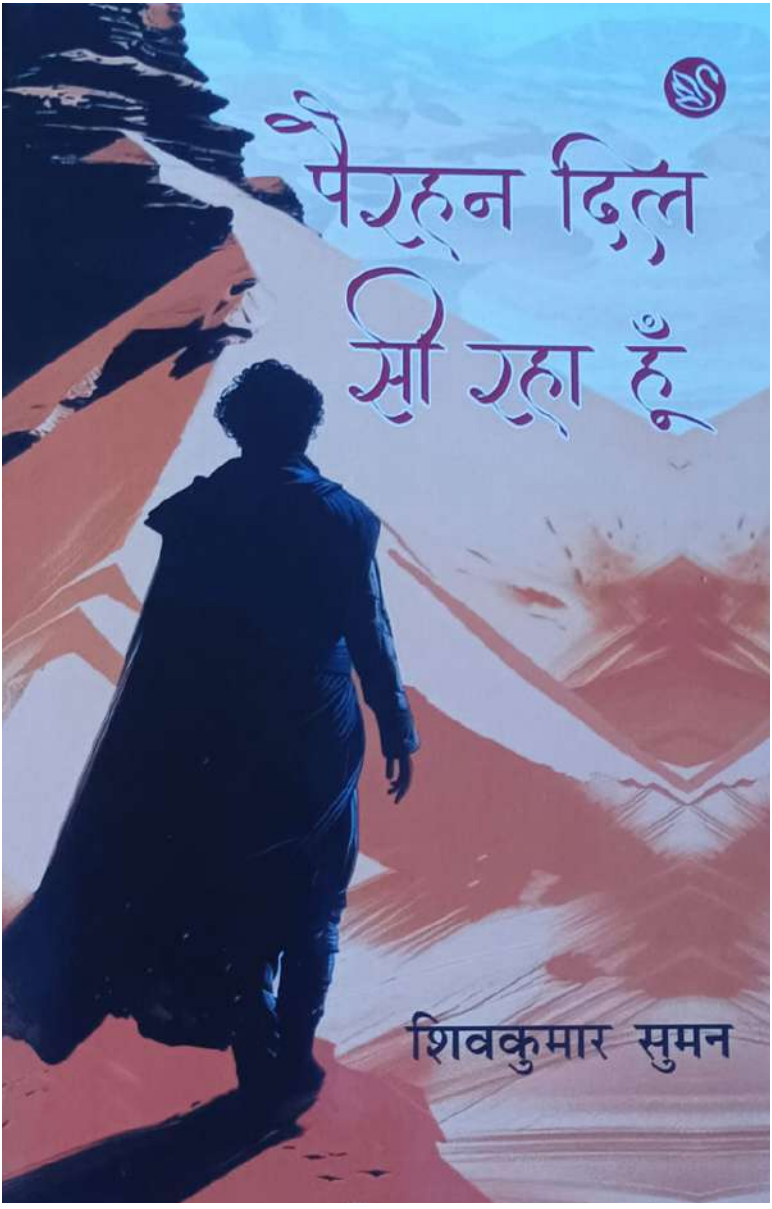
पैरहन दिल
सी रहा हूँ
शिवकुमार सुमन

पैरहन दिल सी रहा हूँ-शिव कुमार सुमन
प्यार वाला गीत कोई गुनगुनाना चाहिए

ग़ज़ल शायरी की सभी सिनफ़ों (विधाओं) में सबसे मकबूल (प्रसिद्ध) विधा है। आज हिदी-उर्दू के अलावा अन्य भाषाओं में भी ग़ज़लें कही जा रही हैं। ग़ज़ल पहले हुस्न-इश्क़ का समन्वय के धरातल पर प्रसिद्ध हुई जो सांसारिक रही। फिर हुस्न और इश्क़ की सौन्दर्य-गाथाएँ लौकिकत्ता से अलौकिकता की तरफ़ मुड़ीं। ग़जलकारों की गायकी शैली ने ग़ज़ल को संगीत की स्वर लहरी में सराबोर कर दिया। आज ग़ज़ल मधुर आवाज़ों के संसार में रम गई है।

ग़ज़ल खासकर हिन्दी ग़ज़ल ने अब प्रेम और सौन्दर्य के विषय आलिंगन से आगे बढ़कर जीवन के प्रत्येक मौसम का रसपान करना शुरू कर दिया है। सामाजिक विसंगतिया, राजनीतिक छल प्रपंच, नये व्यवस्था की असरहीनता, बेरोजगारी का दंश, झूठ का बोल-बाला सभी ग़ज़ल की परिधि में समाहित हो गए हैं

बिहार में जिन ग़जलकारों की धूम मची हुई है उनमें खगड़िया की धरती से शब्द-साधना करने वाले शिव कुमार सुमन का नाम बड़े ही स्नेह और आदर के साथ लिया जाता है। आप शिक्षा जगत से जुड़े हुए हैं लिहाजा ग़ज़ल के शिल्प से आप अनजान नहीं है। सी रहा हूँ पैरहन दिल आपका दूसरा ग़ज़ल संग्रह है। इसमें 96 ग़ज़लें हैं। यद्यपि कि आपने अनेक विषयों को अपनी ग़ज़लों का विषय बनाने का प्रयास किया है लेकिन यह सुगमता पूर्वक कहा जा सकता है कि प्रेम ही आपकी ग़ज़लों का मूल स्वर है:-

प्रेम में मर मिटी,
राधिका श्याम पर।

ज़िंदगी में प्यार लिखना।
मत कभी तकरार लिखना।।

हाय! क्या चीज़ है जवानी भी
जा के आती नहीं बुलाने से

प्रेयसी के सौन्दर्य प्रशंसा पर कितना सुंदर यह शे'र बन पाया है:-

होंठ तेरे यूं ही बड़े क़ातिल
क्या ज़रूरत है मुस्कुराने की

तुम जो आये नज़र ईद सी हो गई,
तुम नज़र से हटे ताज़िया हो गया।

प्रेम को हर ज़िंदगी में दख़ल देनी ही चाहिए-

मौज को जैसे रवानी चाहिए
हर जवानी को कहानी चाहिए

एक प्रेमी अपने ख़यालों में कितना परेशान रहता है-

हवा पर नाम लिखता हूँ
तुझे पैग़ाम लिखता हूँ

इक परिंदा ज़रा सा ठहर क्या गया
राह तकता रहा फिर शजर रात दिन

विरह-वेदना के दो-एक दृश्य देखिए:

धूप की दीवार पर छत चांदनी की डालकर,
रातभर हम याद तेरी ओढ़कर सोते रहे।

याद आई जब कभी भी उस सुहानी शाम की
मेरे भीतर गीत कोई गुनगुनाया रात भर

बहुत शोख़ यादें टहलने लगीं
पुरानी वही फिर डगर देखकर

पास मेरे जो तेरी यादें हैं
कम नहीं है किसी ख़ज़ाने से

आज दुनिया में धर्म के नाम पर इतनी नफ़रतें बढ़ गई है कि शायर कहता है:

हर तरफ़ नफ़रतें,
धर्म के नाम पर।

तीरगी भर गई है बस्ती में
चांद उम्मीद की उगा अब तो

हर तरफ़ जंग से जूझ रही औरतों और बच्चों की चीख़-पुकार से घबराकर शायर कहता है:

लोग बहरे हो चुके हैं गोलियों के शोर से
प्यार वाला गीत कोई गुनगुनाना चाहिए

प्यार मुहब्बत नेमत है,
आपस में ही लड़ना क्या

प्रेम में निराश प्रेमियों के लिए कितना मुफ़ीद सुझाव शिव कुमार सुमन जी देते हैं:

वफ़ा जो नहीं कर सके,
उन्हें भूल जाया करो।

दग़ाबाज़ से तुम कभी,
नहीं दिल लगाया करो।

जीवन है तो खुलकर जी,
जीते जी ही मरना क्या।

क्यों गिराते हो मुझे तुम ग़म में अक्सर आंख से
आंसुओं को भी तो कोई आशियाना चाहिए

दुनिया में भूख से बेहाल लोगों पर एक शे'र देखिए:

भूख ओढ़े कोई रो रहा था इधर
जश्न होता रहा था उधर रात दिन

यद्यपि कि सुमन जी कहते है:

व्यर्थ है कोशिशें झुकाने की
मेरी आदत है टूट जाने की

लेकिन वे यह भी स्वीकार करते हैं कि असफलताओं की निरन्तरता से इंसान टूट जाता है:

रेज़ा-रेज़ा बिखर गया हूँ मैं
ठोकरें बार-बार खाने से

मेरा किरदार एक दर्पण सा
टूट जाता हूँ आज़माने से

उनकी नज़र में जब ग़रीबों के घर में बेटियाँ जवान होने लगती हैं तो उनके मन में एक डर पनपने लगता है:

बेटियाँ मुफ़लिसी में जवां जब हुईं
मन में पलने लगा कोई डर रात दिन

शायर की नज़र में आज के सीमित परिवार की त्रासदी भी झलकती है जहाँ बच्चे दादी नानी और वरिष्ठ सदस्यों की स्नेह-सुधा से वंचित हो रहे हैं:

तरक़्क़ी याफ़्ता तहज़ीब की यह देन है शायद
कहानी बस किताबों में, न दादी है, न नानी है

बाप माँ गर साथ हो तो
घर में चारों धाम होना

दुनिया कितनी मतलबी हो गई है। काम निकलने तक ही मतलब रखती है। किसी क़ातिल को ही महिममंडित किया जाता है। बेघरों बेबसों को सता कर भी जश्न मनाने की परंपरा परवान चढ़ने लगी है। बूंद भर शराब के लिए पुश्तैनी मकान बेच दिए जाते हैं। मनचाहा दाम मिले तो ईमान बिकते भी देर नहीं लगती। यहाँ सिर्फ़ ख़ास लोगों पर ही तवज्जह दी जाती है। आमलोगों की बातें कभी होती ही नही जब सारे काम झूठ से ही हो जा रहे हैं तो क्यों नहीं सत्य को सूली पर चढ़ा दिया जाए। कुछ शे'र देखिए:

काम निकल जाने तक
मतलब जारी रखना

उसी की जेब से ख़ंजर मिला था,
गले में हार डाला जा रहा है।

बूंद भर शराब के लिये,
बाप का मकान बेचिये।

बिक रहा ईमान भी अब
शर्त वाजिब दाम होना।

दरबार सजा है ये तो बस ख़ास की ख़ातिर,
भूले से भी करना न किसी आम की बातें।

उस महल में जश्न होता है सुमन,
बेघरों पर फेंक पत्थर आज भी।

झूठ से ही जब यहाँ सब काम अब होने लगा,
ढूंढ कर फिर सत्य को फांसी चढ़ाना चाहिए।

शिव कुमार सुमन शायर की ज़िम्मेदारी का निर्वाह करना जानते हैं। उनकी शायरी में सिर्फ़ ग़ज़ल के शिल्प और कथ्य का निर्वाह ही नहीं किया गया है बल्कि समाज और नौजवानों के लिए ख़ूबसूरत संदेश भी दिए गए हैं:

जो वतन के काम आए अब सुमन
पीढ़ियों को वह जवानी दीजिए

बेचना ईमान गर हो,
सौ दफ़े इनकार लिखना।

उम्र भर चलते रहे जो धूप में
शाम उनको एक सुहानी चाहिए

सुमन जी गाँव से शहर आ कर परेशान हो जाते हैं:

यहाँ खींच लायी ज़रूरत मुझे
परेशां बहुत हूँ शहर देखकर

शहरों में पेड़ पौधे का नितांत अभाव होता है। कहीं से भी एक पेड़ दिखा मन ख़ुश हो जाता है:

बियाबान राहें कड़ी धूप में
हुआ हौसला इक शजर देखकर

आज ग़ज़ल के नाम पर इतना कचरा परोसा जाने लगा है कि शायर कह उठता है:

क़ाफ़िया, शेर, मतला नहीं जानता
क्यूँ ग़ज़ल कह रहा बेबहर रात दिन

अंत में शिव कुमार सुमन जी अपने बारे में यानि एक शायर के सपनों को तफ़सील से बताते हैं

प्यास है मेरा मुक़द्दर आज भी।
और खारा है समन्दर आज भी।।

नाम शुहरत के लिये बेचैन वो,
मस्त है मौला कलंदर आज भी।

मुझे क़ैद कर भी सुमन
हमेशा वो डर में रहा

सभी दर्द अपने छिपाता रहा।
ये हद से बढ़ा गुनगुनाता रहा।।

उजालों की चाहत थी मज़बूरियाँ,
शमा की जगह दिल जलाता रहा।

ख़त हैं आने लगे बारहा इन दिनों,
दर्द भी आजकल डाकिया हो गया।

शिव कुमार सुमन की ग़ज़लें इस दौर की आवाज़ हैं। ग़ज़लों का शिल्प और कहन का अंदाज़ बेहतर है। मैं उनके दूसरे ग़ज़ल संग्रह सी रहा हूँ पैरहन दिल के प्रकाशन पर उन्हें आत्मिक बधाई देता हूँ और माँ सरस्वती से प्रार्थना करता हूँ कि उन्हें साहित्याकाश में देदीप्यमान होने का अवसर दें।

यथास्तु!

क़ैद मुट्ठी में करो तुम ये नहीं है मुमकिन,
हम वो ख़ुशबू हैं जो छू लो तो बिखर जाते हैं।

पटना
शारदीय महानवमी,
आश्विन शुक्ल पक्ष 8-9
संवत 2081
11 अक्टूबर, 2024

रमेश 'कँवल'

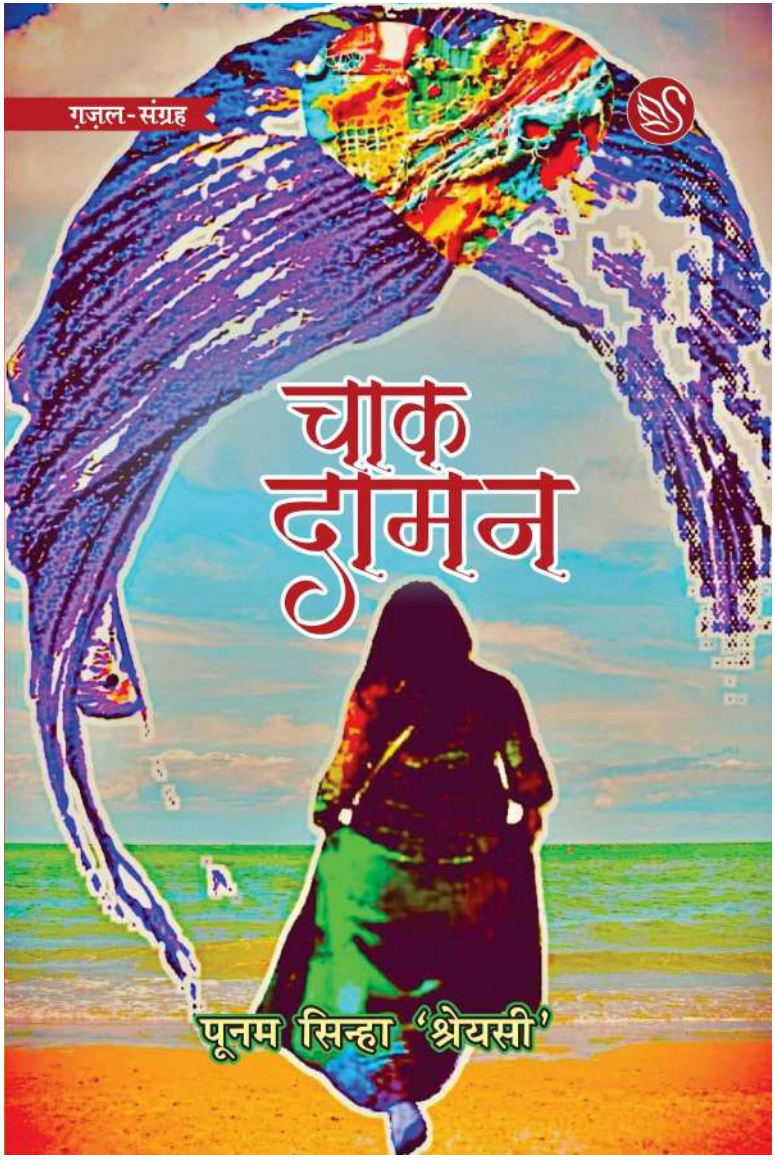
ग़ज़ल-संग्रह
चाक दामन
पूनम सिन्हा 'श्रेयसी'

“चाक दामन”-डॉ. पूनम सिंह श्रेयसी
शुहरत की ओढनी में सितारे टाँकने का प्रयास

इक्कीसवीं सदी में हिन्दी कविता की शुहरत की बुलंदी ग़ज़ल की गलियों से गुज़र कर ही प्राप्त की जा सकती है। लिहाजा पिछले 2-3 दशकों में ग़ज़ल हर ख़ासो-आम में मक़बूल होती जा रही है। प्रत्येक कवि शायर बनने की ललक में ग़ज़ल की चाशनी में अपनी भावनाओं को परोसता जा रहा है। पिछली शताब्दी में दुष्यंत कुमार ने ग़ज़ल की जो ज़मीन तैयार की है वह हिन्दी के कवयित्रियों को भी रास आ रहा है। बिहार इस मायने में ग़ज़ल की ख़िदमत में हिन्दी साहित्य में विशेष स्थान बनाए हुए है।

बिहार की जिन कवयित्रियों को प्रसिद्धि की चाँदनी में नहाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है उनमें पूनम सिन्हा ‘श्रेयसी’ का नाम बड़े ही आदर के साथ लिया जाता है। पटना के सभी साहित्यिक गोष्ठियों, कवि सम्मेलनों और मुशायरों में उन्हें सम्मान के साथ बुलाया जाता है। दीक्षित दनकौरी जी द्वारा हरिद्वार में आयोजित ख्यातिलब्ध ग़ज़ल कुम्भ में भी पूनम सिन्हा श्रेयसी अपनी दमदार उपस्थिति दर्ज करा चुकी हैं। उनकी ग़ज़लों का ताज़ा संग्रह **“चाक दामन”** आपके हाथों में है। ग़ज़ल के संबंध में उनकी राय देखिए:

जगाती है इंसानियत जो दिलों में,
वो सदियों पुरानी रिवायत ग़ज़ल है।

ग़ज़ल प्रेम संबंधों को उकेरनेवाली बेहतरीन विधा है। हर ग़ज़लकार प्रेम निवेदित करने में, प्रेम की व्यथा झेलने में, प्रेम के प्रति ज़माने का नज़रिया बताने में कलम ज़रूर चलाता है। पूनम सिन्हा ‘श्रेयसी’ की अभिव्यक्ति क़ाबिले-ग़ौर है-

प्रेम निवेदन

इस तरफ़ उस तरफ़ हर तरफ़ आप हैं,
प्यार की इस नज़र की वज़ह आप हैं।

तुम्हें छू कर हवाओं ने मुझे पैग़ाम भेजा है,
मचल कर कह रहा आँचल चले आओ चले आओ

चाँदनी रात में जब मिले थे कभी,
वस्ल की आस थी इस तरफ़ उस तरफ़।

जिसमें शामिल न हों प्यार की धड़कने,
गीत ऐसा हमें गुनगुनाना न था।

अब दुआ है ये 'पूनम' कि वो साथ हों,
मिल के हम चाँदनी में टहलते रहें।

प्रेम व्यथा

चाँदनी रात में मिल न पाए कभी,
मेरे अरमानों का चाँद ढलता रहा

याद उनकी हँसा नहीं पाती,
ख़्बाव उनके रुला रहे मुझको।

मुझसे इतनी कड़वी बातें
ये ही अपनी यारी है क्या।

यहाँ हम जीत जाएँ या कभी हम हार भी जाएँ,
हमें हर हाल में यह ज़िंदगी हँस कर बितानी है।

ज़िंदगी बर्फ़ की इक नदी सी जमी,
अब है मुसलसल मेरी गल रही हसरतें

ऐसा नहीं कि प्रेम में मगन होकर उन्हें दीन दुनिया की कोई खबर नहीं रहती। वे झूठ के चलन और सत्य के लापता होने से आहत हैं। उन्हें यह अच्छा नहीं लगता कि जो बेबसों के दुख-दर्द से अनजान है उसे ही पद-प्रतिष्ठा मिल रही है। कोई ग़रीबों की नहीं सुनता।सभी उस से नजरें बचाते हैं। लेकिन जो रात-दिन चाटुकारिता में लगे रहते हैं उनका मान बढ़ने लगता है। जी हुज़ूरी करने में ही फ़ायदा है

चार सू झूठ का दबदबा हो गया,
सच न जाने कहाँ लापता हो गया।

दर्द बेबस का जिसने न समझा कभी,
इस सदी का वही देवता हो गया।

कौन सुनता है आज मुफ़लिस की,
इनसे अब सब नज़र बचाते हैं।

रात दिन जी हुज़ूरी ही करते हैं जो,
क़द अब उनका बढ़ाने लगीं कुर्सियाँ

हुआ जब नहीं कुछ मशक़्क़त से हासिल,
तो की जी हुज़ूरी हुआ फ़ायदा है।

लेकिन वे सच के करीब रहना चाहती हैं-

झूठ की वाह-वाही नहीं चाहिए,
हमको अपनी तबाही नहीं चाहिए

वक़्त हर ख़ास और आम की ज़िंदगी में ख़ास मुक़ाम रखता है। जो वक़्त की क़द्र करता है वह ख़ुश रहता है। जो समय पर समय को महत्व नहीं देते वे ज़िन्दगी भर परेशान रहते हैं-

साथ चलता है वक़्त के जो भी,
सुर्ख़रू हो के मुस्कुराता है।

वक़्त पर लोग क्यों वक़्त देते नहीं,
देखिए उनसे ख़ुशियाँ मुकरने लगीं

जो हैं लेते नहीं ज़िंदगी से सबक़
उम्र भर वो बशर ख़ाक हैं छानते।

लेकिन वे ज़िंदगी से निराश नहीं होतीं, उन्हें ख़ुशी है कि उनके साथ जुगनुओं का क़ाफ़िला चल रहा है।

है बहुत ग़म मगर ज़िंदगी ही तो है,
दूर हो जायेगी तीरगी ही तो है।

जुगनुओं का मेरे साथ है कारवाँ,
राह में अब अगर तीरगी है तो है।

कवयित्री ने पर्यावरण को भी अपनी सोच के दायरे में समेटने की कोशिश की है-

अगर हमने क़ुदरत को छेड़ा न होता,
तबाही के इतने नज़ारे न होते।

जहाँ यह तय हो जाए कि आदमी वही हो जिसमें आदमीयत नहीं रहे फिर अगर कोई भय से थर-थर काँपे तो आश्चर्य क्या-

आदमी आदमीयत से महरूम हो,
ज़िंदगी के लिए तय ये मानक हुआ।

आँखें ख़ौफ़ज़दा हैं उसकी
तन भय से काँपे थर-थर है।

दहशतगर्दी का आलम है,
किस्तों में हैवानी देखो

आदमी की बेबसी के समीप प्राकृतिक दृश्य ले आने में पूनम जी को महारत हासिल है-

हम ठिठुरते रहे ठंड में मुंतज़िर,
धूप से कोहरे की ठनी ही रही।

सूरज को ही क़ैद कर लिया,
बादल की शैतानी देखो

उपर्युक्त अशआर के आईने में आप पाएँगे कि जो कवयित्री यह कहने में संकोच नहीं करती कि

उसी पर हुआ मेह्बां ये ज़माना,
फ़लक पर जो रौशन सितारा हुआ है

उनके शे'रों में तग़ज़्ज़ुल भी हैं सुंदर उपमाओं और बिंबों के प्रयोग के साथ-साथ कथन की शैली और शेरियत से लबरेज़ शायरी का ख़ज़ाना भी है।

पूनम सिन्हा 'श्रेयसी' का ग़ज़ल संग्रह आपके ज़ह्नो-दिल में बहुत देर तक दस्तक देता रहेगा क्योंकि

अमीरी क्या बिगाड़ेगी भला मेरा,
फ़क़ीरी की विरासत हूँ यही सच है।

उम्मीद है **"चाक दामन"** ग़ज़ल संग्रह पूनम सिन्हा 'श्रेयसी' की शुहरत की ओढनी में सितारे टाँकने में कामयाब होगा। यथास्तु!

चैत्र शुक्ल 1 विक्रम संवत 2082 — रमेश 'कँवल',
रविवार, 30 मार्च, 2025

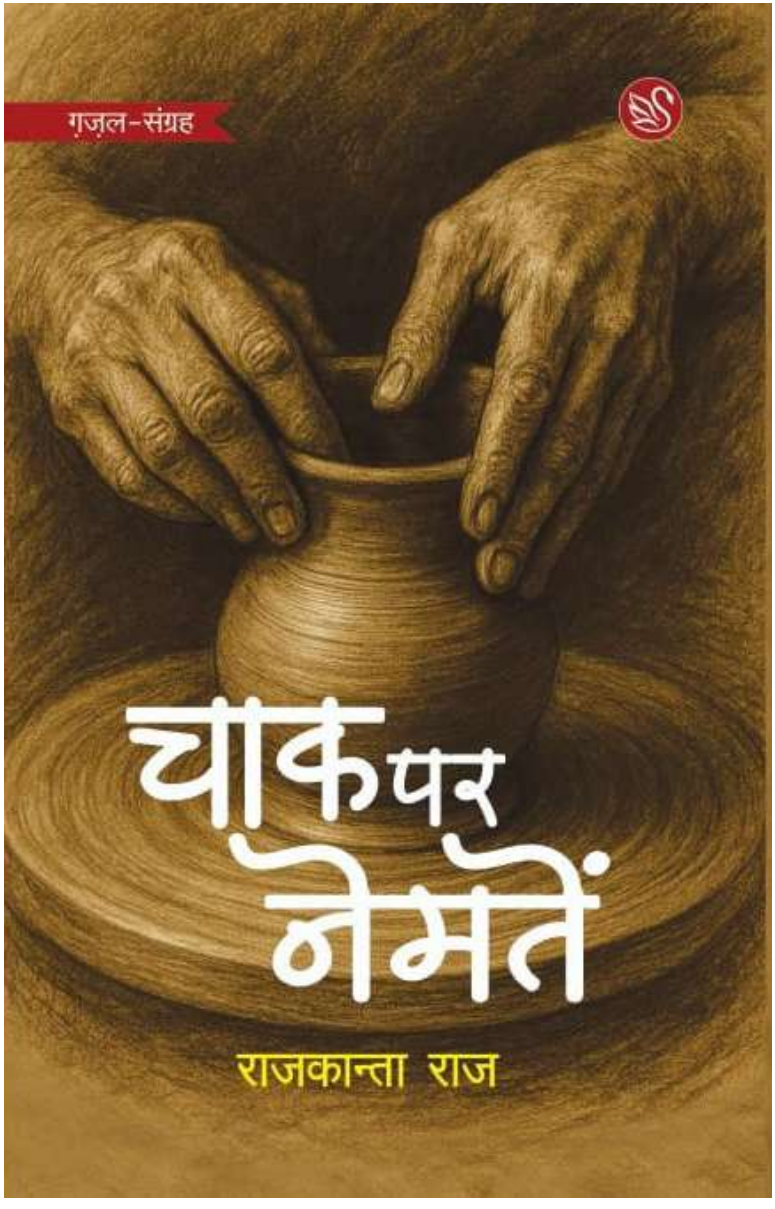
ग़ज़ल-संग्रह
चाक पर नेमतें
राजकान्ता राज

ख़ुशियों की है आमद तुमसे

अरब में जन्मी, ईरान में पली बढ़ी और हिंदुस्तान में शबाब का लुत्फ़ उठाने वाली ग़ज़ल न सिर्फ़ अरबी, फ़ारसी या उर्दू में कही जाने वाली शायरी की मक़बूल और मारुफ़ सिनफ़ है बल्कि यह आज हिंदुस्तान की हर भाषा में कही जाने वाली साहित्य की लोकप्रिय विधा बन गई है। इक्कीसवीं सदी में तो ग़ज़ल आंचलिक भाषाओ यथा भोजपरी, अवधि, मगही, मैथिली, वज्जिका, अंगिका इत्यादि में भी कही जाने लगी है। हिन्दी में तो ग़ज़ल का अति समृद्ध साहित्य हो गया है। पिछले 50 वर्षों में विशेषकर दुष्यंत कुमार के बाद तो ग़ज़ल के आयाम व्यापक हो गए हैं।

ग़ज़ल का एक मतलब औरतों से गुफ़्तगू (बात चीत) भी है और इसे ही भरपूर मान्यता प्राप्त है लेकिन जब औरतें ही गुफ़्तगू पर आमादा हो जाएँ तो क्या कहने। जी हाँ उर्दू और हिन्दी में अनेक महिला ग़ज़लकारों ने ग़ज़ल की ज़ुबान में समृद्ध साहित्य सृजन कर ग़ज़ल को एक नई परिभाषा दी है। डॉ. नलिनी विभा 'नाजली', मधु मधुमन, माधुरी स्वर्णकार, मीना भट्ट सिद्धार्थ, डॉ. सीमा विजयवर्गीय, गरिमा सक्सेना, डॉ. सोनरूपा विशाल, राजेश कुमारी राज, डॉ. रागिनी स्वर्णकार, शुचि 'भवि', इत्यादि अनेक कवयित्रियों ने ग़ज़ल के क्षेत्र में व्यापक कार्य किया है। डॉ. नलिनी विभा 'नाजली' ने तो उर्दू के हर अक्षर को रदीफ़ बनाकर ग़ज़लें कही हैं और हिन्दी में भी यह दीवान प्रकाशित किया है। इस प्रकार हिदी ग़ज़ल विधा में महिलायें सशक्त हस्ताक्षर करने में किसी से पीछे नहीं है।

बिहार की महिला ग़जलकारा भी इस मामले में वर्चस्व बनाए हुए हैं। पद्मश्री स्व. शांति जैन, आशा प्रभात, आराधना प्रसाद, ज्योति मिश्रा, डॉ. भावना, डॉ. आरती कुमारी, डॉ. अनिता सिंह, डॉ. कविता विकास, किरण सिंह, अनुराधा सिंह 'अनु', सोनी सुगंधा, डॉ. नीलम श्रीवास्तव, डॉ. नूतन सिंह, राज कान्ता राज, पूनम सिन्हा श्रेयसी, डॉ. सुधा सिन्हा, रूपम झा, हेमा

सिंह, रंजना लता, इत्यादि ग़ज़ल विधा में काव्य सृजन कर सुयश प्राप्त कर रही हैं। आज ग़ज़लें प्यार मुहब्बत की टैग से बाहर आ कर सामाजिक कुरीतियों के निवारण, स्वच्छ पर्यावरण, सामाजिक और न्याय व्यवस्था की ख़ामियों, बेटियों की तरक़्क़ी, देश-प्रेम, प्राचीन संस्कृति के संरक्षण इत्यादि विषयों को भी ग़ज़ल की सीमा में समेटने लगी हैं।

आज हम पटना से ग़ज़ल सौरभ बिखरने वाली विदुषी कवयित्री राज कान्ता राज के प्रथम ग़ज़ल संग्रह **"चाक पर नेमतें"** की चर्चा करेंगे। राज कान्ता राज की ग़ज़लों का मूल तत्व प्रेम ही है। मिलन, विरह के अलावा उन्होंने राष्ट्र प्रेम, देश प्रेम की भावनाओं को भी अपनी कविता का क्षेत्र बनाया है। बेटी पर इनके सुंदर शे'र हुए हैं तो कहीं कहीं पर दार्शनिक अंदाज के अशआर भी हुए हैं।

दुनिया में अगर प्रेम नहीं होता तो न तो ये दुनिया होती;न चाँद सितारे होते इसलिए जीवन-साथी के लिए प्रेम के शगुन से ही जीवन बसर आसान हो पाता है। कुछ शे'र देखिए

न ये प्रेम होता न दुनिया ये होती
ज़मीं, आसमाँ, चाँद तारे न होते

प्यार का हो शगुन हमसफ़र के लिए
ये ज़रुरी है जीवन बसर के लिए

तुम्हें अपने दिल में रखूंगी बसा कर
सवेरा सुगंधित, हसीं रात होगी

ढूंढती थी बहुत तुम को कातर नज़र
मिल गये तुम तो लब पर हँसी आ गई

शायरा कहती है कि वो तो प्रेम से अनजान थी उसे प्रेमी ने ही सिखाया है कि आशिक़ी क्या चीज है। वो प्रेमी को उलाहना देते हुए कहती है कि जब

उनकी नज़र उससे मिलती है तो वो मिलने से कतराने लगता है जबकि उसे एक दूसरे की ख़ैरियत पूछनी चाहिए। देखिए-

ज़िंदगी ग़म से भरी थी, प्यार से अंजान थी
आपने ही तो सिखाया आशिक़ी क्या चीज़ है

मिल गई है मुझसे जब उनकी नज़र
देखिए मिलने से हैं कतरा रहे

कुछ कहो, कुछ ख़ैरियत पूछो मेरी
क्या पता ये रात कल फिर हो न हो

प्रेमी-प्रेमिका अगर मौसम की तरह न बदलें तो यह बड़ी बात होती है। कुछ मोहक शे'र देखिए-

बदलता है मौसम बदलता ज़माना
मगर हम न बदलें, बड़ी बात होगी

तुमसे ही है घर में रौनक़
ख़ुशियों की है आमद तुमसे

आप आए बहार आई है
ख़ूब रौनक़ बढ़ी है आने से

कभी कभी मज़बूरी में भी जीवन निभाया जाता है उसका वर्णन देखिए-

लबों पर तबस्सुम के ज़ेवर सजाये
क़सम सात फेरों की हमने निबाही

विरह के क्षण, जुदाई की रातें बहुत भारी होती हैं। देखिए शायरा ने कितना सुंदर और सजीव विरह का चित्रण किया है-

जब मुलाक़ात तुम से हो न सकी
दिल से मेरे उतर गया मौसम

करो माफ़ ग़लती मेरी
अजी पास आया करो

सब ठहाके लगाते रहे बज़्म में
मैं ग़ज़ल 'राज' की गुनगुनाती रही

फ़ोन पर कट रही ज़िंदगी आजकल
आप से बात कर दिन गुज़रने लगे

ज़ूम कर रात भर तुम को देखा है बस
फ़ोन पर शब बिताई तुम्हारे लिए

आजकल स्त्रियाँ घर दफ़्तर बाज़ार कहीं पर भी सुरक्षित नहीं है-

मैं कहाँ हूँ सुरक्षित बताओ मुझे
पूछती हर जगह काँच की चूड़ियाँ

बेटी पर कुछ शे'र देखिए-

बेटी ऐसी होती है
जैसे मनका मोती है

मीठी-मीठी बोली से
दिल के भाव पिरोती है

मैं तो हूँ भारत की बेटी
झाँसी से रिश्ता रखती हूँ

कुछ दार्शनिक अंदाज के शे'र देखिए-

अकेले जनम हम लिए हैं धरा पर
अकेले ही धरती से जाना पड़ेगा

राम के लम्स से तर गई इक शिला
ज्ञान गीता का था बंदगी आ गई

स्वच्छ भारत अभियान पर एक शे'र देखिए

उठ रहा कूड़ा कचरा हर इक द्वार से
इक मुहिम चल रहा स्वच्छ घर के लिए

इतना सब होंने के बावजूद देश, देश-प्रेम, राष्ट्र और तिरंगा की महत्ता से शायरा अनजान नहीं है।इन विषयों पर अनेक शे'र आपको चाक पर नेमतें में मिल जाएँगी

बैठ कर बातें करें हम आज हिन्दुस्तान की
शौर्य गाथा की कहानी पूर्वजों की शान की

तिरंगा शान है अपना इसे झुकने नहीं देंगे
रखेँगे हम इसे ऊँचा हमें प्राणों से प्यारा है

अभिमान तिरंगा है पहचान तिरंगा है
रख मान सदा इसका, ये शान तिरंगा है

वतन के लिये मर मिटे वीर कितने
मगन मस्त सरहद पे फिर भी सिपाही

शहीदों की शहादत को कभी भूला न जाएगा
लहू के एक इक क़तरा से हिंदुस्तां सँवारा है

राज कान्ता राज नवोदित कवयित्री हैं। इनकी भाषा परिष्कृत है। कहन स्पष्ट है और शे'रों में रवानी है। अनेक जगह ताज़गी का एहसास होता है। अनेक बह्रों में इन्होंने ज़ोर आज़माइश की है। अगर उचित साहित्यिक परिवेश मिले तो ये बहुत जल्द काव्याकाश का रोशन सितारा होंगी।

मैं इनके सुखद पारिवारिक और सफल साहित्यिक जीवन की कामना करता हूँ। पटना की ख्याति प्राप्त सुकंठी शायरा आराधना प्रसाद के ग़ज़ल संग्रह चाक पर घूमती रही मिट्टी के बाद राज कान्ता राज की चाक पर नेमतें को पढ़ने की दावत उन्हीं के शे'र के साथ देते हुए हर्ष हो रहा है

चाक पर रखना मुसलसल नेमतें
नर्म हाथों से घड़ा गढ़ना सनम

शुभ कामनाओं सहित

पटना, शनिवार
भाद्रपद कृष्ण अमावस्या, संवत 2082
23 अगस्त, 2025

रमेश 'कँवल'
संपर्क 878 976 1287
ई-मेल rameshkanwal78@gmail.com
वेबसाईट-www.rameshkanwal.com

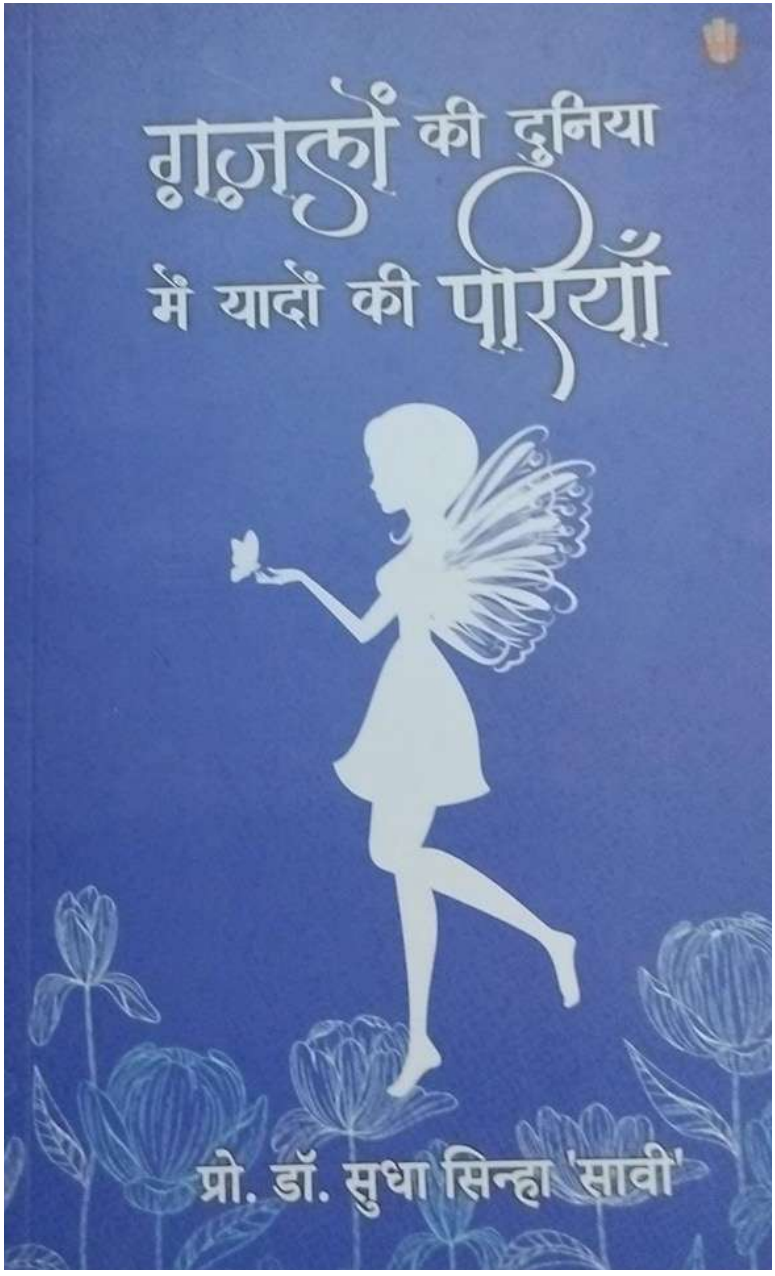
ग़ज़लों की दुनिया
में यादों की परियाँ
प्रो. डॉ. सुधा सिन्हा 'सावी'

"ग़ज़लों की दुनिया में यादों की परियाँ"
डॉ. सुधा सिन्हा-एक ख़ुशनुमा एहसास

डॉ. सुधा सिन्हा 'सावी' की किताब **"ग़ज़लों की दुनिया में यादों की परियाँ"** तरुणाई की काव्य अभिव्यक्ति है जो चिर नवीन और प्रासंगिक रहती है। दर्शन शास्त्र में गोल्ड मैडल प्राप्त एम्.ए., पी.एचडी. 30-35 साल की शिक्षा सेवा में विभिन्न काल खंड के प्रेम लालित्य का रसास्वादन कर जब ये कहे कि

मुझे मेरे ईश्वर ने सब कुछ दिया
किसी चीज़ की अब ज़रुरत नहीं

तो सोचता हूँ कि क्या वाक़ई उन्हें किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं। और हैरत ये कि इसका जवाब तुरंत उनकी शायरी में ही देखने को मिल जाता है:

दनिया में सब कुछ मिल जाये, ना-मुमकिन
ईश्वर की भी कुछ मज़बूरी होती है

ख़्वाब तुम्हारे सिन्दूरी होंगे बेशक
लेकिन हर ख़्वाहिश कब पूरी होती है

आइये तलाश करें कि 'सब कुछ' और 'ख़्वाहिश' की मुराद क्या है इस शाइरा के लिए:

बिखरने लगी हैं लटें, मस्त होकर
अभी बाल हमने सँवारे नही हैं

अभी रूठने की अदाएँ हैं उनकी
सनम जी अभी तक हमारे नही हैं

हवा तुमको छूकर जो आने लगी है
मुझे भी वहीं पर बुलाने लगी है

ठहरने लगी है मिरी ज़िन्दगी अब
तू धड़कन है दिल की बताने लगी है

यानी एक एहसास जिसे हम प्यार का नाम दे सकते हैं दिलो-दिमाग़ से उतरने का नाम नहीं लेता। फ़ुर्सत के लम्हों में जीवन दर्शन पर आख्यान देने वाला दिमाग़ बचपन-यौवन के दर्पण के सम्मुख शोखियाँ करने लगता है। जयतीर्थ की न्याय सुधा का दार्शनिक पक्ष शोध पुस्तक लिखने वाली प्रो.सुधा जीवन काव्य के कोरे पृष्ठ पलटते हुए अपनी विस्मृत भावनाओं को संजोने लगती हैं

यक़ीं तुमको आ जायेगा प्यार पर फिर
'सुधा' को क़रीब अपने लाकर तो देखो

जब भी कोई आहट हो, लगता है कि तुम आये
काश! तुम समझ पाते, कितनी मैं दिवानी हूँ

आप जिनके हबीब होते हैं
उनके कुछ तो रक़ीब होते हैं

नीद आने पे जो छिटक जायें
ख़्वाब वो बदनसीब होते है

तात्पर्य यह कि प्रो.सुधा सिन्हा सावी की प्रासंगिक ग़ज़लों का संग्रह **"ग़ज़लों की दुनिया में यादों की परियाँ"** का मूल तत्व प्रेम है जिस से वे इंकार नहीं करतीं:

रोज़ उभरते रहे रोज़ ढलते रहे
ख़ुश-नसीबी थी तुम साथ चलते रहे

नफ़रतें एक दिन ख़ुद ही मिट जायेंगी
प्यार दनिुया पे अपना लुटाते रहें

यद्यपि कि सुधा जी की शाइरी का भाव पक्ष प्रबल है, प्रशंसनीय है पर उनकी शाइरी में काव्य अभिव्यक्ति शैली पर अभी और प्रयास अपेक्षित है। अब मैं उनकी शाइरी के कुछ ख़ास पहलुओं से आपको रूबरू कराने की इजाज़त चाहता हूँ:

फ़ख्र

नज़र दे रही है वफ़ा की गवाही
लबों की मुहर से मुहब्बत निबाही

नसीहत

ये दूरियों की तपिश से न होगा कुछ हासिल
मिरी खुली हुई बाहों में झूल जाया करो

पिलाओ जाम निगाहों से दिल-रुबा बनकर
मचलती बाहों की मस्ती में कसमसाया करो

बहुत है जोश में चाहत तुम्हारी होने की
'सुधा' तुम्हारी है इसको न तुम पराया करो

चैलेंज

किसी से ज़रा दिल लगाकर तो देखो
निशा करवटों में बिताकर तो देखो

समर्पण

सितम जो करो मुझको मंज़ूर है
मुझे तुमसे कोई शिकायत नहीं

मुझे मार डालेगी ये शायरी
किसी और की अब ज़रुरत नहीं

कोई शिकवा, शिकायत नही अब सनम
मैं तुम्हारे लिए ही मयूरी हुई

अफ़सोस

दिल की धड़कन में तो बस वही बस रहा
जिससे मिलने की कोशिश न पूरी हुई

यक़ीन

मिल ही जायेंगे दोनों यक़ीनन कभी
राह की मुश्किलें गर हटाते रहे

क़ुदरत का एक मंज़र

धीरे-धीरे सितमगर हुई धूप भी
फूलों पर जब रिदा शबनमी आ गयी

विरह वेदना

बढ़ गयी जब विरह वेदना की तपिश
दिलकशी में किसी की कमी आ गयी

यद्यपि कि देश भक्ति या देश के ताज़ा हालात भी उनकी शाइरी के मौजूं रहे हैं

जीने वाले शौक़ से जान लुटाते हैं
देश की ख़ातिर मौत ज़रूरी होती है

सिटिज़नशिप-संशोधन पर है शोर मचा
अफ़वाहो पर चोट ज़रूरी होती है

लेकिन मूलत: वे प्रेम, विरह और समर्पण को अपनी ग़ज़लों का मौज़ूं बनाने वाली शाइरा हैं। उनकी हौसला अफ़ज़ाई ग़ज़ल के गुलशन को एक ख़ुशबू बिखेरने वाले फूल की सौग़ात से मालामाल करेगी। आइये ग़ज़लों की दुनिया में यादों की परियाँ का स्वागत-इस्तक़बाल करें।

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा, 2078
मंगलवार, 13 अप्रैल, 2021

रमेश 'कँवल',
चेयर पर्सन,
बज़्मे-हफ़ीज़ बनारसी, पटना

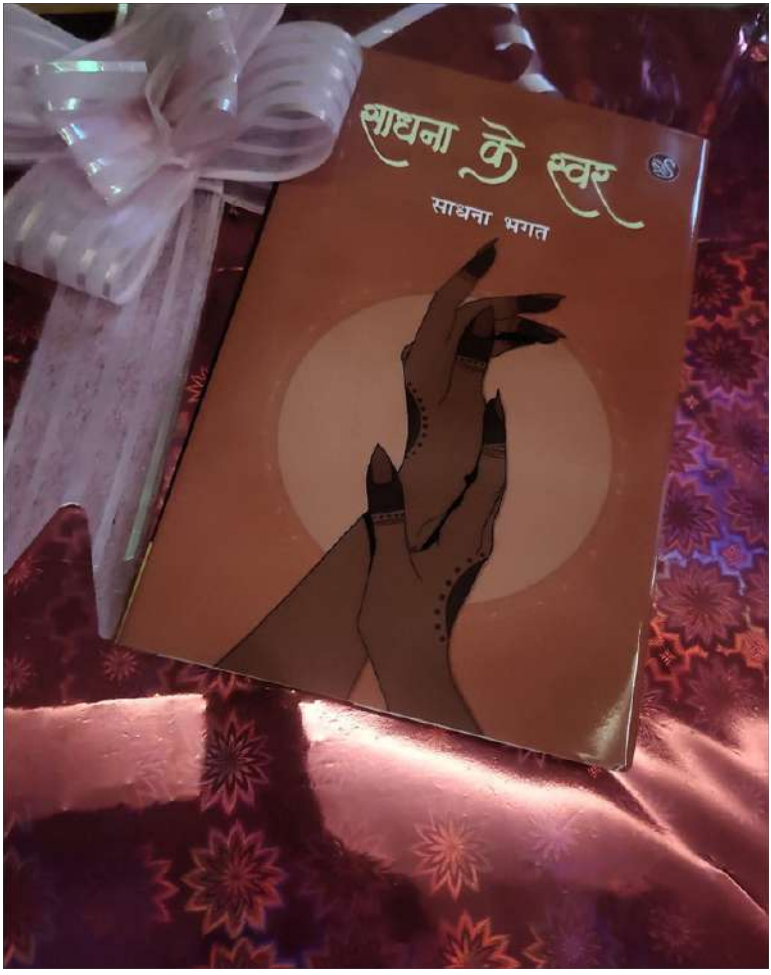
साधना के स्वर
साधना भगत

साधना के स्वर-साधना भगत
साधना के स्वर में साधना भगत की काव्य साधना

जब 'वियोगी होगा पहला कवि, दर्द से उपजी होगी तान' को समझना चाहता हूँ तो कवि के जन्म और कविता सृजन के संदर्भ अनेक बातें मानस के कैनवास पर अपना रंग बिखेरने लगती हैं। वियोग कैसा! क्या प्रेमी का वियोग ही कविता की उत्पत्ति का श्रोत है? तभी मन कहता है वियोग तो अपने किसी भी प्रिय वस्तु, अपेक्षा, भावना, कामना, सौन्दर्य, यौवन इत्यादि की वेदना के संसार में ले जाता है। आस-पास के वातावरण का अनुकूल न होना, सपनों के संसार का बिखर जाना भी पीड़ा की स्वर-लहरी में तैरने पर विवश करता है।

एक किशोरी शुरू से ही सपनों के निकेतन में निवास करती है। यौवन की दहलीज़ पार करने के क्रम में उसका पाणिग्रहण संस्कार होता है। वह अपने सपनों के बाग़ीचा की अमराई से इतर किसी और घर में मेहमान के रूप में आती है और कालांतर में सुशील गृहिणी बन कर गृह स्वामिनी बन जाती है। तब उसकी जीवन यात्रा आरंभ होती है। अगर वह पढ़ी लिखी होती है तो अपने वातावरण के यथार्थ को अपनी कामनाओं की गंगा में डुबकी लगाने के दृश्य को शब्दों का वस्त्र पहनाकर कविता सृजन करने लगती है। यदि शिक्षा का अमृत-पान न कर सकी हो तो उसे अपनी वेदना को आंसुओं की सरिता में बहाने के सिवा दूसरा चारा नहीं होता।

साधना भगत, भागलपुर के शहरी परिवेश में पली-बढ़ी हैं। सुंदरवती महिला महाविद्यालय, भागलपुर से शिक्षित हैं। खगड़िया के नगरीय वातावरण में उन्होंने जीवन के खट्टे-मीठे अनुभव किए हैं। इक्कीसवीं सदी में अपने अनुभव को कविता के लिबास में ढालना शुरू किया है। मेरे सम्मुख उनकी कविताओं की प्रथम पांडुलिपि 'साधना के स्वर' प्रस्तुत है।

विभिन्न विषयों पर उन्होंने अपनी लेखनी से उद्गार प्रकट किया है। लेकिन नारी की व्यथा और प्रेम के संसार को ही उन्होंने प्रमुखता दी है। औरतें किसी भी उम्र की हों उन्हे उपेक्षित ही समझा जाता है। वे बेटियों की शिक्षा के प्रति सजग हैं। उनके अनुसार बिना शिक्षा के प्रचुर सौन्दर्य की स्वामिनी होने का कोई लाभ नहीं।

'युग चरण' से 'कोई अर्थ नहीं ' शीर्षक कविता में में उनके उद्गार देखिए-

जब बेटी पले शिक्षा के बिन
जीवन संघर्ष से थक जाए,
उपहार मिले रूप सौंदर्य का
रह जाता कोई मोल नहीं।

वे बेटियों को शिक्षा देने और खुला आसमान देने की पक्षधर हैं।उनकी कविता बेटियाँ सपनों की ऊंची उड़ान भर लो की कुछ पंक्तियाँ देखिए-

समाज के साथ पूरे ज़माने से टकराती है।
आंच नहीं आने देती अपनी आत्मजा पर

उड़ान के पंख के साथ खुला आसमान भी देती है
उन्हें स्वयं का बोध है।

अपनी कविता मैं मौन हूँ, मैं शांत हूँ!! में उनका विद्रोह देखिए-

मैं मौन हूँ, मैं शांत हूँ
पर ये न समझना मैं हूँ नहीं,

तुमने सिर्फ़ रूदन देखा...
तुमने सिर्फ़ आंसू देखे...

पर देखा नहीं प्रतिरोध मेरा?
उन्हें समय-चक्र का ज्ञान है

'बुरे वक्त की घड़ी चलने लगती है जब कभी
चलते चलते थक के एक दिन ये वक़्त गुजर जाता है'!

(स्वयं का बोध)

उन्हे यह एहसास है कि मुस्कुराहटों से ही दुनिया में परिवर्तन लाया जा सकता है। इसलिए उन्होंने 'तुम मिले' कविता में अपने में आए परिवर्तन को अभिव्यक्त किया है-

बदल दिया है मैंने!
अपना दर्द नई मुस्कुराहटों में,
समझ गई हूँ मैं!
किसी से बदला लेकर...
किसी को बदला नहीं जा सकता...

(तुम मिले)

माँ के प्रति उनके मन में अथाह प्यार और श्रद्धा है
माँ के लिए कुछ हर्फ़ पन्ने और स्याही,
पूरी ज़िंदगी में कहाँ पर्याप्त हो पाया है।।

('मां का स्पर्श')

माँ की याद कविता में माँ के प्रति उनका आदर भाव देखिए-

माँ की याद में
मेरी माँ-
माँ! को कलम से उकेरना,
लहरों पर कविता लिखने जैसा है।
फीका पड़ता है तेज सूरज का,
जब मेरी माँ माथा चूमती है।
माँ! तुम्हारा ओज तेजस्वी है।

वे घरों-परिवारों में वृद्ध होती महिलाओं के दर्द को अपनी लेखनी से अद्भुत रूप से उकेरती हैं-

जो कभी यौवनवस्था में...
चाय की खुशबू की तरह...
अदरक, ईलाईची, दालचीनी के,
रंगीन स्वाद और मधुर संवाद..
बिखेरा करती थीं पूरे घर में!
आज वीरान हैं, ख़ुद के घर में!
रह गई हैं उपेक्षित सी...

(उपेक्षित स्त्रियाँ (पुरखन)

कवयित्री ने स्त्रियों के जीवन की जद्दो-जहद की कितनी सुंदर दृश्य का दर्शन-एक शर्मीली शांत लड़की में कराया है

एक शर्मीली शांत लड़की!!
ज़फ़र की तलाश में!
निकलती है घर से बाहर...
तो चरित्र के उपदेश टांग दिए जाते हैं,
सड़े गले कुछ नियम
उसकी पर्स में डाल दिए जाते हैं
सह नहीं पाती है पीड़ा के,
चारित्रिक आघात...
कोरी पवित्रता के प्रमाण प्रस्तुत करने के
दंश के साथ सफ़ेद चादर समेटती है।

औरत को औरत ही रहने दो।शीर्षक कविता में वे पुरुष वर्ग को ललकारती हैं-

नंगे तुम!तुम्हारी मर्दानगी नंगी।।
सभ्य समाज की व्यवस्था नंगी।।
वरदान मांगती जो पुत्ररत्न की,
वो सस्कृति और सभ्यता नंगी।।

वे स्वीकार करती हैं कि औरतें बहुत ही दिखावा करती हैं लेकिन 'दिखावा करती औरतें' शीर्षक कविता में वे बताती हैं कि वे तथाकथित सभ्य समाज में कितना कुछ छुपाती भी हैं।

दिखावा करती औरतें

"औरतें दिखावा करती हैं
पर सच ये है
वो बहुत कुछ छुपाती हैं
दुनिया भर के ताने, उपहास...
अपनी साधारण सी हँसी,
मुस्कुराहट से छुपाती हैं!
'सब ठीक है' का टैग लगा कर
सारा जीवन, बिताती हैं।
अधिकारी की कुटिल निगाहें
एवं कटाक्ष, बहुत सरलता
से छुपाती हैं, मुस्कुराती हैं
घर आ कर, पति एवं बुजुर्गो
को 'सब ठीक है' बताती हैं!!"

कवयित्री पर्यावरण के प्रति काफी सजग हैं। वे बुजुर्ग पेड़ शीर्षक कविता में बूढ़े पेड़ से बात करती हैं-

पेड़ ने आंसू भरे नैनो से कहा
सालों पहले, किसी ने बोया!
कई पीढ़ियों ने रक्षा किया!
आज तुम मेरे रक्षक बनोगे क्या
बूढ़ा हुआ मैं जवानी छूट गई!
शजर को कटने से रोक पाओगे क्या

साधना भगत की कवयित्री साधना के स्वर में अनेक विषयों यथा मेरी आंखों से समझ लेना, वादा रहा, 14 फ़रवरी वाला इश्क़, वही तो मैं हूँ, हे नारी जागो!, दुआओं की धूप, उम्र की ऐसी की तैसी, मेंहदी तेरे नाम की, देखो छूना ना मुझे, कौन तुम मेरे हृदय में, कोरी कोरी चुनरी, प्रिय मेरा धवल चाँद, ख़्वाबों का शहर, तुम्हारी पसंद, मन का शोर, औरत को औरत ही रहने दो, पुरुष, तरुणी, स्त्रीत्व, आँसू, किवाड़, शिक्षा, मित्रता, सियासत, मुखौटा, बेटियाँ सपनों की ऊंची उड़ान भर लो, मैं एक वोटर पर सुंदर कविताएँ लिखी हैं तो अंतर्राष्ट्रीय बेटी दिवस की बधाई, अक्षय तृतीया की बधाई, नववर्ष, विश्व कविता दिवस, बालिका दिवस की शुभकामनाएँ, महाराणा प्रताप के बलिदान दिवस पर, होली देशभक्ति, वट वृक्ष सी पितरो की छाया, बुजुर्ग पेड़, गांधारी, ऐ वतन इत्यादि शीर्षक से भी मुग्धकारी कविता का सृजन किया है।

उन्होंने सुंदर भाव प्रधान भजन गीत–राधा रानी, प्रभु वंदन, भक्ति गीत, हर हर महदेव, राम आए अयोध्या का भी सृजन किया है।

आज लिव इन रिलेशन की बाढ़ आई हुई है जहाँ धर्म बदल कर छलपूर्वक शादी का चलन बढ़ा है तो प्रेमिकाओं की हत्या कर टुकड़े टुकड़े करने के दृष्टांत भी सामने आ रहे हैं। वहीं कवयित्री पिछली सदी के मशहूर सहजीवन का आख्यान अपनी कविता, इमरोज़ में सुनाती हैं जिनमे साहिर की प्रेमिका अमृता के साहिर प्रेम और इमरोज़ के सानिध्य की चर्चा करती हैं।

कहने का तात्पर्य यह कि कवयित्री ने अपनी कविता को बहु-आयामी बनाया है। लेकिन प्रेम उनका स्वभाव रहा है सौंदर्यप्रिय होना उनकी शान रही है मैं उसी विषय पर उनकी कविता मृगनयनी को उद्धृत कर अपनी लेखनी को विराम देता हूँ-

मृगनयनी

बारिश में भींगा रूप मनोहर!!
मृगनयनी तुम नयन धरोहर!!

मादकता है नख से सिख तक,
रस छलकाती धरा से नभ तक!
यौवन इठलाती मधुशाला,
नयन में कजरा हर्ष का प्याला!

बारिश में भींगा रूप मनोहर!!
मृगनयनी तुम नयन धरोहर!!

मचले उछले कमसिन बाला,
द्वार अधर पे मदिरा, हाला
निखर गुलाबी कोमल काया
सारे पथिक का मन हर्षाया

बारिश में भींगा रूप मनोहर!!
मृगनयनी तुम नयन धरोहर!!

अंगड़ाई ने जी तरसाया
आँचल जब उनका लहराया
यौवन कुंड की ज्वाला भभकी
पहुँची लेकर सुरा कामिनी

बारिश में भींगा रूप मनोहर!!
मृगनयनी तुम नयन धरोहर!!

साधना के स्वर में सुंदर कविता है। भाषा साहित्यिक है। प्रवाह संयमित है। कवयित्री का प्रयास सराहनीय है। माँ शारदे उनकी लेखनी में कला और साहित्य का और भी मधुर तेज प्रवाहित करने की कृपा करें। मैं समाजसेवी-गृहणी-कवयित्री साधना भगत और उनकी प्रथम काव्य कृति साधना के स्वर

की सफलता और स्वीकार्यता की कामना करता हूँ। हिन्दी साहित्य को उनसे बहुत कुछ अपेक्षा है।

इति शुभम्

पटना,
आश्विन शुक्ल प्रतिपदा,
विक्रम संवत 2081 (कलश स्थापन)
दिनांक 3 अक्टूबर, 2024 (शारदीय नवरात्र आरंभ)

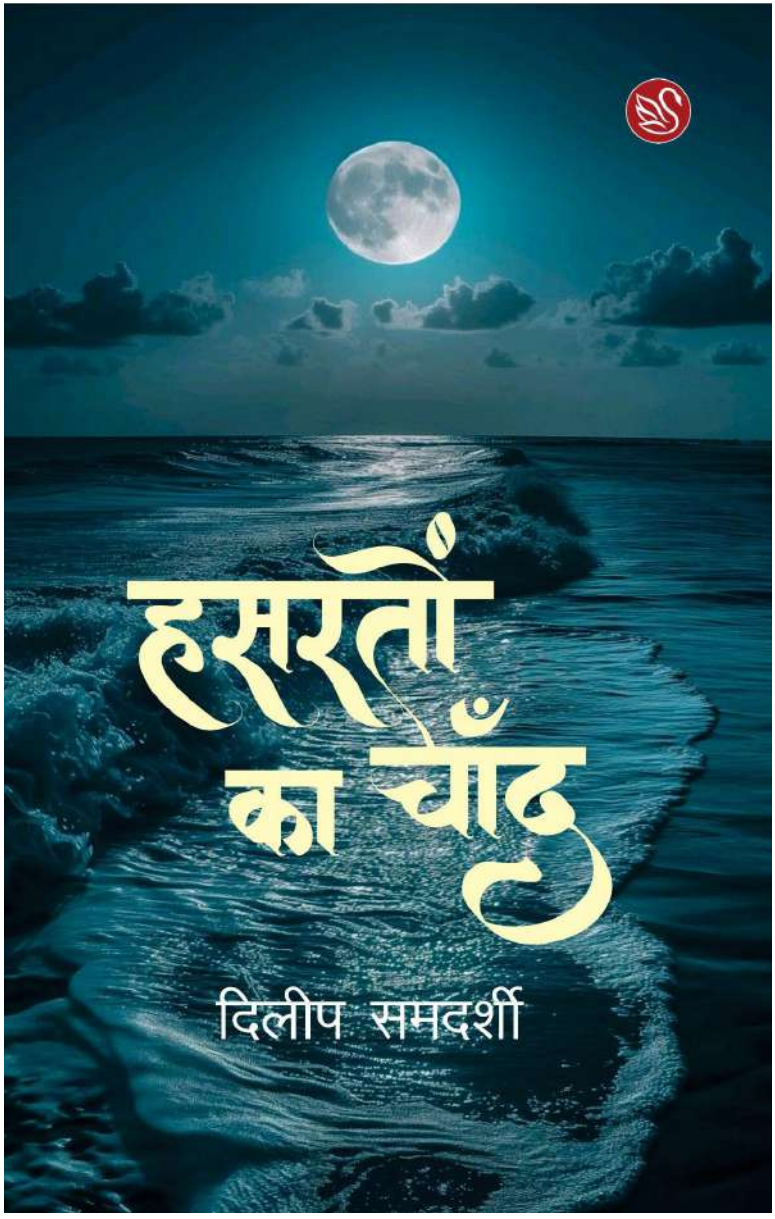
हसरतों
का चाँद
दिलीप समदर्शी

हसरतों का चाँद-दिलीप समदर्शी
साथ है वक़्त जिसके वो राजा तो है

ग़ज़ल आज मस्त ख्यालों के आसमान में पंख फैलाये रोज़ नए मुक़ाम की ओर बढ़ रही है। हिन्दी ग़ज़ल और उर्दू ग़ज़ल के झगड़े थम गए हैं। गीत, कविता से भी ज्यादा लोकप्रिय यदि कोई विधा हो गई है तो वह ग़ज़ल है। यह सभी की प्राथमिकता क्रम में शीर्ष पर है। यह बात अलग है कि उर्दू ग़ज़ल का विषय, विचार वस्तु से परे इन ग़ज़लों ने अपनी सीमा निर्धारित कर ली है। औरतों से गुफ्तगू से चलकर हिन्दी में कही जाने वाली ग़ज़लें प्रेम शृंगार से परे मानवीय समस्याओं, सामाजिक बुराइयों, खेत-खलिहान, किसान और सरहदों की हिफ़ाज़त में घर से दूर रहने वालें जवानों तक से बात करने लगी हैं। अब ग़ज़ल में देश के राहबरों, राजनेताओं, ढोंगियों, पाखंडियों की बातें भी होने लगी है। हिन्दी ग़ज़ल का कैन्वस इतना विशाल हो गया है कि तकनीकी युग और अंतरिक्ष की यात्रा करने से भी परहेज नहीं करता। ग़ज़ल एक करिश्माई विधा बन गई है जिसके दो मिसरों में सारी दुनिया का ज्ञान, सारी संवेदनाएँ, जीवन की अनुभूतियाँ और दिलो-दिमाग़ के अनुभव समाहित किए जा रहे हैं। आज ग़ज़ल अनेक भारतीय भाषाओं पर छाई हुई है।

जब ग़ज़ल इतनी ख़ूबसूरत हो जाए तो उसे चाहने वालों की तादाद बढ़ना लाज़िमी है। बिहार में सीमांचल के अररिया ज़िला में निवास करने वाले दिलीप समदर्शी भी ग़ज़ल की ज़ुल्फ़ें संवारने में लगे हुए हैं। उनसे मेरी पहली मुलाक़ात खगड़िया के एक साहित्यिक कार्यक्रम में हुई। सुन्दर ग़ज़लें कहते हैं:

भीड़ से अपनी अलग पहचान रखिये,
चाहे कुछ भी हो सही ईमान रखिये
देख कर किरदार सीखे यह ज़माना,
कुछ बड़ा करने का वो अरमान रखिये

हसरतों का चाँद उनका दूसरा ग़ज़ल संग्रह है। प्यार-मुहब्बत तो बेशतर शायरों की पहचान है जिससे दिलीप समदर्शी जी भी परहेज़ नहीं कर सके हैं:

चाँद हसरत का निकलना चाहिए,
इश्क़ का गुल भी तो खिलना चाहिए

दर्द जिनसे मिला है हमें
उनसे रिश्ता निभाना पड़ा

धूप में है जले,
छाँव है कब मिले

जिसके दुख में खड़ा थे हमेशा,
उसके दिल से उतर ही गए हम।

लेकिन इन्होने देश प्रेम एवं प्रकृति प्रेम की शायरी भी की है-

लहू से सींच कर भारत की धरती का चमन रखना
ज़रूरत गर पड़े तो सर पे अपने तुम कफ़न रखना

इनकी ग़ज़लों को पढ़ने से महसूस होता है कि इन्होने ज़िंदगी के हर पहलू का स्पर्श किया है-

कोई मोती कोई ढूंढे जग में सोना,
जिस्म तो यारों मिट्टी का है खिलौना

इन्होने जीवन की सच्चाई उजागर करते हुए कहा है:

लोग पागल हैं सभी दौलत के पीछे,
रह गए हैं हम फ़क़त उल्फ़त के पीछे

वक़्त का है यहाँ कौन मारा नहीं
साथ है वक़्त जिसके वो राजा तो है

आदमी को अपने बुरे दिनों में घबराना नहीं चाहिए। पुख़्ता इरादा और भरपूर हौसला से आदमी कठिन से कठिन परिस्थितियों से पार पा जाता है। चलने वालों को ही मंज़िल मिलती है। कुछ शे'र मुलाहिजा हो-

हो इरादों में दम, हौसला हो न कम,
चूम लें आसमाँ ठान कर ही चलें।

चलने वाले ही पाएँगे मंज़िल
पछताएँगे घर पर सोने वाले

एक अच्छा सन्देश देखिये-

हो नहीं दुश्मन किसी का कोई भी,
दिल से नफ़रत को मिटाएँ हम यहाँ।

दिलीप समदर्शी का ग़ज़ल संग्रह **"हसरतों का चाँद"** आपके हवाले।

दिलीप समदर्शी का दावा भी क्या ख़ूबसूरत है-

एक शायर हूँ मुसाफ़िर की तरह मैं,
छोड़ जाऊँगा महक अपनी बिखर कर।

शुभकामनाओं के साथ

पुणे
श्रावण कृष्ण 8 संवत 2082,
दिनांक 18 जुलाई, 2025

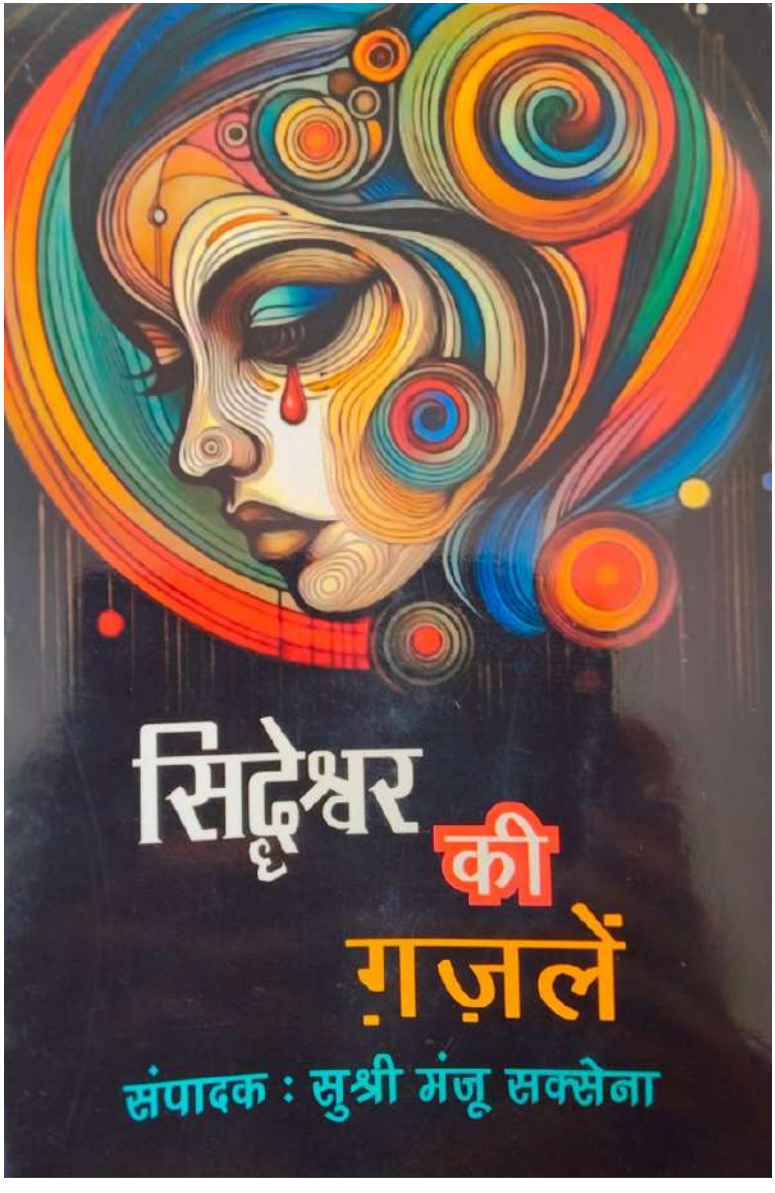
सिद्धेश्वर
की
ग़ज़लें
संपादक : सुश्री मंजू सक्सेना

सिद्धेश्वर की ग़ज़लें-सम्पादन मंजू सक्सेना
ग़ज़ल की आशनाई का जादू सर चढ़ कर बोलता है

ग़ज़ल एक मक़बूल सिन्फ़ है जो उर्दू ज़ुबां के दायरे से बाहर निकल कर देश की कई भाषाओं में काव्य सृजन की विख्यात विधा के रूप में स्वीकार कर ली गई है। अधिकांश कवि हृदय को तब तक चैन नहीं आ पाता जब तक वो ग़ज़ल के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति नहीं कर पाते। मैं जब पटना में एडीएम लॉ एण्ड ऑर्डर के पद पर तैनात था तब मुझे रेलवे में कार्यरत एक पदाधिकारी का अक्सर आमंत्रण मिलता था कि राजेन्द्रनगर टर्मिनल या पटना जंक्शन के परिसर में एक काव्य गोष्ठी में शिरकत करनी है। मैं अपनी तमाम व्यस्तताओं के बावजूद ग़ज़ल से रिश्ता रखने के कारण उन गोष्ठियों में शामिल होने से अपने को रोक नहीं पाता था।

आमंत्रण देने वाले बंधु ग़ज़ल के शैदाई थे। वैसे लघु कथा, समीक्षा, कविता उनकी रुचियों के केंद्र थे। जी हाँ! मैं बात कर रहा हूँ श्री सिद्धेश्वर जी की।

श्री सिद्धेश्वर जी एक सिद्धहस्त चित्रकार हैं। लेकिन कवि गोष्ठियों में पधारने वाले ग़जलकारों से वे इतने प्रभावित हुए कि युवावस्था से ही क़ाफ़िया रदीफ़ को संभालने की कला में माहिर होने के कारण बाक़ायदा ग़ज़ल कहने के क्षेत्र में उतर आए। वे जहाँ यह स्वीकार करते हैं कि ग़ज़ल का सृजन करना, उनके लिए कोई नई विधा नहीं रही है वहीं वे यह भी स्वीकार करते हैं कि साहित्य की तमाम विधाओं में समर्पित होने एवं चित्रकला में मस्त रहने के कारण वे गज़ल के शास्त्रीय पक्ष को कभी गंभीरता से नहीं ले पाए। ग़ज़ल के शिल्प से अनजान रहे।

इतना साहस से अपनी कमी को स्वीकार करने वाले शायर श्री सिद्धेश्वर जी का पहला ग़ज़ल संग्रह आपके हाथों में है।

श्री सिद्धेश्वर जी भावुक शायर हैं। वे भाव प्रवाह में बह जाते है-

आग धरती पे मौसम की जब है लगी
प्यास होंठों की तो तुम बुझाया करो

होता जादू है 'सिद्धेश' हर शब्द में
गीत ग़ज़लों से तुम भी लुभाया करो

और गीत ग़ज़लों को लुभाने के चक्कर में वे आर्तनाद कर बैठते हैं-

अपनी महुब्बतों की कहानी तो भेज दो
जब आग भेज दी है तो पानी तो भेज दो

मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि श्री सिद्धेश्वर जी प्रेम के शायर हैं-

हर तरफ़ तेरी महुब्बत की है खुशबू फैली
मुझको महकाएगी मैं जब भी जिधर जाऊँगा

प्यार का इक़रार जब तुमने किया
दो जहाँ की हम तो ख़ुशियाँ पा गए

लेकिन प्रेम के सिवा भी दुनिया के दर्दों-ग़म के चर्चे इनकी शायरी में है-

ग़ज़ल-गीत को अपनी साँसों में भरकर
परेशाँ बहुत है क़लम का सिपाही

दुनिया के अपार सुख वैभव में रहने वाले लोगों को सावधान करते हुए वे कहते है:

देनी है ग़म को दावत
दस्तरखान बिछाना है
ताम-झाम फ़्लाइट का क्यों
जब कंधों पर जाना है

मानवीय संवेदनाओं और रिश्तों को तार तार करने वाले तत्वों की उनको पहचान है। उनका इशारा देखिए

स्वार्थ, ईर्ष्या, अविश्वास, नफ़रत सभी
क़त्ल रिश्तों का करते वो तलवार हैं

उनके चेहरे पे पढ़ लूँ मैं सारी खबर
आईना भी वही वो ही अखबार हैं

वो ही दुश्मन निकल गया देखो
दोस्ती का जहाँ था भ्रम पाला

झूठ न कह सकता था जब
चुप बेहतर था क्या करता

इस ग़ज़ल संग्रह में अनेक लाजवाब शे'र हैं आप एक नज़र में ही मुतास्सिर हो जाएँगे।

उनके कुछ और शे'र पेश कर मैं आपको उनका यह ग़ज़ल संग्रह पढ़ने की दावत देता हूँ

लग जाए जिस चिराग़ से अपने ही घर में आग
बेशक उसे ज़रुर बुझा देना चाहिए

मानो या न मानो यही सच्चाई है 'सिद्धेश'
पाया है हुनर ने यहाँ सम्मान बहुत है

चढ़ता जाता शादी का बाज़ार है हर दिन
बेटी को बंगला, हीरों का हार दिया है

हिन्दी उर्दू का है न कुछ झगड़ा
मस'अले सिर्फ़ आदमी के हैं

आइए हिदी ग़ज़ल के विस्तृत नभ पर एक उभरते हुए ग़ज़लकार सिद्धेश्वर जी का स्वागत किया जाय और माँ शारदे से प्रार्थना की जाए कि इनकी कलम में अपनी स्नेह ऊर्जा का संचार कर दें।

यथास्तु

पटना-800014
श्रावण कृष्ण पक्ष 7 संवत 2081
दिनांक 27 जुलाई, 2024

कुमार अभिषेक

ग़ज़ल-अरूज़ के आईने में-
डॉ. कृष्ण कुमार 'बेदिल'

प्रत्येक ग़ज़लकार / शायर के दिल में ग़ज़ल कहने की भावना के उदय के साथ साथ ग़ज़ल के छंद ज्ञान (अरूज़) सीखने की ललक भी दिखनी चाहिए। उर्दू शायरी में तो उस्ताद की परिकल्पना है जो शायरी करने वालों को अरूज़ के इल्म से वाक़िफ़ कराते हैं लेकिन बहुधा उस्ताद उनकी ग़ज़लें तो दुरुस्त कर देते हैं लेकिन ग़लतियों को विस्तार से बताते नहीं। यह एक तरह से सही ठहराया जा सकता है क्यूंकि शे'र कहने का उल्लास अरूज़ (सीखने) के बोझ तले दब जाता है। लेकिन इस से ग़ज़ल कहने वाला ख़ुद पंगु बन जाता है और ग़ज़ल कहने के फ़न से नावाक़िफ़ ही रह जाता है। उर्दू और हिंदी में अरूज़ पर अनेक किताबें प्रकाशित हो चुकी हैं जिनको पढ़ कर शायर ग़ज़ल कहने के क्रम में होने वाली ग़लतियों से बच सकता है। यूँ तो उस्ताद /मार्गदर्शक की आवश्यकता कभी कम नहीं होती फिर भी मेरठ के नामचीन और उस्ताद शायर डॉ. कृष्ण कुमार 'बेदिल' ने **"ग़ज़ल-अरूज़ के आईने में"** किताब लिखकर ग़ज़ल कहने में पेश आने वाली दुश्वारियों को सरल करने की कोशिश की है।

ग़ज़ल क्या है; क़ाफ़िया और रदीफ़ क्या होते हैं। उनकी अहमियत क्या है। स्वर और व्यंजन क़ाफ़िया के गुण-दोष और मात्रा गणना कैसे करेंगे का स्पष्ट उल्लेख इस किताब में है। हिंदी छंदों में मात्रा पतन अस्वीकार्य है लेकिन उर्दू शायरी में मात्रा गिराने को ग़लत नहीं माना ग़या है। फिर भी यूँ ही मात्रा नहीं गिराए जा सकते। उनके कुछ नियम हैं। उस्ताद शायर ने मात्रा गिराने के नियमों का विस्तार से उल्लेख किया है।ग़ज़ल कहने में अनेक प्रकार के दोष उभर आते हैं। वे तरह तरह के होते हैं। क़ाफ़िया के दोष, बह्र के दोष और भाषागत दोष से बचने की कला को इस पुस्तक में बारीकी से समझाया गया है।

उर्दू में क ख ग ज फ स अनेक तरह से लिखे जाते हैं लेकिन हिंदी में इस तरह के विकल्प उपलब्ध नहीं हैं। इसलिए हिंदी ग़ज़ल कहने में सौती क़ाफ़िया सर उठाने लगते हैं। इनका ज़िक्र इस पुस्तक में है। इजाफ़त, वाव-ए-अत्फ़ का ज्ञान जो उम्दा ग़ज़ल कहने में सहायक सिद्ध होता है इस पुस्तक में है।

बह्र से परिचित कराने के क्रम में 7 मुफ़रद और 12 मुरक्कब बह्रों की विस्तार से चर्चा की गयी है। उनके अर्कान बताए गए है। मशहूर अशआर के साथ उनकी तक्ती (मात्रा-गणना) करना सिखाया गया है। मात्रा पतन के उदाहरण दर्शाए गए हैं। इन वार्णिक बह्रों के अलावा मात्रिक बह्र जिसे उर्दू के मशहूर आलोचक शम्स उर रहमान फ़ारूक़ी ने बह्र-ए-मीर का नाम दिया की चर्चा भी इस पुस्तक का सौन्दर्य सौष्ठव बढाता है। इस बह्र में भी मशहूर अशआर के साथ उनकी तक्ती (मात्रा-गणना) करना सिखाया गया है

इस पुस्तक की विशेषता यह है कि इसकी भाषा अत्यंत ही सरल है जिससे ग़ज़ल कहना सीखने की तमन्ना रखने वाले शायरों के मन में अदम्य उत्साह भर जाता है। डॉ. कृष्ण कुमार 'बेदिल' का 50-60 वर्षों का अनुभव किताबों के बाज़ार में इस किताब को अनूठी स्वीकार्यता प्राप्त कराने में समर्थ हुआ है। ग़ज़ल-अरूज़ के जानकार भी इस किताब के अवलोकन से अपने ज्ञान दर्पण को चमका सकेंगे।

पुस्तक-ग़ज़ल-अरूज़ के आईने में
ISBN: 978-81-89092-52-8
लेखक-डॉ. कृष्ण कुमार 'बेदिल' (अब स्वर्गीय)
संपर्क-941 009 3943
मूल्य–रु.225/-
समीक्षक-रमेश 'कँवल'
प्रकाशक-विश्व पुस्तक प्रकाशन
304 ए.बी./जी-6 पश्चिम विहार,
नयी दिल्ली-110063

मांझी तुकांत कोष-देवेन्द्र मांझी

शायरी तुकबंदी भी है। तुकबंदी करने के लिए तुक नितांत आवश्यक है। तुकांत नितांत का तुक है। इसी प्रकार अनेक शब्द जिनका अंत एक समान शब्दों से होता है तुकांत कहलाते हैं। तुकांत की कमी न हो इसके लिए तुकांत कोश की कल्पना को साकार किया गया।

सन 1967 में काका हाथरसी ने 32852 तुकांत को समाहित करते हुए 158 पृष्ठों का एक तुकांत कोष निकाला।

बिजनौर हिंदी साहित्य निकेतन ने 2008 में गिरिराज शरण अग्रवाल और मीना अग्रवाल द्वारा सम्पादित 208 पृष्ठों का हिंदी तुकांत कोश का प्रकाशन किया।

केन्द्रीय हिंदी संस्थान में प्रोफ़ेसर रमानाथ सहाय के हिंदी तुकांत कोश में लगभग 14000 शब्दों को क्रमबद्ध किया गया है जो प्रभात प्रकाशन से वर्ष 2017 में प्रकाशित हुआ।

इन सभी तुकांत कोशों में तुकांत तो दिए गए हैं लेकिन उनकी उत्पत्ति, किस भाषा से हैं; उनके अर्थ और प्रयोग के लिए किसी शब्द कोश का सहारा लेना पड़ता है।

श्री देवेन्द्र माँझी ने लगभग 25 वर्षों के श्रम साध्य परिश्रम के बाद एक विस्तृत तुकांत कोष संपादित किया जिसमें तुकांत तो हैं ही उनके अर्थ, उद्गम प्रयोग और व्याकरण का स्पष्ट उल्लेख भी है। इसके बाद आपको अन्यत्र कहीं नहीं जाना पड़ेगा। किताब दो खण्डों में है। प्रथम खंड 1127 पृष्ठों में है और इसमें 26, 456 तुकांत हैं। वहीँ खंड 2 में 972 पृष्ठ और20752 तुकांत है। कुल पृष्ठ 2099 और कुल तुकांत 47208 (सैतालिस हज़ार दो सौ आठ)

प्रत्येक खंड का मूल्य दो दो हज़ार रुपये रक्खा गया है। श्री मांझी जी के अकथ परिश्रम को देखते हुए तुकांत कोष का मूल्य तो अधिक नहीं है लेकिन

शायरों की क्रयशक्ति को देखते हुए दूर की कौड़ी है। वैसे दोनों खंड लेने पर इसमें 1000/-एक हज़ार रुपये की रियायत दी गयी है।

इसे के बी एस प्रकाशन दिल्ली ने प्रकाशित किया है जिनका मोबाइल नम्बर 987 193 2895 / 986 808 9950 /880 024 8432

तुकांत कोष को इसके लेखक श्री देवेन्द्र मांझी ने अपने स्मृतिशेष पिता गोपी चन्द गोयल को समर्पित किया है।

ये दोनों खंड प्रत्येक शायर की लाइब्रेरी के लिए अपरिहार्य हैं। क्योंकि जब मन माफ़िक़ क़ाफ़िया नहीं मिलते हैं तो रदीफ़ को संभालना मुश्किल हो जाता है।

मैं समझता हूँ कि यदि श्री देवेन्द्र माँझी (मोबाइल 981 079 3186) या प्रकाशक से अनुरोध किया जाय तो वे शायरों के लिए इसे प्राप्त करने में अतिरिक्त रियायत की व्यवस्था अवश्य करेंगे।

मैं इस माँझी तुकांत कोष के लिए अपनी शुभकामना व्यक्त करता हूँ।

रमेश 'कँवल'

एक ही बह्र में प्यासा अंजुम की 444 ग़ज़लें: रमेश 'कँवल'

ग़ज़ल मस्त सिनफ़ है। इसकी मस्ती की कहानियाँ लगभग हर भाषा के साहित्य में देखने को मिल जाती हैं। जम्मू का एक नेक इंसान विजय उप्पल इसकी दीवानगी में इस क़दर मुब्तला हुआ कि वह प्यासा 'अंजुम बन गया। लोग शायरी करते हैं तो अनेक बह्रों से रूबरू होते हैं। हर बह्र में ग़ज़ल कहते हैं। लेकिन अंजुम साहब ने जो काम किया है उसकी मिसाल उर्दू शायरी या हिन्दी ग़ज़ल के इतिहास में कहीं नहीं मिलती।

बह्र: बह्रे-ख़फ़ीफ़ मुसद्दस मख़बून महज़ूफ़
अर्कान: फ़ाइलातुन मफ़ाइलुन फ़ेलुन/फ़इलुन
मात्रा भार: 2 1 2 2 1 2 1 2 2 2 /112
मात्रास्तम्भ: राम जैजै हरे हरे रामा /भ ज रे

यह बह्र प्यासा अंजुम साहब को इतनी पसंद आई कि पिछले 30-40 वर्षों में इन्होंने इस बह्र में 400 से ज़्यादा ग़ज़लें कह डाली और ग़ज़ाला उनवान से इस बह्र में 444 ग़ज़लों का मजमुआ आपके हाथों में है।

प्यासा अंजुम साहब मूल रूप से रुमान के शायर हैं जिसकी तसदीक उनके रूमानी अशआर से नुमायाँ होती है। आप भी देखिए:

याद मैं बार बार करता हूँ।
आपका इंतज़ार करता हूँ ॥

हद से ज़्यादा तुम्हें रुलाएगे।
जब भी हम याद तुमको आएगे॥

याद उस दिन हमारी आएगी।
धोख़ा जिस दिन कहीं से खाओगे॥

इश्क़ में अब न यूं जलाओ तुम।
पास आके न दूर जाओ तुम॥

इश्क़ पर ज़ोर चल नहीं सकता।
हर किसी दिल में पल नहीं सकता॥

डूब कर हम निकल नहीं पाए।
झील सी उनकी गहरी आखों में॥

आखों में जो नशा दिखा 'अंजुम'।
है कहाँ वो नशा शराबों में॥

हो चुका है बहुत मिलन अपना।
अब जुदा तुझसे फ़िर हुआ जाए॥

बावफ़ा हो के क्या मिला 'अंजुम।
बेवफ़ा हो के अब जिया जाए॥

अपनी क़िस्मत ख़राब थी वरना।
हर कोई बेवफ़ा नहीं होता॥

लेकिन कुछ ज़िन्दगी की तल्ख़ हक़ीक़त की तरफ़ भी अंजुम साहब ने इशारा किया है मुलाहिजा हो

जब से बदली है इस नगर की हवा।
तब से डर सबके दिल में पलता है॥

उठ रही उन पे उँगलियाँ 'अंजुम''।
रास्ते जो दिखाने वाले हैं

साथ दुनिया के जो नहीं चलता।
छोड़ देता उसे ज़माना है॥

इसलिए उन्होंने कुछ मशविरा देने से भी परहेज़ नहीं किया है:

भाईचारे का अब पढ़ाओ सबक़।
मज़हबों में बटी हवाओं को॥

वक़्त के साथ चलना छोड़ के तुम।
ज़िंदगी को मुहाल मत करना॥

अपने माज़ी में डूब कर 'अंजुम'।
तुम बुरा अपना हाल मत करना॥

छू सको उड़ के हर बुलंदी को।
इतना जज़्बा उड़ान में रखना॥

खुद–ब-खुद आएँगे खयाल अच्छे।
सोच का दायरा खुला रखना॥

आ करें फिर से आज बात नई।
पिछली बातें तमाम रहने दो॥

तो आइये एक ही बह्र में 444 ग़ज़लों का लुत्फ़ उठाइये।

ऐसी किताब आपने पहले कभी नहीं देखी होगी। यह हिंदी ग़ज़ल में एक मील का पत्थर साबित होगा। माँ वीणावादिनी अंजुम साहब की लेखनी में और ऊर्जा भर दें जिस से वे ग़ज़ल की और भी ख़िदमत कर सकें। यथास्तु!

शुक्रिया

पटना

पौष शुक्ल 9 संवत 2081

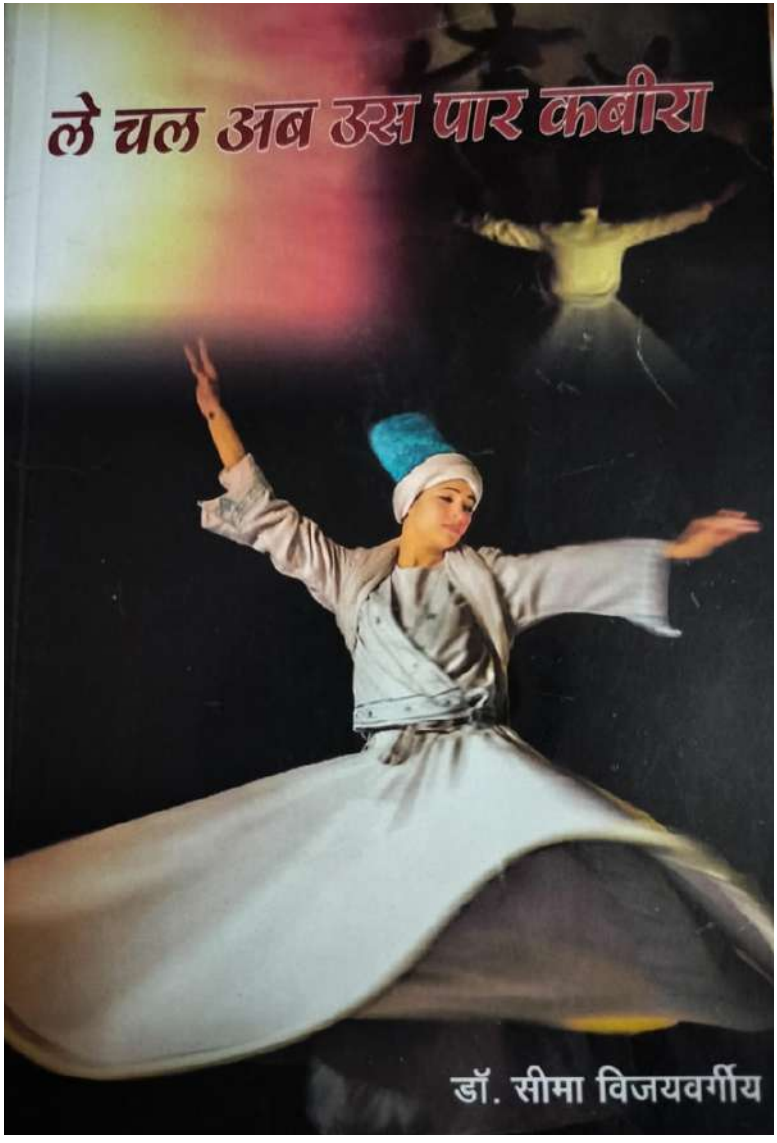
ले चल अब उस पार कबीरा
डॉ. सीमा विजयवर्गीय

'ले चल अब उस पार कबीरा'-
डॉ. सीमा विजय वर्गीय

बिहार हिंदी साहित्य सम्मलेन के 41 वें अधिवेशन में अलवर, राजस्थान से डॉ. सीमा विजय वर्गीय पटना पधारी थीं। उन्होंने अपना ग़ज़ल संग्रह 'ले चल अब उस पार कबीरा' मुझे उपहारस्वरूप भेंट की थी। यह किताब उनका पहला प्रयास है। मुझे कुछ अशआर पसंद आए। उन्हें आपकी ख़िदमत में पेश कर रहा हूँ

1

अम्बर को छूने की ज़िद में
बढ़ता जाए एक परिंदा
रोज़ शाम को मेरी छत पर
ग़ज़ल सुनाए एक परिंदा

2

मुझसे मिलने आया कर
मुझसे नज़र मिलाया कर
पास बुलाकर मुझको तू
दूर न मुझसे जाया कर

3

कितना हँसता गाता बचपन
सबके मन बस जाता बचपन
जब भी बात पढ़ाई की हो
चुपके से सो जाता बचपन
विद्यालय जाने से पहले
पेट दर्द चिल्लाता बचपन

4

जो ख़ुद से अंजान हुआ है
वो ही जग की शान हुआ है
अपनी राह बनाए जिसने
उसका ही सम्मान हुआ है

5

उलझा रहता है वो ख़ुद में
मुझको लेकिन सुलझाता है
दूर कहीं बैठा है फिर भी
हर पल पास नज़र आता है

6

काश कभी तुझको लिख पाती
पढ़ लेता तू मन की पाती
साँसें जब थमने लगतीं तो
तुझमें ही मैं लय हो जाती

7

फूलों वाली उस बस्ती में
मुझको भी अपना घर दे दो
प्यार भरे इक दो लम्हे ही
मुझको मेरे दिलबर दे दो

डॉ. सीमा विजय वर्गीय के लिए अशेष शुभकामनाएँ

क़ौमी यकजहती में उर्दू ज़ुबानो-ग़ज़ल का रोल-
रमेश कँवल

ग़ज़ल शायरी का बेहतरीन अंदाज़ है।
रिवायती लबो लहजा ग़ज़ल की आबरू है।

लेकिन ग़ज़ल के रिवायती मौज़ू से हट कर दिलों की अनुभूतियों को आधुनिक उपमाओं एवं उपमान के साथ नर्मो-नाज़ुक लहजे में समय के सुर पर पेश करना ग़ज़ल की शान और जान है. आज का इन्सान अपनी व्यस्तताओं एवं प्राथमिकताओं की कश्मकश से जां-ब-लब है. मोहब्बत की चांदनी अज़ीज़ है उसे लेकिन ग़रीबी, भूख, बेरोज़गारी, कुंठा एवं तनाव की धूप उसे परेशां किये हुए है. देश के रहनुमाओं के व्यवहार उसे मायूसी के जंगल में भटकने पर मज़बूर कर रहे हैं. फिर भी दिल दिल है. वह ख़ूबसूरत एहसास की चादर से निकलना ही नहीं चाहता. प्यार, मिलन, जुदाई, इंतज़ार, यादें, शिकवा, शिकायत, बेबसी, मायूसी आज भी जज़्बात को मुतास्सिर करते हें. आज भी क़ुदरत और औरत का हुस्न दिलों में गुदगुदी पैदा करता है. महबूबा आज भी दिलकश मंज़र पेश करती है. ख़ूबसूरत एहसास जगाती है.

खवातीनो-हजरात!

ये जज़्बा पूरे हिंदुस्तान की पहचान है. इस पहचान को कायम रखने में साथ देती है उर्दू ज़ुबान और इसका दिलकश अंदाज़. राष्ट्रीय एकता की मिसाल और क्या हो सकती है:

ये दर्द का रिश्ता भी किस दर्जा दिलारा है
हम ने भी सदा दी है जब तुम ने पुकारा है

मेरे खयाल से तो क़ौमी यकजहती का मसअला न तो हिन्दुओं का मसअला है न ही मुसलमानों, सिख या ईसाईयों का...ये खुराफ़ात बस सियासत

पसंद लोगों और सियासतदां हज़रात का ही है. वरना हर काम हो रहा है मुहब्बत के नूर में. और हो भी क्यों नहीं...

तुम लाख सितम ढाओ हम प्यार न छोड़ेंगे
वह काम तुम्हारा है यह काम हमारा है

मुहतरम दोस्तो!

मुझे कहने दीजिये कि उर्दू जुबां की मीठी चाशनी में मुल्क के हर मज़हब और हर धर्म के लोगों के काम ब आसानी अंजाम पा जाते हैं. मैं आपका तआरुफ़ इस ज़ुबान की वुसअतों से कराने की ज़रूरत महसूस नहीं करता मैं तो सिर्फ़ इसकी एक नाज़ुक सिन्फ़ ग़ज़ल की पुरअसर ताक़त से रूबरू कराना चाहता हूँ. मुल्क के हर हिस्से में ग़ज़ल कहने वाले दोस्तों ने क़ौमी यकजहती का ऐसा ताना बाना बुना है जिसकी मिसाल कहीं और नहीं मिल सकती.

जब मुरादाबाद से मंसूर उस्मानी कहते हैं:

ज़िन्दगी भर की कमाई है ग़ज़ल की खुशबू
हमने मुश्किल से बचाई है ग़ज़ल की खुशबू
तुमने दुनिया को अदावत के तरीक़े बांटे
हमने दुनिया में लुटाई है ग़ज़ल की खुशबू

-मंसूर उस्मानी

तो भोपाल से अनवारे इस्लाम कहते हैं:

दुआयें माँ की सदा छांव बन के चलती हैं
सफ़र की धूप में ये सायबान ले लेना
लिखो जो गीत तो हिन्दी ही सबसे बेहतर है
ग़ज़ल के वास्ते उर्दू ज़ुबान ले लेना

-अनवारे इस्लाम

तो ग़ाज़ियाबाद से रमा सिंह अपना तजुर्बा बयान करती हैं:

अश्क को जिस दिन से पीना आ गया
बस मुझे उस दिन से जीना आ गया

ऐ 'रमा' जब से ग़ज़ल के साथ हूँ
बात करने का क़रीना आ गया

और नई दिल्ली से राज गोपाल सिंह कहते हैं:

चढ़ते सूरज को लोग जल देंगे
जब ढलेगा तो मुड़ के चल देंगे
तुम हमें नित नई व्यथा देना
हम तुम्हें रोज़ इक ग़ज़ल देंगे

-राज गोपाल सिंह

बिहार के लेनिनग्राद बेगुसराय के एक शायर शिव नंदन सिंह कहते है:

इस ग़ज़ल को गुनगुना तो लीजिये
एक शायर की दुआ तो लीजिये
इन दहकते दिन, सुलगती रात से
प्यार का लम्हा चुरा तो लीजिये

-शिव नंदन सिंह

पर मुंबई में आंध्र प्रदेश का शायर राजेश रेड्डी की बात ही निराली है:

हर शै नहा रही है अजब सी मिठास में
तुम जब से बस गए हो मेरे मन की प्यास में
मन में उतर रहे हैं किसी संत के चरण
ग़ज़लें उतर रही हैं भजन के लिबास में

-राजेश रेड्डी

और कुंवर बेचैन का जलवा ही कुछ और है:

रह तो लिए हो इतने दिनों चांदनी के साथ
अब ज़िन्दगी की धूप में आ कर ग़ज़ल कहो
कोई तुम्हारे दिल में न उतरे तो क्या हुआ
तुम ही किसी के दिल में समा कर ग़ज़ल कहो

-कुंवर बेचैन

लेकिन डा. गणेश गायकवाड़ ने सोहबते-ग़ज़ल का ज़िक्र बड़े ही ख़ूबसूरत अंदाज़ में पेश किया है:

तुम्हारा ज़िक्र ग़ज़ल है तुम्हारी बात ग़ज़ल
हमारे साथ हो तुम तो हमारे साथ ग़ज़ल
हमारी ज़िन्दगी इसने बदल के रख दी है
ज़रा सी देर रही थी हमारे साथ ग़ज़ल

-डा. गणेश गायकवाड़

कांगड़ा घाटी, हिमाचल प्रदेश से प्रेम भारद्वाज कहते हैं:

छोड़ कर बर्बाद सबको ख़ुद मज़ा ले जायेगा
देखना इक दिन सभी को वो दग़ा दे जायेगा
देखना वह रहनुमा ख़ुद लूटकर यह कारवां
जा के थाने में तुम्हारा ही पता दे जायेगा

-प्रेम भारद्वाज

यू.पी.से अदम गोंडवी कहते हैं:

ग़ज़ल को ले चलो अब गाँव के दिलकश नज़ारों में
मुसलसल फ़न का दम घुटता है इन अदबी इदारों में

हरियाणा साहित्य अकादमी के अध्यक्ष डा.श्याम सखा श्याम का तजरुबा सुनिये:

अब तक जितने घर देखे
सब में बैठे डर देखे
घूस मिली हर कुर्सी पर
जितने भी दफ़्तर देखे

अपने बिहार में मुंगेर से अनिरुद्ध सिन्हा कहते हैं:

धूप, पानी, हवा, डिग्रियाँ खा गयीं
पद, प्रतिष्ठा, ख़ुशी, कुर्सियाँ खा गयीं
रंग मेहदी के पैरों से छूटे नहीं
शर्म का आचरण रोटियाँ खा गयीं

सुरेन्द्र शजर सिख धर्म मानते हैं. लेकिन उर्दू में बेहतरीन ग़ज़लें कहते हैं:

दर्द को दिल के पास मत रखना
ख़ुद को इतना उदास मत रखना
शेख़ साहब नज़र से पीते हैं
उनके आगे गिलास मत रखना

मोना हैदराबादी इसाई हैं लेकिन वे ग़ज़ल के हवाले से क़ौमी यकजहती को मज़बूत बनाती हैं:

रोना तो इसी का है कि रोना नहीं आता
दामन मुझे अश्कों से भिगोना नहीं आता
काटेंगे कहाँ से वो बशर फ़सल-ए-रिफाक़त
इख़लास दिलों में जिन्हें बोना नहीं आता

काठुआ, जम्मू-कश्मीर से उषा मोंगा कहती हैं:

तमन्ना ये है, मैं ख़ुद को मिटा दूँ
ज़माने की सभी, रस्में निभा दूँ
न रक्खूं याद, मैं कोई भी शिकवा
हैं जितने भी गिले, सबको भुला दूँ

ख़्वातीनो-हज़रात!

दतिया, मध्य प्रदेश से परशुराम शुक्ल, ग्वालियर से महेश अनघ, गोंडा यू.पी.से अदम गोंडवी, झाँसी से अनामिका रिछारिया, फरीदाबाद से हरे राम समीप, पटना से प्रेमकिरण, आर.पी.'घायल', अरुण कुमार आर्य, बड़ोदरा से शिव कनाटे, कोटा से कृष्णा कुमारी कमसिन, इलाहाबाद से रमेश नाचीज़, अलीगढ़ से नीरज, बरेली से राम प्रकाश गोयल, महाश्वेता चतुर्वेदी, शगुफ्ता ग़ज़ल, हिसार, हरियाणा से उदय भानु हंस, भोपाल से रमेश महेश्वरी, किशन तिवारी, मथुरा से महेंद्र हुमा, ज़िला ठाणे से नरहरी, इन्दौर से चन्द्र सेन विराट, दिल्ली से अल्हड़ बीकानेरी, दीक्षित दनकौरी, जमालपुर बिहार से रमेश नीलकमल, अहमदाबाद से भगवानदास जैन, जोधपुर से अक्षय गोजा, दुर्ग छत्तीसगढ़ से बसंत देशमुख, गुजरात अब मुंबई से लक्ष्मण, रेखा किंगर रौशनी,

उज्जैन से भागीरथ बडोले, मेरठ से किशन स्वरुप, जमशेदपुर से निर्मल मिलिंद, लखनऊ से देवकी नंदन शांत, शांताक्रुज, मुंबई से हस्ती, नागपुर से माधुरी राउलकर, वगैरह बेशुमार शायर-अदीब दोस्त भरे पड़े हैं जो ग़ज़ल की ज़ुबान के हवाले से क़ौमी यक जहती की शम्मअ जलाये हुए हैं

धडकनें जब कभी उदास हुईं
उनको कहते हुए ग़ज़ल देखा

लिहाजा जब तक उर्दू ज़ुबान की आन बान शान क़ायम है मुल्क में क़ौमी यक जहती को कोई ख़तरा नहीं है. आप इत्मिनान रखें

यहाँ पर मैं दो शख़सियत का ज़िक्र करना मुनासिब समझता हूँ जिन्होंने उर्दू के फ़रोग के लिए बेहतर कारनामे अंजाम दिये हैं:

1. प्रकाश पंडित मरहूम, और
2. दीक्षित दनकौरी

दोनों हज़रात ने देवनागरी रस्म-उल ख़त में उर्दू के शायरों और उनके कलाम से सभी को आशना कराया. मेरी गुज़ारिश होगी कि बिहार उर्दू अकादमी उर्दू को सिर्फ़ फ़ारसी रस्म उल ख़त तक ही महदूद न समझे बल्कि देवनागरी लिपि में उर्दू की ख़िदमत करने वाले शायरों-अदीबों की हौसला अफ़ज़ाइ की योजना भी बनाये.उर्दू दां शायरों-अदीबों के साथ साथ दीगर रस्मुल खत में उर्दू की ख़िदमत करने वाले लोगों का डाटा बेस बनाये. उन्हें इनाम और एजाज़ से नवाजे. उन्हें मेल /SMS से अकादमी की हलचलों से वाक़िफ़ कराये. अपने प्रोग्राम्स में इनवाइट् भी करे.

बहुत बहुत शुक्रिया

23 मार्च, 2014 रमेश 'कँवल'

*** बिहार उर्दू अकादमी के सभागार में एक अदबी इजलास में पढ़ा गया**

रमेश 'कँवल' का साहित्यिक साक्षात्कार

सवाल: बिहार में बदलते सांस्कृतिक और राजनीतिक परिवेश में आप ग़ज़ल की भूमिका को किस तरह से देखते हैं?

जवाब: ग़ज़ल जिस परिवेश से हिंदुस्तान में आई अब उस परिवेश में व्यापक बदलाव हो चुका है। ईरानी और अरबी सभ्यता का प्रभाव तो उस पर कालांतर में ही समाप्त हो गया लेकिन अभी भी उसमें हिंदुस्तानी सभ्यता-संस्कृति का सुगंध आना शेष है। यहाँ पर लोकतंत्र होने के कारण इसका राजनीतिक परिवेश भी बदल गया है।

1969 में फ़िराक़ गोरखपुरी को ज्ञानपीठ पुरस्कार की घोषणा के बाद उन्होंने कहा कि उर्दू ग़ज़ल को हिंदुस्तान में आए अरसा हो गया फिर भी उसमें यहाँ के खेत-खलिहान, सभ्यता-संस्कृति, गंगा-यमुना और हिमालय नहीं दिखते।

वर्ष 2024 में भारत में श्री राम जन्म भूमि पर बालक राम के भव्य मंदिर निर्माण के साथ ही एक नए सांस्कृतिक युग का श्री गणेश हो गया है। वर्तमान परिदृश्य में हमारी उत्कृष्ट संस्कृति का पुनरुत्थान हमारे लिए संतोष और गर्व का विषय है-

बुनियाद पड़ रही है प्राचीन सभ्यता की
ऐसा हज़ारों बरसों तक में हुआ नहीं है

राजनीतिक विचार धारा में इस हद तक परिवर्तन हुआ है कि अब भ्रष्टाचार मुक्त भारत की परिकल्पना की जाने लगी है जिसमें 'सबका विकास: सबका प्रयास' नारा जनमानस में हिलोरे मारने लगा है।

ऐसे में ग़ज़ल को तब तक चैन कहाँ जब तक दकियानूसी विचारों से ये पल्ला न झाड ले। ग़ुलामी मानसिकता से स्वतंत्र भारत जब प्रथम प्रधानमंत्री के रूप में नेताजी सुभाष चंद्र बोस को राजपथ से परिवर्तित कर्तव्य पथ के

निकट स्थापित करता है; अरबी-ईरानी मर्यादा में बंधी मुस्लिम महिलाओं को तीन तलाक के दंश से मुक्त करता है; नए संसद भवन में वक़्फ़ नियमावली में संशोधन का प्रस्ताव रखता है; अंतरिक्ष सहित सभी क्षेत्रों में विकास के नए आयाम गढ़ता है; अप्रतिम ऊंचाइयों का स्पर्श करता है तब ग़ज़ल भी अपनी भूमिका तलाशने लगती है

हम पे अमृतकाल की मस्ती चढ़ी
हम तरक़्क़ी के हिमाचल हो गए

जिसने इद्दत से, हलाला से दिलाई है नजात
क्या लिखे कोई जो 'मोदी' को पयंबर न लिखे

रहते हैं सुख छैन से दोनों कँवल'
तुलसी और रैदास अपने गाँव में

राष्ट्रहित में कार्यरत कुछ
रहबरों का क़ाफ़िला है

बदलते सांस्कृतिक और राजनीतिक परिवेश में ग़ज़ल को न तो विधर्मी संस्कृति, न ही औपनिवेशिक स्मृतियों से प्रभावित होना चाहिए न ही देश के आत्म गौरव से आँखें मूँद लेनी चाहिए। और आप पाएँगे कि

शहरों के महंगे कोठों पर गुमसुम थी
चैन मिला निर्धन के घर जब आई ग़ज़ल

नुक्कड़ पर के चाय के संग बल खाती है
होटल में कालीनों पर घबराई ग़ज़ल

मूलतः हिन्दी भाषी कवि ग़ज़ल के पारंपरिक स्वरुप को समझकर न केवल नई शब्दावली वरन वर्तमान के जटिल भाव-बोध को अशआर में बाँधने में सक्षम हैं बल्कि आज कई हिन्दी ग़ज़लकार नए-नए, बिम्बों, प्रतीकों और

प्रयोगों के साथ बहुत अच्छी ग़ज़लें कह रहे हैं। ग़ज़ल अब समकालीन कविता की एक प्रमुख विधा बन गई है और ग़ज़लों की विषय-वस्तु का फ़लक भी बहुत बड़ा हो गया है. या यूँ कहें कि अब कोई भी विषय ग़ज़लों के लिए निषिद्ध है ही नहीं.

ग़ज़ल के शिल्प और अनुशासन के प्रति ग़ज़लकार गंभीर हैं

रमेश 'कँवल'
8789761287

जीवन के रंग इंद्रधनुषी छटा के संग-
डॉ. सुधा सिन्हा

जीवन के रंग और मौत के ढंग को अगर सुधा की लेखनी के सँग देखा जाए तो इंद्रधनुष के सात नयनाभिराम रंग दिखाई पड़ते हैं। पहले रंग सीमित संख्या में अपनी पहचान बताते थे लेकिन जब से डिजिटल रंगों का युग आ गया है तब से प्रो. सुधा सिन्हा को 4-4 इंद्रधनुष भी कम पड़ने लगे हैं। यही कारण है कि उन्होंने 28 आलेख के माध्यम से जीवन में रंगों की तलाश करने का प्रयास किया है।

1. सर्वांगीण विकास,
2. सर्वधर्म सदभावना,
3. परिवार,
4. परिवार-संस्कारों की पाठशाला,
5. टूटते परिवार,
6. दहेज़-एक अभिशाप,
7. बदलते परिवेश में महिलाओं की वेशभूषा,
8. पाश्चात्य का अंधानुकरण
9. आदर्श गृहिणी,
10. वेलेंटाइन डे और प्यार
11. दर्शन, जीवन दर्शन और
12. कोरोना काल में जीवन दर्शन,
13. विज्ञान दर्शन और आध्यात्म,
14. बुजुर्ग पीढ़ी और युवा पीढ़ी का तालमेल,
15. मोबाईल
16. युवा वर्ग की मानसिकता,

17.परीक्षा फल और बेबसी,

18.शिक्षा जगत की बदहाली और शिक्षकों की भूमिका,

19.भ्रष्ट्राचार की रोकथाम

20.हुनर और रोजगार,

21.नलिनी जी और स्त्रीशक्ति,

22.संगति का असर,

23.रिश्तेदारी,

24.त्योहारों की प्रासंगिकता,

25.मानव मन एक अनबूझ पहेली,

26.मानव धर्म और रवींद्र नाथ ठाकुर,

27.राधाकृष्णन के शिक्षा एवं धर्म संबंधी विचार और

28.अंबेडकर के सामाजिक समरसता के सिद्धांत सरीखे विषयों पर दार्शनिक मन की धनी विदुषी प्रो. डॉ. सुधा सिन्हा ने जीवन के रंग तलाशने में महारत हासिल की है।

पंच महाव्रतों-ब्रह्मचर्य, अहिंसा, सत्य, अस्तेय और अपरिग्रह के पालन से व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र का सर्वांगीण विकास होता है।

पाश्चात्य जगत का अंधानुकरण नहीं करके सिर्फ़ उसकी अच्छाइयों को ही स्वीकार करना चाहिए।

मोबाईल से निकलनेवाली रेडियो ऐक्टिव तरंगे हमारे स्वास्थ्य पर अत्यंत प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं इसलिए इनका यथासंभव न्यूनतम प्रयोग करना चाहिए।

बदलते परिवेश में महिलाओं की वेश-भूषा उनकी जीवन शैली से प्रभावित होनी चाहिए।

लालटेन जलाने के पहले लालटेन की कांच को भली भांति साफ़ करके लगाने से ही रोशनी का भरपूर साक्षात्कार किया जा सकता है। चरित्र शोधन

नैतिक मूल्यों को जीवन में उतारने से ही संभव है। ख़ुद को पहचाने बिना ब्रह्म को पहचानना कठिन है। यही जीवन दर्शन है

कोरोना काल में जीवन की सार्थकता इसी में थी कि हमारे आस-पास कोई कोरोनाग्रस्त न हो। लेकिन हम अकेले सुखी नहीं रह सकते अत: विश्व बंधुत्व की भावना ही जीवन दर्शन के समीप है।

परिवार को संस्कारों की पाठशाला माना गया है।परिवार का महत्व भारतवर्ष में शुरू से ही रहा है। अब पश्चिम जगत में भी इसका महत्व स्वीकार किया जाने लगा है। टूटते परिवार लेख में भारत के संयुक्त परिवार की कल्पना की उपादेयता बताई गई है।

लेखिका ने दहेज को एक अभिशाप के रूप में ही चित्रित किया है। वेलेंटाइन डे को पश्चिम जगत से आयातित अनावश्यक त्योहार माना है। प्रेम के अनावश्यक प्रदर्शन से बचते हुए विश्व को कल्याण मार्ग पर ले जाने के लिए प्यार की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

भारत में त्योहारों की परिकल्पना के पीछे छिपी भावना की पड़ताल की गई है। सूर्य के उत्तरायण प्रयाण, नई फस्लों का उत्सव पर मनाए जाने वाले त्योहारों का उल्लेख किया गया है। सामाजिक समरसता भाई चारा के पर्व होली, प्रकाश पर्व दीपावली एवं राष्ट्रीय त्योहारों 15 अगस्त और 26 जनवरी की चर्चा की गई है।

आदर्श गृहिणी के प्रेम, सहयोग, कार्यकुशलता, विवेक पर ही किसी घर की सुख-समृद्धि निर्भर करती है। इसीलिए आदर्श गृहिणी को गृहलक्ष्मी की संज्ञा भी दी गई है।

युवा वर्ग की मानसिकता और युवा और बुजुर्ग पीढ़ी के बीच में तालमेल की आवश्यकताओं और कमी का उल्लेख करते हुए परीक्षा प्रणाली की चर्चा की गई है। बताया गया है कि परीक्षा में कम अंक पाने से ज़िंदगी खत्म नहीं हो जाती। इसलिए अवसाद में जाने की कोई जरूरत नहीं है। धोनी पढ़ाई में कमजोर थे तो क्रिकेट में शीर्ष व्यक्ति बन गए। आइंस्टीन गणित में फ़ेल हुए तो महान वैज्ञानिक बन गए।

शिक्षा जगत की बदहाली और शिक्षकों की भूमिका, भ्रष्ट्राचार की रोकथाम, अंबेडकर के सामाजिक समरसता के सिद्धांत, मानव धर्म और रवींद्र नाथ ठाकुर, राधाकृष्णन के शिक्षा एवं धर्म संबंधी विचार, मनोवज्ञानिक कथाकार आचार्य नलिनी विलोचन शर्मा के नारी मन के अंतर्द्वंदों का चित्रण इत्यादि अनेक विषयों के साथ साथ मानव मन एक अनबूझ पहेली, पर भी दार्शनिक विज्ञान में स्वर्ण पदक प्राप्त प्रो. सुधा सिन्हा ने सुंदर सुलेख प्रस्तुत किया है। रिश्तेदारी, प्रेम और विवाह के बीच आज उभरते हुए लिव इन रिलेशन्स, सिंगल मदर और अनव्याही माँ का कान्सेप्ट भी उनके जीवन के रंग को समेट रहे हैं।

'गगरिया छलकत जाय' में कविता, 'ग़ज़लों की दुनिया में यादों की परियाँ' में ग़ज़ल और चुन्नू मुन्नू के कारनामे मे बाल साहित्य की चर्चा के बाद जीवन के रंग में अनेक रंगों का रोचक उल्लेख करने के लिए लेखिका को आकाशभर बधाई और अनेकानेक शुभकामनाएँ।

पटना,
15 अगस्त, 2024
77 वां स्वतंत्रता दिवस

रमेश 'कँवल', पटना

गुड़ का ढेला-श्री चित्तरंजन भारती

चितरंजन भारती डालमियानगर के मूल निवासी हैं। असम इनका कार्य क्षेत्र रहा है जहाँ वे किसी काग़ज़ के कारखाने में गुड़ का ढेला जैसी कहानियाँ तलाशते रहे। अभी इस भवन के पास की गली में निवास करते हैं। लघु कथा, कहानी और उपन्यास के सृजन जगत में खोये रहते हैं।

गुड़ का ढेला इनकी 17 कहानियों का संग्रह है। बड़का बाबू, ज़रा गउर से देखा, छप्पन छुरी कहानियाँ ज़्यादा पृष्ठ छेंकती हैं। इनके अलावा सभी कहानिया 5-7 पृष्ठों में अपनी बात कहने में समर्थ हो रही हैं। इन तीन कहानियों के अतिरिक्त यही है ज़िन्दगी, गुड़ का ढेला, या देवी सर्वभूतेशु, डायन, अरण्य रोदन, हाउस हसबैंड, किताब, उद्धारक, औड़म बौड़म का तिकड़म, टेम्पल सेट, ज़िन्दगी दिवाली, रुपये दस हज़ार, छाता सरकारी और बोझ शीर्षक 14 कहानियाँ हैं।

यहाँ हम कथा शिल्प के धनी और पाठक को अंत तक कहानी पढने के लिए विवश करने का हुनर रखनेवाले कथाकार चित्तरंजन भारती की 7 कहानियों की चर्चा करेंगे।

पहली कहानी यही है ज़िन्दगी मार्मिक दृश्य प्रस्तुत करती है। महिंदर सिंघ कैसे एक नेताजी की रैली में शामिल होने के लिए 500/-पाँच सौ रुपये पर तैयार होता है। उसे पटना आना जाना और वहाँ रहना खाना पीना तथा अपने बेटे किशना से भी फ्री में भेंट हो जाने का लालच दिया जाता है। उसे बताया गया है कि उसका बेटा वहाँ दुकान चलाता है और उसी से 3 हज़ार रूपये महीना गाँव भी भेजता है। जब वह पटना आता है तो कथाकार ने उसकी और उसके बेटे की मार्मिक दशा प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की है। गाँव से शहर मे पलायन कर किशना कैसे गान्ही मैदान, पटना के एक छोला भटूरा के ठेले से गाँव से ही पलायन कर गए और 4 बेरोजगार युवकों को रोज़गार देते हुए अपना जीवन यापन करता है। रहने को घर नहीं तो वहीँ लॉन की हरी घास को अपना बिछौना बना लेता है।

गुड़ का ढेला एक युवती की कहानी है जो गाँव के उन्मुक्त गगन में अपनी मस्ती में गाती फिरती थी। उसकी आवाज़ में बला की मिठास थी।उसकी आवाज़ और यौवन से प्रभावित हो कर गाँव के ही किसी लम्पट ने उसे गया के बाज़ार में बेच दिया लेकिन भला हो गया के किसी पण्डे का जिसने उसे अपनी रखैल बना लिया और उसे अपनी गायकी के जौहर दिखाने का अवसर मिला। वह अपना तन बेचने से तो बच गयी लेकिन गायकी के विभिन्न अवसरों पर इर्ष्या और द्वेष के झंझावातों से नहीं बच सकी। इसका निदान गुड़ के ढेले सी मीठी आवाज़ की मलिका नर्तकी ढेलाबाई ने प्रतिस्पर्धियों को परास्त कर उनके एक घुंघरू को अपने पास सहेजने से किया। जिन लोगों के गायन से ढेलाबाई प्रभावित होती थी उनसे इनाम स्वरूप एक घुंघरू मांग लेती थी। इस कहानी में तवायफ़ बनने से अपनी मधुर, आकर्षक आवाज़ के बल पर बचने में प्रयासरत एक युवा नर्तकी की जद्दोजहद का कुशल चित्रण है। प्राप्त घुंघरुओं को वह एक पर्स में रखती थी जो रूचि समाप्त होते ही उसने कूड़े की ढेर में फ़ेंक दिया। यह पर्स एक नाली साफ़ करने वाले मजदुर से उसके सेनेटरी इंस्पेक्टर तक पहुँची। उसी के सपनो मे आकर ढेलाबाई ने अपनी कहानी सुनाई।

कहानी बड़का बाबू उस दौर की कहानी है जब हमारे समाज मे संयुक्त परिवार हुआ करते थे। परिवार के पुरुष गाँव से बाहर कमाई करने जाते थे वहाँ अपनी संपत्ति भी बनाते थे लेकिन गाँव की संपत्ति में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लेने को आतुर रहते थे। बड़का बाबू जिनका नाम बैजनाथ सिंह था के ज़िम्मे सभी भाइयों के संतान एवं उनके बच्चों की परवरिश का ज़िम्मा था। उनकी पढाई लिखाई दवाई एवं नोकरी दिलाने का ज़िम्मा था। सभी भाई एवं भतीजे शहर में उनके आवास पर रहते थे। वे दबंग थे लेकिन उनके फैक्ट्री के गुटबाजी के चक्कर में उन पर हमले भी हुए। फिर भी उन्होंने घर परिवार को संभाले रक्खा। उनकी मृत्यु के बाद अभी अंतिम क्रिया होने के पूर्व ही घर की महिलाओं ने अपनी मनपसंद संपत्ति पर दावा ठोकना शुरू कर दिया था। यह कहानी गाँव से शहर पलायन की कहानी तो है ही यह गाँव की खेती बारी में बिना किसी योगदान के उससे अर्जन के लोभ की कहानी भी है।

जरा ग़ौर से देखा कहानी भिखारी ठाकुर के लोक नृत्य कला पर आधारित जीवन की कहानी है। देहातों मे रामलीला मे नाटक करने वाले स्त्री पात्र पुरुष ही होते थे। महिलायें लोक मंच से पहले विमुख रहती थीं इसलिए उनके नृत्य प्रदर्शन पुरुषों को ही करना पड़ता था। ग्रामीण लोक नृत्य या 'लौंडा डांस' विषम परिस्थियों में था। यद्यपि यह अनेक युवा-प्रौढ़ों की आजीविका का साधन था फिर भी धीरे धीरे रंग मंच पर महिलाओं के आगमन से ग्रामीण अर्थव्यवस्था चरमरा रही थी। गाँव में जहाँ पहले लोक पुरुष नर्तकों से शादी विवाह के अवसर पर सट्टा करवाने से उन्हें गाँव में ही जीवन यापन के साधन उपलब्ध हो जाते थे वहीँ अब इन अवसरों पर शहरों-कस्बों से युवतियों को नृत्य संगीत गायन के लिए कांटेक्ट करने से दो बातें होती थीं। एक तो गाँव में दबंगों के प्रभाव से अशांति की आशंका और दूसरा गाँव के युवकों के आर्थिक नुकसान होने से उनका शहर की ओर पलायन। ग्रामीण रंगमंच से जुड़े एक युवक को कला संस्कृति मंत्रालय में वरीय पदाधिकारी होने से शहरों में इस लोक नृत्य कला के प्रदर्शन का अवसर मिला और गाँव के कलाकारों को अपेक्षा से अधिक मान सम्मान और धन प्राप्ति ने उनको भाव विभोर कर दिया। इस कहानी में भोजपुरी भाषा के वाक्यों का उल्लेख और ललित प्रयोग मन मोहता है। इस युवक के पिता उसे डॉक्टर बनाना चाहते थे लेकिन उसने गोपनीय ढंग से नेशनल स्कूल ऑफ़ ड्रामा से कला का कमाल सीखा। फिर दिल्ली और मुंबई में टीवी और फिल्मों में पापड़ बेले। कला संस्कृति मंत्रालय में उप निदेशक का पद भी संभाला लेकिन ग्रामीण लोक नृत्य कला की मंच प्रस्तुति में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी।

या देवी सर्वभूतेषु गाँव के युवकों द्वारा सरस्वती पूजा के आयोजन की कहानी है। एक संभ्रांत नागरिक की ज़मीन पर युवकों द्वारा मना करने के बावजूद बलात पूजा पंडाल गाड़ने थाना पुलिस का भी साथ नहीं मिलने की कहानी है। पंडाल में आग लग जाने पर इसके लिए ग़लत ढंग से महेश बाबू (जिसकी जमीन पर पूजा-पंडाल लगाया गया) को ही ज़िम्मेदार मानते हुए पीट पीट कर मौत की नींद सुलाने की कहानी है जहाँ पुलिस का विद्रूप चेहरा उजागर होता है।

डायन कहानी गाँवों में व्याप्त कुरीतियों की कहानी है जहाँ किसी प्रौढ़ औरत को लोगों की मौत का ज़िम्मेदार मानते हुए सताया जाता है मानसिक और शारीरिक प्रताड़ना दी जाती है। उसके अपने पुत्र और सगे संबंधी भी इस अत्याचार में शामिल हो जाते हैं। सुनील जो उस स्त्री का पोता है इस की छानबीन करता है और जिन दो मौतों का ज़िम्मेदार उसकी दादी को उसका बाप भी मानता है उन्हें टीवी और ब्लड कैंसर से मरने की प्रमाणित पुष्टि करता है। झाड फूँक के लिए बुलाये गए ओझा को जिसके सामने उसका बाप अपनी माँ को पीट कर उसकी प्रताड़ना में शामिल होता है, रोकता है। अपनी दादी को बचा कर अस्पताल ले जाता है और अत्याचार करने वालों को पुलिस के हवाले करता है।

छाता सरकारी कहानी में सरकारी पदाधिकारियों /कर्मचारियों के भ्रष्टाचार की कहानी है। सरकार अपने चपरासियों के लिए छाता का प्रावधान किये हुए है लेकिन उस ऑफिस का बड़ा बाबू (शिव) नया छाता आने में देर होने का झांसा देकर तंग करते हुए एक चपरासी चैतमल को अपना बरसों पुराना छाता थमा देता है और राम भरोसे छातावाला (सप्प्लायर) से प्राप्त नया छाता अपने पास रख लेता है।

चित्तरंजन भारती की कहानी भाषा प्रवाह, कथा शिल्प, सामजिक परिवेश और विषय वस्तु की कसौटी पर खरी उतरती है। मैं श्री भारती को हार्दिक बधाई देता हूँ और कहानी लेखन के क्षेत्र में उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ। बहुत बहुत धन्यवाद

रमेश कँवल
मोबाइल 878 976 1287

बिहार में महिला ग़ज़लकारों की प्रतिनिधि ग़ज़लें- अविनाश भारती

जीवन के अनुभव को ढाल के शे'रों में
मंचों पर इस दौर में है इतराई ग़ज़ल

जब ग़ज़ल दकियानूसी के गाँव से निकल कर हक़ीक़तों के शहर में विचरने लगी तो मेरे युवा मित्र अविनाश भारती के मन में ये प्रश्न दस्तक देने लगा कि क्या महिलायें भी ग़ज़ल कहती हैं। तो उनके सामने अनेक नामचीन महिला स्वर झंकृत होने लगे। उन्होंने बिहार की महिला ग़जलकारों की तलाश शुरू की तो चार दर्जन से अधिक महिला ग़ज़लकार अपनी प्रतिनिधि ग़ज़लों के साथ उपस्थित हो गईं।

हम चाहते तो चाँद ले आते ज़मीन पर,
पर रौशनी लिए कई जुगनू निकल पड़े

(स्मृतिशेष शांति जैन)

पटना से 12 मुजफ्फरपुर से 8, भागलपुर, बेगूसराय और सिवान से चार-चार, सीतामढ़ी से 3 अररिया, आरा, औरंगाबाद, खगड़िया, गया, गोपालगंज, जमुई, बांका, मुंगेर, वैशाली, शिवहर, सारण, सुपौल और हाजीपुर से एक-एक महिला ग़जलकार की 2-2 प्रतिनिधि ग़ज़लें लेकर अविनाश भारती ने **"बिहार की महिला ग़जलकारों की प्रतिनिधि ग़ज़लें"** प्रकाशित करने का उपकार किया है। सीतामढ़ी और मुजफ्फरपुर से तो एक-एक माँ ने अपनी बेटी को ग़ज़ल के संस्कार देकर चमत्कृत किया है।

इन ग़ज़लों को पढ़ने से और उनके अंत:करण का साक्षात्कार करने से आपके दिलों में हौले से एक चिंगारी प्रकट होगी जो कालांतर में शोला बन कर मचलने लगेगी-यही शायरी है; यही ग़ज़ल है

हौले से तिरे दिल में जो ये आग लगी है,
शो'लों को मचलने में अभी वक़्त लगेगा।

(आराधना प्रसाद)

आइए महिला ग़जलकारों के हृदय की धड़कनों से आपको रूबरू कराऊँ-

इतना आसां नहीं शे'र कहना 'लता',
दर्द-ए-दिल चाहिए शायरी के लिए

(रंजना लता)

रोज़ 'हेमा' धड़कती रहीं, धड़कनें,
नज़्म, गज़लें, उतरती रहीं रात भर

(हेमा सिंह)

मिट सकेंगे न तेरे मिटाने से हम,
बनके खुशबू हवा में बिखर जाएँगे

(नीलम श्रीवास्तव)

मुश्किलें हैं बहुत किन्तु हारी नहीं
देश की बेटियाँ अब बेचारी नहीं

(हेमा सिंह)

चाँद-तारे बिछाने लगी औरतें,
नूर सी जगमगाने लगी औरतें।

तोड़कर हर गलुामी की ज़ंजीर को,
मुक्ति के गीत गाने लगी औरतें

(रूपम झा)

आइए बिहार की महिला ग़जलकारों के दिलों के कैन्वस पर उकेरे गए चित्रों का आनन्द लिया जाए।

रमेश 'कँवल'
8789761287

दरवेश भारती भी नहीं रहे

स्मृतिशेष (हरिवंश अनेजा) दरवेश भारती ने मेरे ग़ज़ल-संग्रह 'स्पर्श की चाँदनी' के कवर पेज के फ्लैप पर मेरी हौसला अफ़ज़ाई के चन्द अल्फ़ाज़ लिखने की कृपा की थी। मेरे मन में आया क्यों नहीं कुछ ग़ज़लें भी आपको दिखा ली जाय। ग़ज़लें तो ठीक थीं लेकिन जो बारीकियाँ उन्होंने सिखाई उनसे मैं इतना प्रभावित हुआ कि पूरी किताब ही ह्वात्सप के माध्यम से उनके टैब पर (बड़े बड़े फॉण्ट में) भेजता रहा। आज सोचता हूँ कि उनकी इक नज़र का ही कमाल था कि मजमुआ इतना सराहा गया। बात चीत में इतना वात्सल्य उड़ेलते थे कि रोम रोम पुलकित हो जाता था। इसकान मंदिर दिल्ली में तीन साल पहले उनके दर्शन का अवसर प्राप्त हुआ था। उनकी विनम्रता और बातचीत की शैली ने गुरु स्पर्श की अनुभूति से भावविभोर कर दिया था। काश उनसे दो-एक बार और मिलने का सौभाग्य मिल पाता।

उनकी स्मृतियों को नमन! विनम्र श्रद्धांजलि!!

रमेश 'कँवल', पटना